और कोदंडराम किस तरह पार्टी को संकट में उतारकर आंदोलन को नुकसान पहुंचा रहे हैं. परंतु कोबाड ने उन सब बातों को अनसुना कर दिया.

आंध्र प्लीनम के बाद कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र के प्लीनम आयोजित किए गए जिनमें संकट तो हल नहीं हुआ पर केंद्रीय कमेटी विभाजन का शिकार हो गयी. उसके बाद प्लीनमों में दांव–पेंचों पर वामपंथी लफ्फाजी के साथ चर्चा करने वाले सत्यमूर्ति गुट उसके विपरीत कार्यनीतिक लाइन के नाम पर केंद्र में सत्तारूढ़ राजीव गुट के खिलाफ देश के सभी ताकतों को इकट्ठी कर संयुक्त मोर्चा बनाने के दक्षिणपंथी अवसरवादी दांव–पेंच सामने लाया. उस समय उसी को पार्टी के प्रधान कर्तव्य के तौर पर अपनाया. यह 1970 में एसएनएस(सत्यनारायण सिंह) गुट द्वारा लायी गयी विघटनकारी व दक्षिणपंथी अवसरवादी रुझान वाली संयुक्त मोर्चा नीति जैसा ही है.

1985 में उत्पन्न पार्टी के आंतरिक संकट पर 1995 में आयोजित केंद्रीय विशेष सम्मेलन ने इस तरह समीक्षा की.

''..1980–84 के बीच आंध्र और दंडकारण्य में जन आंदोलनों एवं पार्टी संगठन का काफी विस्तार हुआ. 1985 के प्रारंभ में सरकार ने हमारे खिलाफ अघोषित युद्ध छेड़ दिया. झूठी मुठभेड़ों के साथ पुलिस, अर्ध–सैनिक बलों का भीषण दमन टूट पड़ा. ठीक उसी समय केंद्रीय कमेटी में मौजूद अवसरवादियों ने सत्यमूर्ति के नेतृत्व में पार्टी के भीतर संकट पैदा किया.

''..उस संकट के उत्पन्न होने के कारणों को समझने के लिए हमें केंद्रीय कमेटी के निर्माण और उसके कामकाज में मौजूद खामियों का अवलोकन करना होगा.

''..दूसरी ओर केंद्रीय कमेटी के गठन के बाद साल भर के पहले ही कार्यनीतिक लाइन के दिशानिर्देशन में धर्मपुरि आंदोलन को आगे बढ़ाने से वीरास्वामी (कोदंडराम) एवं माणिक्यम ने इनकार कर दिया. पार्टी कांग्रेस आयोजित करने के केंद्रीय कमेटी निर्णय पर कुठाराघात किया. सीसी सचिव सत्यमूर्ति के नेतृत्व में वीरास्वामी, कमल (कोबाड) एवं माणिक्यम ने मिलकर तीन दुनिया के सिद्धांत पर अवसरवादी तरीकों में चर्चा उठायी. उसी तरह एनटीआर सरकार की बर्खास्तगी के संदर्भ में भी एपीपीसी द्वारा दिए गए प्रेस बयान के मामले में भी ऐसा ही हुआ.

''..सीसी के बहुसंख्य सदस्य अपनी स्वार्थी कैरिअरवादी जरूरतों की पूर्ति के लिए राजनीतिक नकाब ओढ़ कर अवसरवादी गुट बन साजिशाना तरीके से मैदान में उतरे.

''..आंध्रप्रदेश के क्रांतिकारी आंदोलन को मार्गदर्शन देने में खासकर 1982–83 के दौरान जब केएस जेल में थे, एसएम न सिर्फ विफल हुए थे बल्कि एपीपीसी में उत्पन्न छह बुराइयों में भी हिस्सेदार बन गए. सभी प्रमुख समस्याओं में

'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम् ए प्रिज़न मेम्वार'
गद्दारी की दस्तावेज़!

केंद्रीय कमेटी
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)

मई, 2022

पार्टी में पहला आंतरिक संकटः

भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मा–ले) (पीपुल्सवार) के नेतृत्व में आंध्रप्रदेश के जगित्याल संघर्ष से लेकर करीमनगर, आदिलाबाद किसान संघर्ष एवं सिंगरेणी, हैदराबाद, विशाखापट्णम में मजदूर आंदोलन उभर कर सामने आए.

उत्तर तेलंगाना के करीमनगर, आदिलाबाद, वारंगल, खम्मम, निजामाबाद जिलों में आंदोलन विकसित हुआ. दक्षिण तेलंगाना, उत्तर आंध्र, रायलसीमा इलाकों में किसान आंदोलन शुरू हुए. दक्षिण तटवर्ती जिलों में वर्ग संघर्ष प्रारंभ करने की तैयारियां जारी थीं. दंडकारण्य में आंदोलन अपने पैर जमा रहा था. 1981 में पीपुल्सवार के सचिव कोंडापल्ली सीतारामय्या गिरफ्तार होकर जेल जीवन बिता रहे थे. उनके बाद केंद्रीय कमेटी के सचिव बने सत्यमूर्ति आंध्र राज्य में विकसित होते आंदोलन को नेतृत्व प्रदान करने में असमर्थ हो गए थे. इसके अलावा आंध्र राज्य कमेटी में उत्पन्न 6 बुराइयों का वे हिस्सा बन गए थे. उसी तरह महाराष्ट्र में मुंबई मिल मजदूरों का आंदोलन भी पीछे हटने की स्थिति में पहुंच गया था. आंदोलन के सामने मौजूद गंभीर समस्याओं को हल करने में कोबाड का अनुभव अपर्याप्त था. जबकि तमिलनाडु से केंद्रीय कमेटी सदस्य वीरास्वामी(कोदंडराम) धर्मपुरि आंदोलन को दुश्मन के दमन के बीच आगे नहीं बढ़ा पाने के कारण वहां की पार्टी का विश्वास खो दिये थे. 1985 से आंध्रप्रदेश एवं दंडकारण्य में क्रांतिकारी आंदोलन पर सरकार का अघोषित युद्ध शुरू हुआ. इससे ये सभी नेताओं ने यह सोचने की बजाए कि आंदोलनों के सामने उत्पन्न समस्याओं के लिए उनकी कमजोरियां ही प्रधान कारण हैं, यह चर्चा उठायी कि पार्टी द्वारा अपनाए जा रहे दांव–पेंचों में ही खामियां हैं. उसके लिए एनटीआर बर्खास्तगी, तीन दुनिया के सिद्धांत पर अवसरवादी चर्चा को सामने लाकर तत्कालीन केंद्रीय कमेटी के सचिव सत्यमूर्ति के नेतृत्व में केंद्रीय कमेटी में बहुमत के नाम पर गुट बनाकर पार्टी में पहले आंतरिक संकट के कारण बने थे. उस संकट के हल के लिए पहले आंध्र प्रदेश पार्टी का पहला प्लीनम आयोजित किया गया था. उक्त प्लीनम ने निर्विवाद रूप से सत्यमूर्ति गुट के तर्कों को खारिज किया. उसी प्लीनम ने कोबाड की यह कहते हुए आलोचना की कि वे सिद्धांत को व्यवहार के साथ जोड़ने की बजाए अपरिपक्वता के साथ सिद्धांत को रटने की पद्धति का अनुसरण कर रहे हैं जैसा कि मुर्गा बाजरा खाकर बाजरे का ही विसर्जन करता है. उक्त प्लीनम में शामिल प्रतिनिधियों की ओर से मंच से और अलग–अलग भी कइयों बार कोबाड को आंदोलन की समस्याओं से अवगत कराने की कोशिश की. साथ ही उन्हें यह भी आगाह किया गया कि उन समस्याओं का समाधान निकालने में असफल सत्यमूर्ति

(एम–एल) शाखाएं मिलकर 22 अप्रैल, 1980 को एकीकृत पार्टी सीपीआई (एम–एल) (पीपुल्स वार) का गठन हुआ. कोबाड पीपुल्स वार पार्टी की केंद्रीय कमेटी सदस्य चुने गए थे.

1982 में मुंबई कपड़ा मिल मजदूरों ने निजीकरण के खिलाफ आंदोलन किया. पीपुल्स वार पार्टी की केंद्रीय कमेटी ने उस आंदोलन का मार्गदर्शन किया. उतना ही नहीं, मुंबई के मजदूर आंदोलनों के आधार पर पार्टी की केंद्रीय कमेटी ने एक परिप्रेक्ष्य बनाया. महाराष्ट्र में मुंबई सहित विदर्भ में क्रांतिकारी आंदोलन के निर्माण के लिए मुंबई कॉमरेडों को सुझाव के नाम पर उक्त दस्तावेज बनायी. मुंबई कॉमरेडों को लिखित पत्र में पार्टी ने यह विस्तार से बताया कि मुंबई के मजदूर वर्ग के बीच पार्टी को संगठित करने के साथ–साथ वहां भर्ती बढ़ाकर विदर्भ में पार्टी का विस्तार किया जाए, विदर्भ में कृषि क्रांतिकारी गतिविधियों को विकसित किया जाए, मजदूर वर्ग और दलित जनता के बीच काम किया जाए, नागरिक अधिकार आंदोलन को मजबूत करते हुए विदर्भ में आंदोलन को विकसित किया जाए, जिससे वह दंडकारण्य परिप्रेक्ष्य के तहत दंडकारण्य आंदोलन (ठोस रूप से गढ़चिरोली आंदोलन) की मदद करेगा. यह दस्तावेज काफी दूरदर्शिता के साथ लिखी गयी. महाराष्ट्र पार्टी उन सुझावों पर अमल करने लग गयी थी. मुंबई के कॉमरेड् विदर्भ में काम करने मुंबई से स्थानांतरित हो गए. अपनी शैक्षणिक योग्यताओं का उपयोग कर उन्होंने नागपुर, चंद्रपुर में वकील, लेक्चरर आदि पेशे अपनाए. उसी के तहत कॉमरेड् अनुराधा और कोबाड 1982 में नागपुर में बस गए थे जहां कामरेड् अनुराधा नागपुर विश्वविद्यालय में लेक्चरर के तौर पर काम करने लगी थी. शुरुआत में कोबाड गोंड पिपरी इलाके में कुछ छात्रों के साथ एक सांगठनिक टीम के संगठनकर्ता के तौर पर गए थे. सांगठनिक कार्य की शुरुआत में ही वहां सांगठनिक दस्ता और पुलिस के बीच मुठभेड़ हुई जिसके बाद दस्ता वहां से सुरक्षित रिट्रीट होकर शहर में शिफ्ट हो गया था. फिर लंबे अंतराल के बाद 90 के दशक में चंद्रपुर, नासिक के ग्रामीण इलाकों में कोबाड ने काम किया. इससे वन एवं ग्रामीण इलाकों में काम को जारी रखकर अनुभव हासिल करने का मौका महाराष्ट्र पार्टी को नहीं मिल पाया. तब से लेकर 1997 तक कोबाड कॉमरेड् अनुराधा के साथ मिलकर प्रधानतया नागपुर एवं आसपास के इलाकों के छात्रों, युवाओं, मजदूरों, दलितों बीच काम किया. केंद्रीय कमेटी सदस्य के तौर पर वे मुख्यतया महाराष्ट्र में पार्टी समन्वय के कार्य के साथ ही केंद्रीय पत्रिका वैनगार्ड् की जिम्मेदारी निभाते रहे.

‘फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम् ए प्रिज़न मेम्वार’ गद्दारी की दस्तावेज़!

केंद्रीय कमेटी
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)
मई, 2022

‘फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम् ए प्रिज़न मेम्वार’
गद्दारी की दस्तावेज़!
मई 2022

ज्ञान हासिल कर क्रांतिकारी व्यवहार के साथ जुड़ने के कारण वे सक्रिय तौर पर व उत्साहपूर्वक क्रांतिकारी व्यवहार में शामिल हो गए थे.

वे मुंबई शहर में छात्रों, मजदूरों को संगठित करने लगे थे. दलित बस्तियों में जाकर उन्होंने काम किया. जैसा कि उन्होंने अपनी किताब में लिखा, उन दिनों दलित पैंथर आंदोलन सक्रिय था. शिवसेना एवं राज्यसत्ता के हमलों से बचाने दलित पैंथर कार्यकर्ताओं को दलित बस्तियों में आश्रय देते थे, अपने अधिकारों के लिए दलित संगठित होते थे. उस समय मुंबई जैसे शहर में भी नक्सलबाड़ी व दलित पैंथर आंदोलनों के प्रभाव से जनता आंदोलनों में गोलबंद हो रही थी. मुंबई शहर में नक्सलबाड़ी की प्रेरणा से लैस मजदूरों, छात्रों, युवाओं और दलित जनता को पार्टी निर्माणों में संगठित करने वालों में कोबाड एक बन गए. हालांकि मुंबई में पार्टी कार्य प्राथमिक अवस्था में ही था. छात्र क्षेत्र में उन्होंने ‘कलम’ पत्रिका का संचालन किया. उसने छात्रों को काफी आकर्षित किया. मुंबई सहित हैदराबाद, कोलकाता, दिल्ली जैसे शहरों के छात्रों के बीच उस पत्रिका का अच्छा खासा नाम था. चूंकि उस समय कोबाड एवं उनके अनुयायी उल्लेखनीय ताकत के रूप में नहीं थे और पार्टी का प्रचार कार्य गुप्त रूप से कर रहे थे, इसलिए वे दुश्मन के सामने प्रकट नहीं हुए थे जिस कारण आपातकाल में वे गिरफ्तार नहीं हुए थे.

आपातकाल के बाद देश भर में गठित जनवादी अधिकारों के आंदोलन में कोबाड सक्रियता के साथ शामिल हुए. मुंबई शहर में वे सीपीडीआर का गठन किया. इससे देश के नागरिक अधिकार आंदोलन के नेता के तौर पर वे सुपरिचित हो गए. पार्टी के मार्गदर्शन के अनुसार देश भर के नागरिक अधिकार आंदोलन को उन्होंने संगठित किया. आपातकाल के बाद कुछेक साल वे नागरिक अधिकार के लिए लड़ने वाले नेता के रूप में थे. इसलिए सरकार की नजर में वे बतौर पार्टी नेता प्रकट नहीं हुए. कोबाड ने महाराष्ट्र के सिरोंचा तहसील के मोइनबिनपेट गांव में हुई मुठभेड़ जिसमें कॉमरेड् पेद्दि शंकर शहीद हुए थे, की तथ्यान्वेषण रिपोर्ट् तैयार की थी. जस्टिस विएम तार्कुंडे कमेटी के लिए भी उन्होंने काम किया. साथ ही उनकी टीम ने करीमनगर, आदिलाबाद किसान संघर्षों पर उस समय जारी दमन पर रिपोर्ट् तैयार कर सरकारी दमनकांड का भंडाफोड़ किया.

रवि के साथ मिलकर कोबाड 1979 में भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मा–ले) आंध्रप्रदेश शाखा के तत्कालीन नेता कोंडापल्ली सीतारामय्या के साथ वार्ता में शामिल हुए. पार्टी की आत्मालोचना रिपोर्ट् एवं कार्यनीतिक लाइन दस्तावेजों पर सहमत होने के बाद आंध्र प्रदेश राज्य कमेटी के साथ एकता के लिए तैयार हो गए थे. आंध्र प्रदेश राज्य कमेटी ने तमिलनाडु राज्य की पार्टी शाखा के साथ भी वार्ता की. इस तरह तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश (कर्नाटक सहित), महाराष्ट्र की सीपीआई

लगता है. ऐसे डून क्लास के लिए तो वैसा निर्णय पूर्णतया बौध्दिक था न कि भुक्तभोगी होना. उच्च वर्ग से क्रांति में शरीक होना बौद्धिक सोच के तहत होता है. इनमें से कोई डिक्लासिफाय होते हैं और जीवन समर्पित करते हैं. कोई बीच में ही भाग जाते हैं. जबकि मेहनतकशों के लिए क्रांति उनकी जरूरत होती है. इसके बावजूद उनमें से भी कोई भाग सकते हैं. यहां महत्वपूर्ण बात यह है कि आजीवन क्रांतिकारी बने रहने वाले ही असली कम्युनिस्ट होते हैं.

कई उच्च वर्ग के लोग जिन्होंने नक्सलबाड़ी आंदोलन में भूमिका निभाई, डिक्लासीफाय हुए, आदिवासी, दलित, शोषित जनता के साथ घुलमिल गए, अपनी मेधा गरीब जनता और समाज के उत्थान के लिए खर्च किए और बलिदान भी दिए हैं. कॉमरेड चारू मजुमदार, कॉमरेड् कन्हाई चटर्जी जनता की लड़ाई में जिंदाबाद हैं पर डांगे को खुद सीपीआई भी अपनाना पसंद नहीं करती.

हालांकि वे धनी वर्ग के थे परंतु मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के सिद्धांत से उत्तेजित होकर स्वेच्छापूर्वक भारत में क्रांतिकारी कार्य को चुना. बुर्जुआ समाज में अपने लिए आरक्षित उच्च स्थान को खारिज कर क्रांतिकारी राजनीति में आने, मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद पर दृढ़ विश्वास रखकर व्यवहार में उतरकर क्रांतिकारी आंदोलन में 40 साल काम करने के जरिए उन्होंने देश की जनता के बीच विशेष स्थान हासिल किया. उसी तरह पार्टी प्रतिनिधि के तौर पर अंतर्राष्ट्रीय कार्य करने के कारण उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काफी पहचान भी मिल गयी. पार्टी कतारों के बीच भी आदर्श व उत्तेजना के साथ रहे.

लंदन से लौटने के बाद मुंबई की गंदी बस्ती मायानगर जहां दलित निवासरत रहते हैं, में कोबाड ने अपना क्रांतिकारी व्यवहार शुरू किया. उन्होंने युवाओं को संगठित कर बुनियादी सुविधाओं के लिए संघर्ष संचालित किया. तब वे जातीय उत्पीड़न से अवगत हुए. इस दौरान वे प्रोयोम (प्रगतिशील युवा आंदोलन) के संपर्क में आए. साथ ही वे एल्फिनस्टन महाविद्यालय के छात्रों व कॉमरेड् अनुराधा जो वहां की छात्रा थी, के संपर्क में आए. वे मजदूर समूह और ट्रेड युनियनों के संपर्क में रहे.

उसी समय मजदूर समूह के रवि (वेमूरि चंद्रशेखर) नामक एक कॉमरेड् के साथ उनका परिचय हुआ. रवि श्रीकाकुलम आंदोलन में काम करते हुए वहां दमन तेज होकर मुठभेड़ शुरू होने के बाद मुंबई पहुंच गए थे. वहां वे नौकरी करने लगे थे. उनके जरिए कोबाड ने श्रीकाकुलम, नक्सलबाड़ी की क्रांतिकारी राजनीति के अनुभवों की जानकारी हासिल की. क्रांतिकारी राजनीति एवं व्यवहार से संबंधित उनकी समझदारी विकसित हुई. तब चूंकि कोबाड नवजवान थे और मार्क्सवादी

'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम् ए प्रिज़न मेम्वार'. दस साल एक माह जेल में रहकर, बाहर जमानत पर निकलने के बाद कोबाड घैंडी ने यह किताब लिखी. यह किताब जेल वृत्तांत से ज्यादा अपने ढंग की आत्मकथा लगती है. कोबाड जो लंबे समय से भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) की सेन्ट्रल कमेटी में रहकर भूमिका निभा रहे थे, यह और बात है कि आज वे इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है, अपने खुद के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन के बारे में तीसरे पक्ष के कव्हर में जनविरोधी पक्ष लेने वाले के रूप में लिखे हैं. खैर, संक्रमणकाल में जब समाजवाद पूंजीवाद में बदल सकता है तो कोबाड तो मात्र एक व्यक्ति हैं. वे अपनी समृध्द पृष्ठभूमि, अपने कार्य, जेल जीवन, और अंत में उनके अपने 40 साल के कार्य से लिए गए सबक और आगे की सोच के बारे में इस किताब में बताए हैं. पूरी किताब में उन्होंने यही बताने की कोशिशि की कि वह माओवादी नेता नहीं हैं. साथ ही माओवादी पार्टी के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन की छवि जितनी हो सके खराब करके पेश करने की कोशिश भी इस किताब में दिखती है. उतना ही नहीं, वे कहते हैं कि समाजवाद या साम्यवाद अब प्रासंगिक नहीं रह गया है, अच्छे मूल्यों के अभाव में ही रूस और चीन में समाजवाद फेल हो गया है, भारतीय कम्युनिस्टों में भी अच्छे मूल्य नहीं हैं, आंतरिक जनवाद भी नहीं है. मानव समाज की समस्याओं को हल करने के लिए फ्रीडम और हैपीनेस पाने के लक्ष्य के साथ व्यक्ति में आध्यात्मिक मूल्यों की आवश्यकता प्रधान है. इनके अलावा भी इस किताब में कई तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर पेश किया गया है. असत्य और अर्धसत्य बातों का पुलिंदा जोडा गया है.

किताब का नाम भले ही फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम रखा है पर वास्तविक रूप में यह उनकी भावी जिंदगी के 'फ्रीडम' (स्टेट स्लेव) के लिए लगायी गई अर्जी लगती है. कोबाड ने ऐसा क्यों लिखा, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है. सत्ता के कोप के सामने टिक नहीं पाने के कारण कई नेताओं ने घुटने टेक दिए, इतिहास में ऐसे कई उदाहरण हैं. उदाहरण के लिए श्रीपाद अमृत डांगे (कम्युनिस्ट) और वि. दा. सावरकर (हिन्दूत्ववादी) को ले सकते हैं जिन्होंने अपना जीवन बचाने कई बार लिखित रूप में दया की याचना की थी. अब कोई किताब लिखकर अपनी स्पष्टोक्ति सत्ता के सामने रख रहे हैं कि उन्हें कैसे समझा जाए. दरअसल कोबाड ने जेल से ही छह लेख (ये डांगे या सावरकर के पत्रों से कम नहीं) लिखे थे जिनका नाम तो 'क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पीपल्स इमैन्सिपेशन' रखा था पर असल में वह वह 'टु डिमॉरलाइज पीपल' है. 'ईकॅनॉमिकल ऐन्ड पॉलिटिकॅल वीक्लि' के उप संपादक कॉमरेड बनार्ड डिमेलो ने उस पर अपनी प्रतिक्रिया दी थी और कोबाड के आध्यात्मिक दृष्टीकोण को नकारा था. इसमें उन्होंने कोबाड के बारे में एक

चिंता भी व्यक्त की थी. उन्हीं के शब्दों में – ''कोबाड, ऑस्कार वाइल्ड का अनुसरण करते हुए, आप कहते हैं कि जेल 'शारीरिक और मनोवैज्ञानिक तौर पर आदमी को दुर्बल बनाता है.' आपने जो लिखा उससे मैं आश्वस्त हूं कि आपके साथ ऐसा न हो जिस हेतु आप अपना व्यक्तिगत संघर्ष जारी रखेंगे. अपना ख्याल रखें.'' परंतु कोबाड ने उनकी आशंका को सच साबित किया.

वैसे तो परिवर्तन प्रकृति का नियम है. बुरा अच्छा होता है और अच्छा बुरा भी हो सकता है. पर एक क्रांतिकारी जिसका जीवन जनता के लिए अर्थात क्रांति के लिए समर्पित किया गया हो, जिनके सहयोगी मैदान–ए–जंग में अभी भी लड़ रहे हों, बलिदान दे रहे हों, लड़ाई अब भी जारी हो, वैसे में क्या उन्हें सिर्फ जेल जीवन ने ही तोड कर रख दिया है? या इस परिवर्तन के बीज उनके व्यक्तित्व में क्या पहले से ही बोये गए थे? केवल फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम् को पढ़ने से पाठक पूरी तरह नहीं समझ पायेंगे कि कोबाड 40 साल तक क्रांतिकारी बनकर जीवन बिताने के बाद एक 'आध्यात्मिक बाबा' के रूप में क्यों अवतरित हुए हैं? जबकि वे खुद कह रहे हैं कि परिस्थिति पहले की तुलना में बहुत ज्यादा खराब हो गई है, जनता का जीना दूभर हो गया है, व्यवस्था में बदलाव जरूरी है.

किताब में एक ऐसा प्रयास है जो प्रश्नों को तो सामने रखता है, पर इनके कारणों को छुपाता है, विकल्प के रास्ते को जानबुझकर नजरअंदाज करता है अथवा गलत साबित करना चाहता है और प्राचीन आध्यात्मिक गुरूओं द्वारा उलट कर बतायी गयी अवधारणाओं से अच्छे मूल्य, आजादी (फ्रीडम), खुशी (हैप्पीनेस) जैसे अधकचरे विचारों के सारांश को विकल्प के रूप में पेश करता है. भारतीय क्रांति के दुश्मन वर्ग इससे गदगद हो रहे होंगे और मित्रशक्ति आहत. हां, यह किसी निर्देशक के लिए एक फिल्म बनाने का मसाला जरूर प्रदान कर सकता है. तथापि कास्ट और क्लास पक्षपाती सुचना प्रसारण की दुनिया को महाराष्ट्र के एक कोने के मुंबई से गिरफ्तार कोबाड आसानी से दिखते हैं पर इसी महाराष्ट्र की धरती पर शहीद हुए कॉमरेड्स अनुराधा, श्रीधर श्रीनिवासन एवं उसी राज्य के दुसरे कोने के गडचिरोली जिले में, जनता के लिए जनयुध्द के मैदान में लड़ते–लड़ते प्राण न्योछावर करने वाले मिलिंद तेलतुंब्डे, भास्कर हिचामी, सृजना, रजिता, सतीश और सैकड़ों अन्य शहीद योद्धा नहीं दिखते. मीडिया की चकाचौंध से परे वर्गसंघर्ष के घमासान की एक वास्तविक दुनिया है, जो मौजूदा सड़ीगली व्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है और उसे बदलने का माध्यम भी है. हम उस वास्तविक दुनिया में, मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद (मालेमा) के आलोक में, एक सर्वोच्च मानवीय मूल्यों वाले समाज निर्माण के लिए जान हथेली

अपने देश की जनता की सेवा करने हेतु वे उच्च शिक्षा छोड़कर 1972 में स्वदेश लौटे. तब महाराष्ट्र के मुंबई शहर में धर्मोन्मादी व प्रांतीय कट्टरवादी शिवसेना पार्टी 'महाराष्ट्र यहां के भूमिपुत्रों का है' नारे के साथ दक्षिणी राज्यों से नौकरियों व आजीविका के लिए आयी गरीब जनता पर हत्याकांड अमल कर रही थी. साथ ही कम्युनिस्ट पार्टी के मजदूर संगठनों पर हमले कर प्रमुख नेताओं की हत्याएं कर रही थी. दूसरी ओर दलितों व मजदूरों पर हमलें कर रही थी और उनका दमन कर रही थी. 1971 में ही इंदिरा गांधी ने पाकिस्तान के खिलाफ (बांगलादेश) युद्ध छेड़ रखा था और अंधराष्ट्रवाद को उकसाया. देश में विस्तारवादी अंधराष्ट्रवादी शक्तियां एवं शिवसेना जैसी अहंकारी ताकतें आक्रामक हो रही थीं. भारत–पाक युद्ध की आड़ में इंदिरा गांधी की सरकार ने क्रांतिकारियों की क्रूरतापूर्वक हत्याएं कर रही थी. भारत सरकार की सेनाएं कोलकाता शहर में क्रांतिकारियों की क्रूरतापूर्ण ढंग से झूठी मुठभेड़ों में हत्याएं कर रही थी. श्रीकाकुलम आदिवासियों के क्रांतिकारी संघर्षों का दमन करने आंध्र प्रदेश में तत्कालीन मुख्यमंत्री वेंगलराव की सरकार द्वारा सत्यम, कैलासम, पाणिग्राही, पंचादि कृष्णमूर्ति, निर्मला एवं आंदोलन के अन्यान्य नेताओं सहित दसियों क्रांतिकारियों की हत्याएं की गयी थी. गिरफ्तारी के 15 दिन बाद 28 जुलाई, 1972 को भाकपा (मा–ले) के नेता एवं नक्सलबाड़ी के निर्माता कॉमरेड् चारु मजुमदार की जेल में ही इंदिरागांधी सरकार ने निर्मम हत्या की. वह पूरे देश में क्रांति एवं प्रतिक्रांति के बीच खुली भिड़ंत का समय था. देश के युवाओं, छात्रों, तमाम उत्पीड़ित वर्गों की जनता तीव्र असंतोष पनपने के कारण उद्धेलित हो रही थी. विश्वविद्यालय क्रांतिकारी राजनीति से एकाकार होकर क्रांति के लिए आतुर थे. कुल मिलाकर देश में क्रांतिकारी परिस्थितियां तीव्र होकर क्रांति की लहर उठने का समय था, वह.

60–70 के दशक में परिवर्तन की लहर में क्रांतिकारी प्रवाह छाया रहा. इस प्रवाह ने कई मेधाओं को अपनी गिरफ्त में लिया. साधारण पुरोगामी सोच के लिए यह उस वक्त स्वाभाविक था. अतः कोबाड का लेफ्ट विचारधारा की तरफ आकर्षित होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है. एक डून स्कूल के छात्र जिसे बहुमुखी प्रतिभाओं को निखारने की तालिम दी गई हो, द्वारा क्रांति को अपना कैरिअर चुनना अपने क्लास के अन्य लोगों में उसे विशिष्ट बना देता है. जैसा कि अपनी किताब में कोबाड ने स्वीकार किया, उनका वर्ग और उनकी सक्षम पृष्ठभूमि उन्हें यह आजादी प्रदान करती है. लंदन में नस्लीय विवक्षा का कुछ हद तक सामना करने के अलावा परिस्थिति के झटके भोगने, महसूस करने जिससे उनके मन पर परिणाम होने जिससे क्रांति की जरूरत महसूस करने को कोबाड द्वारा क्रांतिकारी आंदोलन के प्रति आकर्षित होने का आधार बताना चित्र को लगाई गई रंगीन फ्रेम जैसा

वाले इतने दिन इंतजार क्यों किए? शायद कॉमरेड् अनुराधा जोकि क्रांति की चोटी थी, का सहजीवन ही था जिसने इतने लंबे समय तक उन्हें क्रांतिकारी आंदोलन के साथ जोड़कर रखा. वो शहीद हो गई और उसके बाद कोबाड जल्द ही जेल चले गए. उनके ही विश्लेशण के अनुसार ब्लॉक ऍंड व्हॉईट या एक कोने से दुसरे कोने में जाकर सोचने की प्रवृत्ति वाले तीसरे कैटिगॅरि के व्यक्ति को मन से सांत्वना देने वाले प्रिय कॉमरेड् नहीं रह गयी. खासकर उनके एक कोने में जाकर सोचने की प्रवृत्ति और उतावलेपन को बैलन्स करने वाली सतत् मदद् नहीं रही. उसमें जुड गया, बढ़ता दमन और जेल जीवन. इन स्थितियों ने भौतिकवाद से भाववाद की तरफ मोड़ दिया. जेल नहीं जाने पर भी ऐसी विपरीत दिशा में जाने के लिए उन्हें ज्यादा दिन नहीं लगता. जेल नहीं जाने से भी शायद यह प्रकट होनेवाला ही था.

कोबाड का राजनीतिक प्रस्थान एवं पतन

वर्ग संघर्ष में आजीवन रहने वाले ही असली कम्युनिस्ट कहलाता है. तथापि एक कम्युनिस्ट के तौर पर अपने राजनीतिक प्रस्थान को कोबाड ने बीच में ही छोड़ दिया है. कोई भी व्यक्ति ऐसी स्थिति में क्यों पहुंचता है, इसे समझने के लिए उनके क्रांतिकारी व्यवहार के क्रम, वर्ग संघर्ष एवं क्रांतिकारी आंदोलन के उतार–चढ़ावों के प्रति उनके द्वारा अपनाए गए रुख एवं दुश्मन का सामना करने के तरीकों का आलोचनात्मक नजरिये से अवलोकन करना आवश्यक है. आएं, कोबाड के व्यवहार पर नजर डालते हैं.

कोबाड एक राष्ट्रीय पूंजीपति परिवार से क्रांतिकारी आंदोलन में जोश के साथ आए. क्रांतिकारी आंदोलन में 40 साल रहे. पार्टी में सर्वोच्च स्तर पर काम किया. उन्होंने उस सिद्धांत और क्रांति जिस पर उनका विश्वास था, को छोड़कर आध्यात्म का रास्ता अपनाया. उनमें इस बदलाव के कारणों को जानने के लिए उनके क्रांतिकारी राजनीतिक व्यवहार की बुनियाद का विश्लेषण करना आवश्यक है.

1960 के दशक की आखिरी में जब देश में नक्सलबाड़ी के वसंत का वज्रनाथ हुआ था एवं दुनिया भर में क्रांतिकारी संघर्ष, राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष जारी थे, कोबाड 1968 में उच्च शिक्षा के लिए लंदन गए थे. लंदन में उन्हें नस्लीय विवक्षा झेलनी पड़ी. उन्होंने भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवादियों का औपनिवेशिक शोषण का अध्ययन किया. मार्क्सवाद एवं द्वंद्वात्मक भौतिकवाद में उन्हें इन समस्याओं का समाधान नजर आया. लंदन में माओवादी केंद्रों के साथ उनका परिचय हुआ और उन्होंने मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद का अध्ययन किया. वहां इस राजनीति से प्रभावित होकर कई प्रदर्शनों में शामिल हुए. नक्सलबाड़ी के प्रति भाईचारा सम्मेलनों में शामिल हुए. क्रांतिकारी आंदोलन के व्यवहार में गंभीरता के साथ भाग लेते हुए

पर लिए, आज भी लड़ रहे जनयोध्दाओं की नजर से ही 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम्' को देखेंगे.

आदर्श और अधोगति

लाखों की संपत्ति, पारसी राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग की पृष्ठभूमि, कार्पोरेट जगत में संभावित करिअर छोड़कर एक युवक कम्युनिस्ट बनता है, शोषित जनता के हित में कार्य करने लगता है. देश के दलित, आदिवासी और उत्पीड़ित वर्गों की जनता के लिए तो वह आदर्श था. अपने हिस्से की संपत्ति आंदोलन के हित में खर्च करता है, वह सराहनिय था. संपन्न जीवन छोड़कर दलितों, मजदूरों की बस्तीयों में रहने के लिए आना, क्रांति का विचार लेकर जनता के लिए समर्पित होना, इससे जनता की नजरों में वह महान बनता है. पर 40 साल खासकर जवानी के साल आंदोलन में गुजारने के बाद वो अब रास्ते से मुँह क्यों मोड़ रहे हैं? यह निश्चित ही शोचनीय है. मौजुदा मुनाफाखोरी की बाजारू व्यवस्था वाले समाज में जहाँ हर विषय को मुनाफे की नजर से देखा जाता है, अथवा कोबाड के लिखे अनुसार पैसा ही निर्णायक है, वहाँ कोबाड को मिडिया में उछालना या चर्चा की वैचारिकी में वो विषय वस्तु बनना स्वाभाविक है. यह कोई आश्चर्य नहीं कि संपन्न लोगों की अंगडाईयों की चर्चा मीडिया के पहले पन्ने से लेकर कार्पोरेट ड्राईंग रूम तक होती है और मेहनतकशों की मौत पर भी कोई उफ् तक नहीं करते. यह विडंबना ही है कि ''एक पारसी को माओवादी बनने की क्या जरूरत थी?'', ऐसी हेड लाईन बनती हैं पर ''पारसी के वर्गसंघर्ष का रास्ता छोड़ने पर आलोचना'' नहीं होती. सुचना प्रसारण की यह बॉर्डर वर्गसंघर्ष का मैदान है. यह शोषणमूलक व्यवस्था मेहनत की इज्जत नहीं करती है तो, मेहनतकशों और उनके लिए लड़ने वालों को क्यों महत्व देगी? महत्व के लिए तो उच्च वर्ग का होना जरूरी है.

एक व्यक्ति जो संपन्नता को त्यागकर कम्युनिस्ट बने थे, को फिर से अपनी 'पारसीयत' का गौरव क्यों याद आ रहा है? किताब में पृष्ठभूमि का डिंडोरा इस कदर क्या इसलिए नहीं पीटा गया है कि उनके त्याग की महानता के सामने क्रांति के मार्ग से उनके भटकाव को जायज ठहराया जा सके? जेल वृत्तांत में पारसी होने का, उच्च वर्ग के होने का इतने विवरण की क्या आवश्यकता थी? कार्पोरेट दोस्तों की इतनी चर्चा की क्या जरूरत थी? यही दिखाने के लिए कि कोबाड कितना अच्छा करिअर छोडकर क्रांति (आज के उनके समाज के अनुसार समाज सुधार का कार्य) करने चले थे. यह साहसिक रूमानीवाद (अड्वेंचरिस्ट रोमैंटिसिज़म) ड्राईंग रूम में बैठकर प्याला टकराने वाले संपन्न लोगों के बीच सहानुभूति खड़ा करेगी, शायद कोबाड भी यही चाहते हैं. चीर्स! या फिर त्याग का यह प्रदर्शन, फिर उसी कार्पोरेट और उच्च वर्ग के मित्रों व्दारा उनकी स्वीकृति

और मदद्, कोबाड का गदगद होना, कुल मिलाकर यह सब दिखाकर गरीब, दलित, सर्वहारा वर्ग से आनेवाले कार्यकर्ताओं के सामने कोबाड यही उदाहरण पेश करना चाहते हैं कि यदि सत्ता का कोप तुम पर आया तो तुम संभल नहीं पाओगे. संभलने के लिए उच्च वर्ग का होना जरूरी है. साथ ही अपनी महानता उन पर थोपना चाहते हैं कि उन्होंने कितना त्याग किया. या फिर यह बताना चाहते हैं कि, 'जवानी में क्रांति का कार्य करो और बुढ़ापे में अपनी चमड़ी बचाने की व्यवस्था करो.' अपनी संपन्न पृष्ठभुमि और वर्तमान में उच्च वर्गिय सशक्त सपोर्ट को दर्शाकर कोबाड क्या हासिल करना चाहते हैं? निश्चित ही इस एक पत्थर से दो पंछी मार रहे हैं. एक सत्ता को दिखाना की उनका वर्ग आज भी वही है और उन्हें उस वर्ग की स्वीकृति प्राप्त है. दूसरा यह कि जनता उन्हें महान समझे. इन्हें विकृत मूल्य (डिस्टॅर्टेड् वेल्यूज्) कह सकते हैं. संपन्नता को त्यागकर क्रांति के लिए जीवन समर्पित करने वाले कोबाड को जीवन के प्रति इतना मोह क्यों? क्या कोबाड यह नहीं समझ रहे हैं कि सत्ताधारी वर्ग क्रांतिकारी आंदोलन के खिलाफ उनके जीवन को माध्यम बनाकर इस्तेमाल कर रहे हैं? उनके इस तरह के लेखन से क्या वो खुद का ही निषेध नहीं कर रहे? क्या यह देशभर के उन हजारों शहीदों का अपमान नहीं है, जिन्होंने अपने प्राण अर्पण किए? क्या यह आज भी मैदान–ए–जंग में लड़ रहे हजारों, लाखों कार्यकर्ताओं, जनयोध्दाओं और लड़ाकू जनता के साथ छल नहीं है? हां, बिल्कुल छल ही है. व्यक्ति चाहे जितना भी बड़ा क्यों न हो, उसका अतीत चाहे जितनी भी गौरवशाली क्यों न हो, पर वर्तमान में यदि वह गलत रास्ता पकड़ता है तो भविष्य निश्चित ही पतन की ओर जाता है. इसलिए उनके अतीत की महत्ता को लेकर नहीं बल्कि वर्तमान की वास्तविकता को व्दंव्दात्मक भौतिकवाद की कसौटी पर अर्थात मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद की कसौटी पर परखते हुए ही कोबाड के कल और आज को तय कर सकते हैं. अतीत आदर्शपूर्ण रहने के बावजूद भी 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' के वर्तमान व्दारा अतीत की अच्छाईयों को मिट्टी में मिला दिया गया है.

दुनिया के इतिहास में वैभव और संपन्नता को त्यागकर मानव समाज के लिए सर्वस्व अर्पण करने के कई आदर्श उदाहरण हैं. कोबाड ने जिनकी चर्चा किताब में की है, उनके भी आदर्श अगर वे रखते तो ऐसा नहीं लिखते. ईसा मसीह ने अपने विचारों के लिए क्रूस पर चढ़ना पसंद किया पर झुके नहीं, मोहम्मद पैगंबर लड़ते रहे पर झुके नहीं, भगवान बुध्द ने राजपाट त्यागकर तपस्या करते समय लगभग मृत्यू के समीप पहुँचे थे पर अपने ध्येय को छोड़ा नहीं और दुनिया को नये दर्शन से अवगत कराया, सुकरात ने जहर पीना पसंद किया पर अपने विचारों को नहीं छोड़ा. महान शिक्षक मार्क्स से लेकर जूलियस फ्यूचिक, चारू मजुमदार,

कन्हाय चटर्जी तक और हाल ही में महाराष्ट्र के जेल में शहीद हुई कंचन नन्नावरे तक ऐसे सैकड़ों, हजारों लोगों के उदाहरण हैं जिन्होंने व्यवस्था परिवर्तन के लिए अपना सब कुछ कुरबान किया. फिर जनता के लिए जीवन समर्पित करने निकले कोबाड को जिंदगी के प्रति इतना मोह क्यों? एक है, राज्यसत्ता का दमन. दुसरा, परिवर्तन के प्रवाह के रुख में स्थान, तीसरा वर्गसंघर्ष में उनकी भूमिका की कार्यशैली–कार्यपध्दति. कोबाड ने जिस आव्हान नाट्य मंच की किताब के कव्हर को अपनी किताब में छापा है और जिस शहीद शायर कॉमरेड् विलास घोगरे का जिक्र किया है, देखें, उन्हीं का यह गीत जो महाराष्ट्र के क्रांतिकारी आंदोलन का गान है–

क्रांतिसाठी जन्म आपुला क्रांतिच निर्वाणिचे काम
मृत्युनेही गीत म्हणावे क्रांति तुजला लाल सलाम ।।
तलवारीच्या पाठीवरती अजन्म आपुली पाऊलवाट
संगीन आपुल्या खांद्यावरती किती असुदे अवघड घाट
क्रांतिच्या दुश्मनांनो ऐका क्रांतिसाठी प्राण गुलाम
मृत्युनेही गीत म्हणावे क्रांति तुजला लाल सलाम ।।
शस्त्रांचा खणखणाट होता जनसैनिक हे धरतील ताल
रक्तांचे शिंपण भूमिवर क्षितीजही होईल लालम लाल
रवी उद्याचा निघेल न्हाऊन पूंजीपतिंना करेल जाम
मृत्युनेही गीत म्हणावे क्रांति तुजला लाल सलाम ।।
सैतानांना जाब पुसाया सुटतील तोफेचे गोळे
चालत राहतील लालच सैनिक क्रांतिकडे असतील डोळे
क्रांतिच्या दुश्मनांनो ऐका क्रांतिसाठी प्राण गुलाम
मृत्युनेही गीत म्हणावे क्रांति तुजला लाल सलाम ।।

'आव्हान' का कव्हर तो छापा, कोबाड ने, पर उसके अंदर के गीत को ठुकरा दिया.

क्रांति में परिवर्तन की लहर नहीं है, पर क्या उसकी जरूरत खत्म हुई है? प्रवाह के साथ तैरना आसान है, प्रवाह के विरुध्द तैरना ही असली बहादुरी है. क्रांति में कूदने के समय जो अपेक्षाएं रहती हैं, अपने जीवनकाल में उनके सफल न होते देखकर कुछ लोग पीछे हट जाते हैं. जल्दी सफलता, रूस, चीन की तुलना में भारत की क्रांति को सोचकर निराशा के गर्त में जानेवाले बुध्दिजीवी को स्वयं से पुछना चाहिए कि उन्होंने इसे हल करने के लिए सैध्दांतिक तौर पर विशेष प्रयत्न क्या किए हैं? पार्टी की सर्वोच्च कमेटी में लंबे समय रहकर क्रांति की बाधाओं को दुर करने कौनसी सैध्दान्तिक रचनाएँ की? प्रवाह के अनुसार चलने

जेल में कम्युनिस्टों की परंपरा और कोबाड

शहीद–ए–आजम भगतसिंह ने कहा था, 'जेल हमारा विश्व विद्यालय है.' उनका आशय यह था कि जेल में जानेवाले कार्यकर्ताओं को सत्ता, जनवाद और राजनीति का नजदीकी दर्शन होता है और वह एक सक्षम क्रांतिकारी बनकर बाहर निकलता है. निश्चित ही यह परिवर्तन होगा यदि वह जेल में भी संघर्षरत रहे तब. पर इस विश्वविद्यालय में कई फैकल्टि हैं, यदि कोई संघर्षरत नहीं रहे तो ऑटमैटिक दुसरे फैकल्टि में चले जाते हैं और जब बाहर निकलते हैं तो क्रांति की डिग्री के बजाय आध्यात्म के आचार्य भी बन सकते हैं. जेल के संघर्ष में कौन किस पक्ष में रहते हैं, इस पर ही किसी की मेधा का विकास निर्भर रहता है. पर यदि जेल जाने के पहले ही किसी के दिमाग में कम्युनिज्म, वर्गसंघर्ष, दीर्घकालीन जनयुध्द, पार्टी संचालन पर संदेह, गलतफहमी, प्रश्न चिन्ह लगे हुए हो तो यह विश्वविद्यालय आसानी से उन्हें आध्यात्म विभाग का छात्र बना लेता है.

पुलिस के हाथ लगने के बाद कोई क्रांतिकारी बचकर यदि जेल में जाता है तब भी उसे राजनीतिक कैदी का तो छोड़ो साधारण कैदियों की भी सुविधा प्रदान नहीं करते. पुलिस कॅस्टडियों की टॉर्चर, मौतें और जेल की यातनाओं से और उनके खिलाफ किए गए संघर्षो से क्रांतिकारियों की जेल डायरियाँ भरी पड़ी हैं.

चेक कम्युनिस्ट एवं देशभक्त जुलियस फ्युचिक के इन शब्दों पर गौर करें. ''.. .यहां मृत्यु की समीपता हम में से हरेक को उघाड़कर नंगा कर देती थी. उनकी भी जिनकी बांहों पर कम्युनिस्ट होने या कम्युनिस्टों के साथ सहयोग करने के चिन्ह–स्वरूप लाल पट्‌टी लगी होती थी, और .... यहां पर आके शब्दों को नहीं तौला जाता था. इतने दिनों में आपके भीतर केवल वही बचता था जो जीवन में सबसे महत्वपूर्ण है. जो कुछ आपके मौलिक व्यक्तित्व को कठोर, दुर्बल या सुंदर बनाता था, वह मृत्यु के पहले आने वाले तूफानों में बह जाता था. केवल एक संज्ञा, एक क्रिया बचते थेः यह कि वफादार सामना करते हैं, गद्‌दार विश्वासघात करते हैं, वीर संघर्ष करते हैं, डरपोक घुटने टेक देते हैं. हम में से हरेक के अंदर शक्ति भी है और दुर्बलता भी, साहस भी है और भय भी, शुद्धता भी है और गंदगी भी. यहां आकर दोनों में से कोई एक ही चीज़ बचती हैः हां या नहीं. अगर कोई चतुराई से दोनों सिरों के बीच नाचने की कोशिश करता था, तो वह इस तरह पकड़ा जाता था मानो अपनी टोपी में पीला पंख लगा लिया हो या शव–यात्रा के समय हाथों में झांझ लेकर नाच रहा हो.'' ('फांसी के तख्ते से' पृष्ठ 45, जुलियस फ्युचिक, राहुल फाउंडेशन)

जेलों में बंद क्रांतिकारी लगातार संघर्ष करते रहे कि उन्हें राजनीतिक कैदी का दर्जा दिया जाय. ताजा इतिहास भारतीय क्रांति के वयोवृध्द नेता कॉ. बरूनदा

अवसरवादी रुझान अपनाए. एपीपीसी एवं सीसी के भी सदस्य रहे एसएम ने जुलाई, 84 की पीसी बैठक में आलोचनाओं का सामना किया. उस बैठक के बाद निचले स्तर से नेतृत्व की आलोचना करने का आंदोलन शुरू हुआ. पेट्‌टी बुर्जुआ आत्महीनता के साथ एवं आत्मालोचना के लिए तैयार न होने की स्थिति में एसएम अपने पद को बचाने साजिश पर उतर आए.

''..सत्यमूर्ति एवं वीरास्वामी गुट ने यह आरोप लगाया था कि राजनीतिक तौर पर केएस संशोधनवादी लाइन अपना रहे हैं, सांगठनिक मामले में जनवादी केंद्रीयता को छोड़कर उसकी जगह व्यक्ति की सर्वोच्चता को स्थापित कर रहे हैं. इस गुट ने यह तर्क दिया कि जब तक एनटीआर की बर्खास्तगी और तीन दुनिया के सिद्धांत पर पार्टी कांग्रेस में सही लाइन का फैसला नहीं होता है तब तक सीसी में बहुमत, अल्पमत के आधार पर निर्णयों को अमल में लाया जाए. आंध्रप्रदेश, दंडकारण्य के क्रांतिकारी आंदोलनों पर तब तक सरकार द्वारा शुरू किए गए अघोषित युद्ध का पूरी पार्टी को एकताबद्ध कर पलटा जवाब देने नयी कार्यनीति तय कर सभी पार्टी कतारों को सन्नद्ध करने की जरूरत थी. ऐसे महत्वपूर्ण समय में उक्त कर्तव्य को अपनाने से भटकाने व पार्टी को विच्छिन्न करने के लिए इस गुट ने दुर्भावनापूर्ण ढंग से यह मांग की कि जब तक दो लाइनों के बीच संघर्ष पूरा नहीं किया जाता है तब तक पार्टी कॉन्फरेंस व कांग्रेस के आयोजन को स्थगित किया जाए.

''..उतना ही नहीं, चूंकि सीसी की इस फर्जी बहुमत पीपुल्सवार की राजनीतिक लाइन को संशोधनवादी करार देकर खारिज कर रही है, इसलिए उस गुट ने यह जिद पकड़ी कि जब तक पार्टी कांग्रेस आयोजित नहीं होती है, तब तक जनवादी केंद्रीयता के नाम पर सीसी बहुमत द्वारा लिए गए निर्णयों पर ही अमल किया जाए. उक्त गुट ने यह कहते हुए कि आंध्रप्रदेश और दंडकारण्य में सरकार के अघोषित युद्ध को परास्त करने में वर्तमान कार्यनीतिक लाइन नाकाम है, अशिष्ट तरीके से अपनी विघटनकारी, विनाशकारी लाइन को थोपने की कोशिश की.

''..दो लाइनों के बीच संघर्ष की आड़ में, अल्पमत को फर्जी बहुमत के मातहत रहने के नाम पर पार्टी नेतृत्व को हथियाकर पार्टी की बुनियादी क्रांतिकारी लाइन को खत्म करने बहुमत गुट द्वारा रची गयी साजिश को अल्पमत गुट ने फरवरी, 1985 की बैठक में ही नाकाम किया. इस समस्या को राज्य कमेटियों के पास ले जाकर फैसला करने तक सीसी में एकमत पर आधारित होकर निर्णय लेने की अल्पमत के प्रतिपादन का गंभीर रूप से विरोध करते हुए ही आखिर बहुमत ने अनुमोदन किया.

''..मई से अगस्त, 1985 के बीच आयोजित आंध्रप्रदेश राज्य के पहले प्लीनम एवं कर्नाटक विशेष बैठक ने एकमत से अल्पमत गुट के पक्ष का समर्थन किया था और बहुमत गुट को अवसरवादी, कैरिअरवादी, विघटनकारी एवं षड्यंत्रकारी गुट करार देते हुए प्रस्ताव पारित किया. दोनों ने यह भी प्रस्ताव किया कि जब तक पार्टी कांग्रेस नहीं होती है तब तक सीसी द्वारा एकमत से किए जाने वाले निर्णयों पर अमल किया जाना चाहिए एवं सैद्धांतिक, राजनीतिक मतभेदों पर दस्तावेज लिखकर पार्टी में बहस चलाकर कांग्रेस का आयोजन करना चाहिए. यह भी प्रस्ताव पारित किया गया कि जिन जगहों पर पार्टी कॉन्फरेंस आयोजित करने की प्रक्रिया प्रारंभ हुई है, वहां उसे बेरोकटोक पूरा किया जाए, बाद में विभिन्न स्तरों पर बहस की दस्तावेजों पर प्लीनमों में चर्चा की जाए. चूंकि एसएम ने उस लाइन को खारिज किया था जो सीसी गठन के लिए आधार था, इसलिए एपी प्लीनम द्वारा उन्हें सीसी से वापस बुलाकर एपीपीसी सचिव को उनकी जगह सीसी में भेजा गया.

''..इसी दौरान आयोजित तमिलनाडु, महाराष्ट्र, गोवा विशेष बैठकों ने बहुमत का समर्थन किया. एपी प्लीनम एवं बाकी राज्यों की विशेष बैठकों ने समूची पार्टी को संबोधित करते हुए खुले पत्र लिखे. सीसी के बहुमत और अल्पमत के बीच के तमाम विवादों से संबंधित प्रस्तावों, पत्रों व दस्तावेजों को आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, महाराष्ट्र राज्यों में निचले स्तर तक ले जाया गया था. परंतु वीएस और माणिक्यम ने तमिलनाडु में अधिकांश कॉमरेडों को उपलब्ध नहीं कराया.

''..इस क्रम में आंध्रप्रदेश, दंडकारण्य, कर्नाटक में आयोजित विभिन्न प्लीनमों एवं अधिवेशनों ने यह कहते हुए कि तीन दुनिया के सिद्धांत और एनटीआर की बर्खास्तगी पर सीसी के बहुमत की दस्तावेज मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओ विचारधारा के खिलाफ हैं, संयुक्त मोर्चा के बारे में समझदारी दरवाजा बंद करने की संकीर्णतावादी पद्धति है, उन्हें खारिज कर दिया. प्लीनमों ने यह भी कहा कि चूंकि बहुमत की रणनीति–कार्यनीति दस्तावेज मार्क्सवादी महान शिक्षकों के उद्धरणों का तोता रटंतु उल्लेखन मात्र है, इसलिए वह पार्टी की वर्तमान कार्यनीतिक लाइन का विकल्प कतई नहीं है. लेकिन आंध्रप्रदेश में 1980 से जारी पार्टी व्यवहार पर बहुमत की इन दस्तावेजों के जरिए की गयी आलोचना का असर बहुमत के अवसरवाद के चलते तमिलनाडु कैडरों पर काफी समय तक रहा. राज्य नेतृत्व की आलोचना करते हुए तमिलनाडु में आगे आए दूसरी व तीसरी श्रेणी के कैडरों द्वारा बढ़िया पहलकदमी के साथ राज्य अधिवेशन आयोजित कर बहुमत के अवसरवाद एवं उनकी दस्तावेजों को खारिज कर पीपुल्सवार की क्रांतिकारी लाइन को ऊंचा

किताब का नाम भी तो अर्धसत्य है, पूंजीवादी व्यवस्था में फ्रीडम तो केवल पूंजीपतियों के लिए होता है. व्यापक जन समुदायों को जब फ्रीडम है ही नहीं तो फ्रैक्चर्ड् का क्या सवाल? हां, कोबाड के क्लास को फ्रीडम है, उस अर्थ में उनका फ्रीडम फ्रैक्चर्ड् होता है. उतना ही नहीं, फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम तो जनता की आशा, आकांक्षा, उम्मीदों पर पानी फेर रहा है, यह बहुत खतरनाक है. सबसे खतरनाक होता है, सपनों का मर जाना. कम से कम 'आव्हान' के इस गीत को भी याद रखते तो ..

लाखों शहीदों के खून से रंगा निशान
हम हाथ में उठाये हुए हैं
मृत्यु भय को जीतकर तुफानों से टकराकर,
भिन्न भेद दुर कर बढ़ते चले हैं कॉमरेड़
हम है सर्वहारा, हम है शोषित जनता......
..... विश्व को करेंगे जय हम एक दिन,
समता, एकता लायेंगे एक दिन, एक दिन,
तोडके रहेंगे हम बंदगी गुलामी की
तोड़के रहेंगे हम बंधने समाज की
इसलिए उठाए हमने मुक्ति का निशान कॉमरेड़.....

कोबाडजी! आप जेल में माफियाओं से सुविधा लेते रहे, 'क्वश्चन ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पीपल्स इमैन्सिपेशन' जैसे वर्गविलयवादी लेख लिखते रहे, पार्टी बाहर माफियाओं और हर किस्म के लुटेरों के साथ लड़ती रही, दुश्मन के दमन अभियान ऑपरेशन ग्रीन हंट का डटकर मुकाबला करते हुए, आंदोलन के सफाए के उसके निर्धारित लक्ष्य को हासिल करने से रोकी. आप बाहर निकलकर 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' लिखकर जनता को लड़ने से दुर हटाने का विचार व्यक्त कर रहे हो, जबकि पार्टी उनकी प्रतिक्रांतिकारी, क्रूर दमनकारी नीति 'समाधान' के तहत प्रहार हमलों' के खिलाफ लड़ रही है. आप अपने 40 साल के क्रांतिकारी व्यवहार का सारांश निकालकर उसी व्यवहार के विरुद्ध आध्यात्म को स्वीकार करने के लिए कह रहे हो, पार्टी मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद का झंडा बुलंद किए 'क्रांतिकारी जनताना सरकारों(क्रांतिकारी जन कमेटियों–आरपीसी)' की स्थापना करते हुए और उनमें नये इन्सानी मूल्यों को गढ़ते हुए आगे बढ़ने का रास्ता बना रही है. कितनी खाई निर्माण हो गई है, आप और पार्टी के बीच में. यह खाई तुम्हारे अंदर के क्रांतिकारी विचारों की कब्र तो बन ही गयी और आप उस खाई में जाकर क्रांतिकारी विचारों के लिए ही कब्र खोदने की नाकाम कोशिश में लगे हैं.

होती हैं जिन्हें आत्मआलोचना–आलोचना (एकता–संघर्ष–मजबूत एकता की प्रक्रिया) के जरिए सुधारा जाता है और यह सतत् चलने वाला कार्य है. स्वयं के भीतर मौजूद गलत रुझानों के खिलाफ खुद का संघर्ष है, आत्मालोचना और साथियों के गलत रुझानों के खिलाफ संघर्ष आलोचना है. यह कम्युनिस्ट पार्टी को जीवंत रखने का साधन है. इसके अमल के मामले में कोबाड का व्यवहार 'आलोचना अधिक और आत्मालोचना कम' था.

अच्छे और बुरे तत्व एक दुसरे के अस्तित्व की अनिवार्यता है. प्रत्येक कॉमरेड में अच्छे गुण होते हैं, कमजोरियाँ होती हैं, गैर सर्वहारा रूझान होते हैं. यह साधारण पार्टी सदस्यों और केन्द्रीय कमेटी सदस्यों पर भी लागु है. इसके तीन कारण हैं. पार्टी में विभिन्न वर्गों से लोग आते हैं और वे स्वाभाविक रूप से अपने साथ अपनी वर्गीय आदतों, विचारों को साथ लेकर आते हैं. शासक वर्ग विभिन्न रूपों में अपनी विचारधारा से समाज को प्रभावित करने की कोशिश में लगे रहते हैं. इसका असर पार्टी पर भी पड़ता है. तथापि पार्टी में आने के बाद वर्ग संघर्ष एवं राजनीतिक, सैद्धांतिक शिक्षा के जरिए वे सर्वहाराकरण की प्रक्रिया में आ जाते हैं और यह प्रक्रिया चलती रहती है. इसमें कमी से किसी का भी वैश्विक दृष्टिकोण बदल जाता है और वह सर्वहारा (द्वंद्वात्मक, ऐतिहासिक भौतिकवादी) वैश्विक दृष्टिकोण की जगह बुर्जुआ (भाववादी/आध्यात्मिकवादी जड़ात्मक) वैश्विक दृष्टिकोण अपनाता है और पथभ्रष्ट हो जाता है. इसीलिए गैर–सर्वहारा रुझानों के खिलाफ संघर्ष करने हेतु पार्टी समय–समय पर भूल सुधार अभियान (रेक्टिफिकेशन कॅंपेइन) चलाती है. कोबाड के मामले में यह कोई अचानक हुआ परिवर्तन नहीं है. एक तो वैचारिक तौर पर सर्वहाराकरण की प्रक्रिया पहले से ही कमजोर थी और भूल सुधार में वे दृढतापूर्वक नहीं थे. इस कारण से उनकी वर्गीय पृष्ठभूमि और शासक वर्गों की विचारधारा का प्रभाव हावी होकर उनके अंदर गैर–सर्वहारा दृष्टिकोण पनपा जिससे उनकी अधोगति हो गयी. यहां यह गौर करने वाली बात है कि शोषक–शासक वर्गों द्वारा प्रायोजित आर्ट् ऑफ लिविंग के रविशंकर से लेकर और भी कई लोग एवं संगठन जेलों में बंद क्रांतिकारियों को भ्रष्ट करने में लगे हुए हैं. जेलों को भी वर्ग संघर्ष के केंद्रों में तब्दील करने की प्रक्रिया में शामिल होने एवं स्वयं के भीतर पनपने वाले गैर–सर्वहारा रुझानों के खिलाफ सतत् संघर्ष करने के जरिए ही कोई जेल में क्रांतिकारी बने रह सकता है. कोबाड का जेल जीवन इसके ठीक विपरीत था. उस जेल जीवन जिसमें क्रांतिकारी परंपराओं का पालन नहीं किया गया, ने कोबाड को एक क्रांतिकारी से तोड़कर प्रतिक्रांतिकारी कतार में ला खड़ा किया है.

उठाए रखा गया. आंध्रप्रदेश, दंडकारण्य, कर्नाटक, तमिलनाडु में 1987 में आयोजित राज्य अधिवेशनों ने सीसी बहुमत गुट को खारिज कर दिया.

''..यह निर्विवादपूर्ण मामला है कि सीसी के बहुमत गुट के लोग ही पार्टी में संकट पैदा करने वाले अवसरवादी, पदलोलुप एवं विघटनकारी हैं. फिर भी बहुमत द्वारा उपयोग की गयी क्रांतिकारी लफ्फाजी ने तमिलनाडु, महाराष्ट्र की पार्टी कतारों जिन्हें वर्ग संघर्षों का नेतृत्व करने का पर्याप्त अनुभव नहीं था, को असमंजस में डाल दिया एवं अल्पमत का विरोध करने का कारण बना. साथ ही संकट का हल करने के लिए अल्पमत द्वारा अपनायी गयी संकीर्णतावादी रवैए ने भी उनके बहुमत के जाल से बाहर आने में रोड़ा बनी. प्रारंभ से अपने नेतृत्व के साथ के संबंधों के अलावा उनकी इस सोच कि ऊपर के विभाजन के कारण अपने राज्यों में कम मात्रा में मौजूद पार्टी निर्माण का विभाजन नहीं होना चाहिए, ने भी नेतृत्व के प्रति आलोचनाएं जितनी भी क्यों न रहे, कुछ समय तक उनके साथ रहने बाध्य किया..''

1995 में आयोजित विशेष अधिवेशन की उपरोक्त समीक्षा के जरिए सीसी में बहुमत गुट की भूमिका एवं उसका हिस्सा बने कोबाड की भूमिका को स्पष्ट तौर पर समझ सकते हैं.

1989–90 के दौरान महाराष्ट्र राज्य कमेटी में भी पार्टी के विभाजन पर, बहुमत की भूमिका पर चर्चाएं आरंभ हुई थी. उसी तरह बहुमत द्वारा अपनायी गयी कार्यनीति पर भी चर्चाएं हुई. सीसी में बहुमत के पक्ष में रहकर महाराष्ट्र से केंद्रीय कमेटी सदस्य बने कोबाड द्वारा अपनायी गयी गलत नीतियों की राज्य कमेटी के बहुसंख्यक सदस्यों ने आलोचना की. कोबाड को केंद्रीय कमेटी से वापस बुलाया गया. बहुमत के नेतृत्व वाली पार्टी से संबंध विच्छेद कर महाराष्ट्र कमेटी ने स्वतंत्र तौर पर कुछ समय तक काम किया. आंध्रप्रदेश राज्य में 1989 तक सरकारी हमले का मुकाबला कर उसे परास्त कर क्रांतिकारी आंदोलन ने अपर हैंड हासिल किया. कृषि क्रांतिकारी आंदोलन आगे बढ़ रहा था. राज्य भर में क्रांतिकारी आंदोलन और भी मजबूत हुआ. दूसरी ओर बहुमत गुट के नेतृत्व वाले राज्यों में आंदोलनों का विकास नहीं हुआ. अगस्त, 1990 में केंद्रीय प्लीनम आयोजित होकर सीपीआई(एम–एल)(पीपुल्सवार) सीओसी गठित हुई. बाद में 1993 तक महाराष्ट्र कॉमरेड्स मातृ संस्था पीपुल्सवार में फिर से शामिल हो गए.

महाराष्ट्र राज्य कमेटी द्वारा कोबाड को केंद्रीय कमेटी से वापस बुलाने के बाद वे नागपुर तक सीमित होकर काम करते आए. इसी शहर में कॉमरेड् अनुराधा मजदूरों, युवाओं, छात्रों व दलितों को संगठित करने के साथ–साथ सांस्कृतिक संगठन आव्हान नाट्य मंच का भी दिशानिर्देशन किया. इनके साथ ही वे विदर्भ

के क्रांतिकारी आंदोलन में संघर्ष स्फूर्ति से लैस होकर आंदोलनकारी के तौर पर उभर आयी. इस दौरान कोबाड प्रधानतया कॉमरेड् अनुराधा पर निर्भर होकर एक मेंटर (अनुभवी सलाहदार) के तौर पर पार्टी का मार्गदर्शन करते रहे.

1993 में महाराष्ट्र कमेटी के पार्टी में विलय एवं 1995 में संपन्न स्पेशल कान्फरेंस के बाद पीपुल्स वार की केंद्रीय कमेटी ने कोबाड को राज्य कमेटी सदस्य की हैसियत से वैनगार्ड् पत्रिका के संचालन की जिम्मेदारी दी. इसके अलावा सीसी प्रतिनिधि के तौर पर विदेशों में आयोजित होने वाले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने वे भेजे जाते रहे. 2000 तक वे प्रधानतया केंद्रीय पत्रिका के संचालन का कार्य करते रहे.

2001 में संपन्न पूर्व की सीपीआई (एम–एल) (पीपुल्सवार) की 9वीं कांग्रेस में कोबाड फिर से सीसी सदस्य चुने गए. उसके बाद भी वे केंद्रीय पत्रिका पीपुल्स मार्च एवं अंतर्राष्ट्रीय मामलों को देखते रहे. फील्ड अध्ययन के लिए कभी–कभार विभिन्न राज्यों के दौरे पर जाते थे. 2000 से केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा क्रांतिकारी आंदोलन पर अभूतपूर्व दमन अमल में लाया गया. इससे आंदोलन में कई उतार–चढ़ाव आए. खासकर उत्तर तेलंगाना का आंदोलन भीषण दमन एवं कुछेक गलत दांव–पेंचों की वजह से 2002 तक ध्वस्त हो गया. बाद में जनवरी, 2007 में संपन्न भाकपा (माओवादी) की एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस ने उत्तर तेलंगाना, एपी, एओबी आंदोलनों की समीक्षा की और यह आकलन लगाया कि ये आंदोलन सेटबैक का शिकार हो गए हैं. इस एकता कांग्रेस में कोबाड इस मनोगतवादी तर्क पर उतर आए कि उक्त राज्यों में कार्यरत सीसी एवं राज्य कमेटियों का नेतृत्व दक्षिणपंथी अवसरवाद का शिकार हो गया है जिसकी वजह से आंदोलन अस्थायी सेटबैक के शिकार हो गए. तथापि कोबाड की राय का कांग्रेस ने निर्विवाद रूप से खारिज किया. आंध्रप्रदेश के तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर पूर्ववर्ती भाकपा (मा–ले) (पीपुल्स वार) की केंद्रीय कमेटी के मार्गदर्शन में आंध्रप्रदेश राज्य कमेटी ने तत्कालीन सरकारों के साथ 2002 और 2004 में वार्ता करने का निर्णय लिया था. इस संदर्भ में पूर्व के पीपुल्सवार नेतृत्व की यह कहते हुए आलोचना की कि वह अवसरवाद का शिकार हो गया. इस तर्क को पीपुल्सवार नेतृत्व ने खारिज किया. फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम में हालांकि उन्होंने यह तर्क नहीं दिया लेकिन यह लिखा कि वार्ता के चलते नेतृत्व का खुलासा हो जाने के कारण वार्ता की समाप्ति के बाद सरकारी हमले में नेतृत्व को गंभीर नुकसान पहुंचने की बात से वे पहले ही पार्टी को चेताए थे. राजनीतिक फायदे के लिए उन परिस्थितियों में पार्टी ने कुछेक अस्थायी दांव–पेंच अपनाए. उन दांव–पेंचों के अमल के दौरान संभावित खतरों के बारे में भी आकलन लगाकर

पीपुल्स ट्रूथ, पीपुल्सवार में लिखे गए लेखों से, क्रांतिकारीयों के अंतर्राष्ट्रीय समन्वय सम्मेलनों से, देश में चले संयुक्त मोर्चा के प्रयासों से, कभी कार्यकर्ताओं को संबोधित करते दिए गए लेक्चरों से? आप अलग करना चाहोगे तो भी कर नहीं सकते. 'बिल्ली के आँख मुँदकर दुध पीने से अंधेरा नहीं होता.' फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम भले ही इतिहास की सच्चाई नकारने की कोशिश करे पर बनावटी तर्कों से सच्चाई छुप नहीं सकती. एक तरफ कॉमरेड् अनुराधा के मूल्यों का आदर्श रखना और दुसरे ही क्षण उन्हीं का अवमूल्यन करना ये ही तो 'चाणाक्य सिंड्रोम' के लक्षण हैं. जिस क्षण आपने माओवादी पार्टी से नाता तोड़ लेने का सोचा है, उसी क्षण आपने कॉमरेड् अनुराधा से रिश्ते की बुनियाद खो दी है. बड़ी विडंबना है कि अर्धसत्य और असत्य का सहारा लिए 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' पुस्तक दुसरों को मूल्यों का पाठ पढ़ा रही है. किताब में बड़ी चालाकी से माओवादी पार्टी के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन की छवि यथासंभव खराब करके पेश करने की कोशिश की गयी है. इस विषय के बारे में महान शिक्षकों ने हमें क्या सिखाया, देखते हैं.

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन और माओ ने हमें सिखाया है कि परिस्थितियों का संजिदगी से अध्ययन करना तथा मनोगत इच्छाओं से नहीं बल्कि वस्तुगत यथार्थ को आधार बनाना आवश्यक है. माओ कहते हैं –''मनोगतवादी तरीका विज्ञान और मार्क्सवाद–लेनिनवाद के विरूध्द है, कम्युनिस्ट पार्टी का एक बहुत बड़ा दुश्मन है, मजदूर वर्ग का एक बहुत बड़ा दुश्मन है, वैज्ञानिक रूख के अभाव अर्थाथ सिध्दान्त और व्यवहार को मिलाने वाले मार्क्सवादी–लेनिनवादी रूख के अभाव का मतलब यह है कि हमारे अन्दर या तो पार्टी भावना है ही नहीं अथवा वह बहुत कमजोर है. (अपने अध्ययन में सुधार करो––माओ.'')

कोबाड द्वारा की गयी पार्टी कतारों का श्रेणीकरण और उसके आधार को भी हम खारिज करते हैं. इस प्रकार के आधार वाला कोई श्रेणीकरण पार्टी में नही है. पार्टी सर्वहारा वर्गीय दृष्टीकोण के साथ मा–ले–मा सिध्दान्त पर अडिग रहते हुए, पानी में मछली की तरह जनता में रहते हुए, कम्युनिस्ट पार्टी के सांगठनिक उसूलों का कडाई से पालन करते हुए, जनता से जनता तक के उसूल का पालन करते हुए वर्गदुश्मनों से लोहा लेते हुए जनयुध्द के मैदान में एक महायोध्दा बनकर ड़टी है. पार्टी में जो भी आता है वह स्वेच्छा से आता है. क्रांति कार्य कोई जबरदस्ती से किया जानेवाला कार्य नहीं है. अपने विचार और इच्छा दोनों को पार्टी लाईन के साथ मिलाकर ही यह कार्य होता है. जब तक वह एक पार्टी सदस्य के रूप में रहता है तब तक वह सर्वहारा वर्ग दृष्टि से ही कार्य करता है और आचरण करता है. उसे ऐसा करने के लिए पार्टी पद्धति, नियम तथा सैध्दान्तिक समझ बाध्य करती है. इससे कोई परे नहीं रह सकता है. इसके बावजूद भी गलतियाँ

अपने 40 साल के क्रांतिकारी जीवन के निष्कर्ष के तौर पर कोबाड यह कहते हुए कि 60 के दशक के आखिरी सालों में जब वे क्रांति के प्रवाह में आए थे, उफनता क्रांतिकारी आंदोलन आज शिथिलता में पहुंच गया है, क्रांति कुछेक सुधारों तक सीमित हो गया है, करीबन पीछेहट की स्थिति में पहुंच गया है, मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद आज की परिस्थितियों में नाकाम है, चूंकि समाजवाद ध्वस्त हो गया है इसलिए इन परिस्थितियों के लिए सटीक विकल्प जोकि स्थिरतापूर्वक रहने वाले मानवतावादी सिद्धांत की आवश्यकता है, आध्यात्मिक रास्ता अपनाया. 40 साल के अपने क्रांतिकारी इतिहास को छोड़कर वे आज क्रांति के गद्दार बन समाज के सामने खड़े हैं.

मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद कोई बिकने वाला माल नहीं है कि पब्लीसीटी के चकाचौंध में उसे खरीदा–बेचा जाए. मानने भर से कोई मार्क्सवादी नहीं होता सवाल व्यवस्था बदलने का है. बुर्जुआ जनवाद/स्वतंत्रता के प्रभाव का व्यक्ति हर मामले को विनिमय की कसौटी पर तौलता है. मार्क्सवाद का बोलबाला बुर्जआ मिडीया में कम हो जाने से उसकी उपयोगिता कम नहीं होती है. अगर कोबाड 40 साल कम्युनिस्ट थे तो किस किस्म के कम्युनिस्ट थे? क्रांतिकारी, सुधारवादी, संशोधनवादी या उन्होंने खुद के लिए और कोई प्रजाति परिभाषित की है? क्या क्रांति करने का उद्देश्य था या केवल लेख लिखने का? कौनसी पार्टी में थे? नक्सलबाड़ी आंदोलन से निकली किस धारा के साथ रिश्ता था? माओवादी पार्टी के नेता नहीं होने की बात कहना क्या बचकाना हरकत नहीं है? किसे मनवाने के लिए यह लिखा जा रहा है? क्या सत्ता बेवकुफ है जो उनकी इस बात को मान लेगी? बौध्दिक जगत तो तुरंत समझ गया होगा कि कोबाड ने 'यु टर्न' लिया, और जब यह किताब शोषित जनता की भाषा में उनके पास जायेगी तो वह तुरंत जवाब देगी, 'डर गया कोबाड!'. क्रांतिकारी राजनीति में इसे कौनसे नाम से पुकारा जाता है, यह तो कोबाड अच्छी तरह जानते हैं. ठीक है कि बुढ़ापे में तनावमुक्त जिंदगी बिताने की सोच बना ली हो, पर क्या उसके लिए इतना गिरना जरूरी था? माओवादी नेता होने की बात को स्वीकार नहीं करने का मतलब यही है कि भारत के क्रांतिकारी आंदोलन के इतिहास से आपका कोई नाता नहीं है. फिर भाकपा (माओवादी) की नेत्री अमर शहीद कॉमरेड अनुराधा से आप अपने राजनीतिक रिश्ते को कैसे रेखांकित कर सकते हैं? उस इतिहास और संघर्ष जिसे छांट–छांटकर ही सही आपने अपने इतिहास के रूप में दर्शाए हैं, उससे कैसे रिश्ता जोड सकते हैं? वो सारे संघर्ष तो क्रांतिकारी पार्टी के नेतृत्व में (पहले पिपुल्सवार और फिर माओवादी पार्टी) चले थे. कहाँ–कहाँ से खुद को अलग करेंगे? सेन्ट्रल कमेटी के उन मिनट्स की कॉपियों से, वैनगार्ड, पीपुल्स मार्च,

उनके निवारण के लिए भी प्लान बनायी. मगर मात्र संभावित खतरों को नजर में रखकर पार्टी उस कार्यनीति को ही अपनाने से पीछे नहीं हटती है. एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस ने भी यह राय जाहिर की कि तत्कालीन आंध्रप्रदेश की ठोस वस्तुगत व आत्मगत परिस्थितियों के मद्देनजर आंध्रप्रदेश सरकार के साथ वार्ता करना सही नहीं था. ''भविष्य के हमले का मुकाबला करने की तैयारियां पूरा करने, युद्ध को आगे बढ़ाने, तद्वारा हमारी आत्मगत शक्तियों को मजबूत करने के लिए हमें दुश्मन के दमन में मिलने वाली ढील का उपयोग करना चाहिए'', ऐसा कांग्रेस ने राय व्यक्त की. परंतु कांग्रेस ने वार्ता में शामिल होने को अवसरवाद नहीं कहा जैसा कि कोबाड कह रहे हैं. यह भी कोबाड के मनोगतवादी विचार का ही हिस्सा है.

2004 में एकीकृत पार्टी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के गठन के बाद मनमोहन सिंह के नेतृत्व वाली युपीए सरकार ने माओवादी पार्टी को 'देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए बहुत बड़ा खतरा' घोषित कर पार्टी पर तीव्र दमन का प्रयोग किया. केंद्र और राज्य स्तर के करीबन 100 नेतृत्वकारी कॉमरेडो को लक्ष्य बनाकर 2005 से नेतृत्व की गिरफ्तारियों, मुठभेड़ों व झूठी मुठभेड़ों का सिलसिला शुरू किया. पुलिस द्वारा नेतृत्व का पीछा करना, शिकार कर गिरफ्तार करना सर्वसाधारण बात बन गया था.

नुकसानों से बचने के लिए अपनाए जाने वाले आवश्यक तकनीकी सावधानियों को लेकर सीसी की ओर से नवंबर, 2007 में सर्कुलर जारी किया गया था. फिर भी ये गिरफ्तारियां 2008 तक तेज हो गयी. 2009 में आंदोलन का दमन करने केंद्र सरकार ने 'ऑपरेशन ग्रीनहंट' शुरू किया और क्रांतिकारी आंदोलन पर घेराव–दमन के उन्मूलन हमलों को तेज किया. ग्रीनहंट का सामना करने, नेतृत्व की गिरफ्तारियों का निवारण करने अगस्त, 2009 में पोलित ब्यूरो ने प्रस्ताव पारित किया. इन प्रस्तावों की स्फूर्ति को ध्यान में रखकर अपने कामकाज को गोपनीय ढंग से संचालित करने में हो रही खामियों को कोबाड सुधार नहीं सके और अक्टूबर, 2009 में दिल्ली में गिरफ्तार हो गए.

अपनी गिरफ्तारी के पहले वे 2007 में आयोजित एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस में केंद्रीय कमेटी, पोलित ब्यूरो सदस्य चुने गए थे और तब से सुकोमो, सीपीबी, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के साथ–साथ केंद्रीय पत्रिका 'पीपुल्स मार्च' का संचालन कर रहे थे. उनकी गिरफ्तारी की वजह से इन क्षेत्रों में पार्टी कार्य काफी हद तक रुक सा गया. अपनी गिरफ्तारी के बाद पूछताछ के दौरान गुप्तचर विभाग के अधिकारियों के सामने पार्टी कामकाज से संबंधित कुछेक राज खोलने की बात हालांकि उन्होंने पार्टी को जेल से लिखे पत्रों में स्वीकार की और सतही तौर पर यह भी लिखा

कि ऐसा करना उनकी गलती थी. परंतु क्रांतिकारी आंदोलन को हुए नुकसान और अपनी जवाबदेही को चिह्नित कर गंभीर आत्मालोचना करने के बजाए चरम अवसरवादी तरीके से स्वयं को दमन से बचाने पुलिस एवं प्रेस को यह कहते आए कि वे न तो पार्टी सदस्य हैं और न ही केंद्रीय कमेटी सदस्य या पोलित ब्यूरो सदस्य हैं. अपनी किताब 'फ्रैक्चर्ड फ्रीडम् ए प्रिजन मेम्वार' में भी यही बताया.

चूंकि कोबाड ने अपनी किताब में शहीद कॉमरेड् अनुराधा के चमकते व्यक्तित्व को भी अपने पतनोन्मुख विचारों के लिए बैसाखी की तरह इस्तेमाल करने की कोशिश की इसलिए न चाहते हुए भी पाठकों को सच्चाई से अवगत कराने उनके रिश्ते पर अति संक्षेप में यहां नजर डालते हैं. कॉमरेड् अनुराधा कम्युनिस्ट पृष्ठभूमि वाले एक मध्यवर्गीय परिवार से आयी थी. मुंबई के एलफिंस्टन महाविद्यालय में स्नातक की पढ़ाई के दौरान वे विद्यार्थी प्रगति संगठन की गतिविधियों के जरिए क्रांतिकारी आंदोलन में शामिल हुई. छात्रों के बीच काम करने के दौरान ही कोबाड से उनका परिचय हुआ. क्रांतिकारी आंदोलन में काम करने के क्रम में 1979 में उनकी शादी हुई. तब से लेकर 2008 में कॉमरेड् अनुराधा की शहादत तक दोनों जीवनसाथी बनकर क्रांतिकारी आंदोलन में सक्रिय तौर पर कार्य करते रहे. कॉमरेड् अनुराधा की शहादत ने कोबाड को हिला दिया था जिसका अंदाजा उनके इन शब्दों से होता है कि कॉमरेड् अनुराधा का शहादत दिवस उनके लिए सबसे बुरा दिन था. कॉमरेड् अनुराधा आंदोलन के एक कर्तव्य को पूरा करने के तहत महिला बैठक में शामिल होने झारखंड गयी थी और वहां मलेरिया का शिकार हुई थी. वो पहले से ही स्क्लेरॉसिस पीड़ित थी. वहां से लौटने के बाद मुंबई के एक अस्पताल में इलाज के दौरान उनका निधन हो गया था. उस समय कोबाड उनके साथ में ही थे.

विदर्भ में काम करने के पार्टी निर्णय के बाद कॉमरेड् अनुराधा नागपुर स्थानांतरित होकर वहां विश्वविद्यालय में अध्यापिका के तौर पर सेवाएं देती हुई मजदूरों, छात्रों, युवाओं, महिलाओं व कलाकारों को संगठित करने लगी थी. इस दौरान वे एक आंदोलनकारी एवं अच्छी संगठनकर्ता और जन नेत्री के तौर पर विकसित हुई. छात्रों और महिलाओं के बीच में वे देश के स्तर पर मान्यता प्राप्त नेत्री बन गयी. मजदूर क्षेत्र में भी मालिकों की गुंडागर्दी के खिलाफ मजदूरों के समर्थन में डटी रही. महिला समस्याओं का कॉमरेड् अनुराधा ने गहन अध्ययन किया. पटना में अखिल भारतीय क्रांतिकारी सांस्कृतिक संघ के तत्वावधान में आयोजित महिला सेमिनार में शामिल होकर महिला आंदोलन का दिशानिर्देशन किया. पार्टी दस्तावेज ''महिला सवाल पर हमारा दृष्टिकोण'' की रूपकल्पना में

दूसरी ओर माओवादी पार्टी के उद्‌भव के साथ ही शासक वर्गों द्वारा तीव्र दमन का प्रयोग करने और गिरफ्तार होने के कारण उनके भीतर घर कर गऐ गलत विचार उनकी रचनाओं में व्यक्त हो गए. चाहे कोई भी व्यक्ति क्यों न हो, स्वयं को सुधारने के लिए आवश्यक है, सीधे वर्ग संघर्ष एवं जनयुद्ध में शामिल होना, ''ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण'' के जरिए मनोगतवादी विचारों, कठमुल्लावादी गलत विचारों को सुधारना. वे ज्यादा समय जन कार्य में सीधे नहीं थे. जनता के साथ घुल मिलकर उनकी राय नहीं लिए. इससे वे जनदिशा से दूर हो गए. साथ ही डीक्लासिफाई नहीं हो सके. इससे उनके भीतर के गलत रुझान गंभीर रूप धारण करते रहे और आंदोलन के मोड–घुमावों में ढुलमुलपन का शिकार होते रहे. ये राजनीतिक तौर पर कथनी में अतिवामपंथ के रूप में अक्सर अभिव्यक्त होते रहे. माओवादी पार्टी में नेतृत्व गुप्त रूप में ही रहता है. किंतु कोबाड अपने क्रांतिकारी जीवनकाल में लंबे अरसे तक खुले या सेमी लीगल रहे. वर्ग संघर्ष का हिस्सा नहीं बन पाने एवं खुले क्रांतिकारी जीवन के कारण गिरफ्तार होते ही अचानक दुश्मन का सामना करने की स्थिति उत्पन्न होते ही वो कायर बन गए थे. उनकी जीवनसाथी कॉमरेड् अनुराधा को खोना, उसके फौरन बाद गिरफ्तार होना, लंबा जेल जीवन बिताने की वजह से उनके भीतर ढुलमुलपन पैदा हुआ. जैसा कि उन्होंने कहा, वे अंतरमुखी स्वभाव के थे जिससे कि किसी बात को विस्तारपूर्वक साथी कॉमरेडों के साथ चर्चा करने व विचारों के आदान–प्रदान में रुचि नहीं रखते थे. वे अपने लंबे क्रांतिकारी जीवन को सर्वहारा वर्गीय विचारों के अनुरूप बदल नहीं सके. इससे यह हुआ कि क्रांतिकारी आंदोलन में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाले अड्‌वांस–रिट्रीट का मार्क्सवादी पद्धति से विश्लेषण नहीं कर सके. अक्सर ऐसे संदर्भों में निराश होना, पार्टी की गलतियों को एकांगी ढंग से अधिक आकलन कर, पार्टी के प्रति द्वेषपूर्ण नजरिया अपनाना आदि उनमें कई बार प्रकट हुए. यह उनके पेट्‌टी बुर्जुआ अहंकार का द्योतक था. आखिर वे उन्हीं का शिकार होकर मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के सिद्धांत का विरोध करने तक जा पहुंचे.

मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद में मौजूद सक्रियता की जगह कोबाड में लंबे समय तक मनोगतवाद, कठमुल्लावाद, संकीर्ण दृष्टिकोण जारी रहे जिनकी वजह से द्वंद्वात्मक भौतिकवादी सिद्धांत के विपरीत ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण जोकि मार्क्सवाद के लिए प्राण समान है, से दूर हो गए. इस कारण वे वस्तुगत परिस्थितियों को समग्रता के साथ समझ नहीं सके. सर्वहारा वर्गीय दृषिकोण को आत्मसात नहीं कर सके.

कार्यकाल में शहीद हुए साथियों को भी याद नहीं किया. उन कार्यकर्ताओं का जिक्र तक नहीं है जिन्होंने कई बार जेल की यात्रा की, पुलिस के डंडे खाए, जो मजदूर आंदोलनों के महत्वपूर्ण झंडाबरदार रहे है. उन मजदूर आंदोलनों का जिक्र भी नहीं है जो महाराष्ट्र में उस समय हुए. उन समिक्षाओं और समय–समय पर उत्पन्न प्रश्नों पर उठाए गए कदमों की भी चर्चा नहीं है. 'प्रयोम' याद है पर 'विद्यार्थी प्रगति संगठन' याद नहीं, 'एआईआरएसएफ', 'नौजवान भारत सभा' याद नहीं. 'आव्हान' याद है पर 'एआईएलआरसी' भूल गए हैं. अपनी सुविधा के अनुसार सोच और सोच के अनुसार इतिहास लेखन. वाह, क्या मूल्य हैं! आंदोलन में सफलता, असफलता चाहे जो भी हो हमने अपना योगदान समाज को आगे ले जाने में कितना दिया है, वह इमानदारी से व्यक्त होना चाहिए. कम्युनिस्ट ही नहीं, एक सच्चे इंसान को खुद के प्रति, आंदोलन के प्रति इमानदारी रहनी चाहिए. यह बेसिक मूल्य है. परंतु जो खुद ही खुद के इतिहास को नकारता हो, जो अपने क्रांतिकारी इतिहास को मात्र साधारण एनजीओ टाईप सामाजिक कार्य के रूप में दर्शाता हो, तो यही समझना चाहिए कि वो जानबूझकर उन तमाम कार्यकर्ताओं और जनता का अपमान कर रहे हैं जिन्होने जी जान से संघर्ष में हिस्सेदारी निभाई थी. यह वास्तविक रूप में उस क्रांतिकारी कॉमरेड अनुराधा का भी वैयक्तिक रूप से अपमान है जिन्हें उन्होंने सर आँखों पर और दिलो दिमाग में बिठाकर रखा है. यह जनता में, कार्यकर्ताओं में आंदोलन बाबत भ्रम और निराशा फैलाने की घोर विफल कोशिश है.

अब हम कोबाड के क्रांतिकारी व्यवहार का इस तरह आकलन कर सकते हैं. देश के क्रांतिकारी आंदोलन का नेतृत्व करने वाली भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) कई उतार–चढ़ावों, हार–जीतों का सामना करते हुए अपने सफर को जारी रखा और इस तरह वह भारत की जनता के दिलो–दिमाग में सुस्थिर स्थान अर्जित किया. यह साबित हुआ कि पार्टी की लाइन अजेय है. पार्टी ने कई अनुभव हासिल किए. दीर्घकालीन जनयुद्ध के रास्ते में पार्टी ने जो अनुभव हासिल किए, उस हेतु जारी उसके व्यवहार को कोबाड पूरी तरह समझ नहीं सके. 'ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण' जोकि मार्क्सवाद के मौलिक नियमों का हिस्सा है और प्राण समान है, पर उन्होंने कभी ध्यान नहीं दिया. उसी कारण उनमें द्वंद्वात्मक व ऐतिहासिक भौतिकवादी पद्धति के विपरीत कठमुल्लावादी विचार पनपते रहे. ये राजनीतिक तौर पर कथनी में वापपंथ जबकि करनी/व्यवहार में दक्षिणपंथ के रूप में अभिव्यक्त होते रहे. पार्टी में गुटबाजी के लिए मार्ग प्रशस्त करते रहे. आंतरिक संघर्ष के जरिए कोबाड को सुधारने का पार्टी ने गंभीर प्रयास किये. परंतु एक तो वे सैद्धांतिक, राजनीतिक तौर पर गलत रूझानों से बाहर नहीं आ सके.

उनका अहम् योगदान रहा. मानवाधिकारों, महिला व छात्र क्षेत्र में आंदोलनकारी के तौर पर उन्हें अखिल भारतीय स्तर पर अच्छी खासी पहचान मिल गयी थी.

इस पूरे दौर में अनुराधा और कोबाड साथ रहकर क्रांतिकारी आंदोलन में सक्रिय तौर पर काम करते रहे. दोनों एक–दूसरे की मदद करते थे. कॉमरेड् अनुराधा कुछेक सैद्धांतिक मामलों में कोबाड की मदद लेती थी जबकि वो अपने मजदूर वर्गीय दृष्टिकोण, बुनियादी वर्गों की जनता के साथ घुलमिल जाने के स्वभाव की वजह से बने राजनीतिक दृढ़संकल्प के जरिए कोबाड की मदद् करती थी. क्रांतिकारी आंदोलन में उत्पन्न होने वाली जटिल समस्याओं का दोनों ने साझे तौर पर सामना किया. पार्टी के आंतरिक संकटों के दौरान हालांकि दोनों की समझ एक ही थी परंतु कोबाड जहां अंतरमुखी स्वभाव के और संकीर्ण दृष्टिकोण के थे वहीं अनुराधा खुलेपन, मतभेद रखने वालों के साथ भी एकताबद्ध हो सकने, कैडरों व उत्पीड़ित तबकों की जनता के साथ प्यार भरा व्यवहार करने वाली कम्युनिस्ट विशाल मानसिकता से लैस थी. वो इसीलिए कई क्षेत्रों के बुद्धिजीवियों के साथ व्यापक एकता कायम कर सकती थी. इसी कारण कॉमरेड् अनुराधा को जनता एवं कैडरों का असीम प्यार मिला. कॉमरेड् अनुराधा एवं कोबाड उच्च मध्यम वर्ग एवं बुद्धिजीवी पृष्टभूमि से क्रांतिकारी आंदोलन में शामिल होकर लंबे समय तक काम किए. कॉमरेड् अनुराधा क्रांतिकारी आशय की पूर्ति के लिए अपना जीवन समर्पित किया जबकि उनकी शहादत के बाद उनके आशय के साथ गद्दारी कर कोबाड मार्क्सवादी सिद्धांत से नाता तोड़ कर क्रांतिकारी आंदोलन से न सिर्फ दूर हो गए बल्कि उस पर कीचड़ उछालने में लग गए.

कोबाड द्वारा अपने मन से बनाई तीन कैटिगॅरि में कॉमरेड् अनुराधा पहली कैटेगॅरि में हैं और खुद तीसरी कैटिगॅरि में. (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम पढ़ने के बाद तो दुसरी और तीसरी का मिलाप लगता है. मतलब चाणक्य सिन्ड्रोम और ब्लॅक ऐण्ड व्हाईट). पार्टी कतारों का वर्गिकरण कर सकते है पर चालिस साल जिस पहली कैटेगॅरि के जिवनसाथी के साथ जीवन बिताते उनके अंश खुद में क्यों नहीं उतार पाए? इसका उत्तर कोबाड की कार्यशैली और कार्यपध्दति से मिलता है. क्या उन्होंने स्वतंत्र रूप से कभी आंदोलन के लिए घूम–घूम कर जनता को गोलबंद करने में भूमिका निभाई है? क्या जब संभव था, तब भी सड़कों पर जनता के साथ उतरकर नारे लगाए? कभी बैनर पकड़े, झंडा पकड़े? पुलिस की लाठियां खाई? बस्ती के गुंडों के साथ टकराए थे? रात–रात जागकर दिवालें रंगाए हैं? खुद ही लिख रहे हैं कि मायानगर की बस्ती के संघर्ष हो या मजदूर आंदोलन, किसी में भी संघर्ष के मैदान में प्रत्यक्ष नहीं उतरे हैं. अनुराधा तो इन सब में थी. वर्ग संघर्ष की भट्टी में तपेंगे नहीं तो अच्छे कम्युनिस्ट कैसे बनेंगे? नदी के किनारे बैठकर

देखने से तैरना नहीं सीख सकते. पानी और शरीर का, पानी के बहाव और शरीर का, पानी के दबाव और शरीर का, डुबने और बचने का, सांसें कितनी लेनी पडती है और अपनी क्षमता कितनी है ये सारे अंतर्विरोध शरीर को उस तरीके से ढाल देते हैं कि आदमी तैरने लगता है. सिर्फ किताबें पढ़ने और लिखने तक अपने आपको सीमित रखने से जानकारी के भंडार से तो दिमाग भर जायेगा पर उस जानकारी को धरातल पर कैसे उतारना है, यह वह दिमाग नहीं बता पायेगा. 'मात्र क्रांतिकारी विचार जानने से नहीं होता, कम्युनिस्ट बनने के लिए क्रांतिकारी प्रैक्टिस भी चाहिए.' कोबाड के क्रांतिकारी प्रॅक्टीस कहाँ और किधर है? बॉब अवाकियन भी कहते हैं कि दुनिया में जब इतना क्रांतिकारी प्रैक्टिस हो रहा हो तो उन्हें खुद करने की क्या जरूरत है. अब वो संशोधनवाद की दलदल में फँस गए हैं. जब आंदोलन आगे बढ़ने की स्थिति में होता है तो ऐसे बुध्दिजीवीयों का अंतरंग बाहर नहीं दिख पड़ता पर जब पीछे हटने(अस्थायी सेटबैक) की स्थिति आती है तो इनका मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है. यह वे होते हैं जो 'जिधर जोर की हवा बहती है, उधर रूख करते हैं.' डिक्लैसिफाइ होने की चर्चा खुब होती रही, वर्गसंघर्ष में जनता के साथ प्रत्यक्ष नहीं उतरेंगे तो डिक्लैसिफाइ कैसे होंगें?

ऐसे बुध्दिजीवीयों बाबत कॉमरेड माओ के विचार – ''बुद्धिजीवी लोग जब तक तन–मन से क्रान्तिकारी जन–संघर्षो में नहीं कूद पड़ते, अथवा आम जनता के हितों की सेवा करने और उसके साथ एकरुप हो जाने का पक्का इरादा नहीं कर लेते, तब तक उनमें अक्सर मनोगतवाद और व्यक्तिवाद की प्रवृत्तियां बनी रहती हैं, उनके विचार अव्यावहारिक होते हैं और उनकी कार्रवाइयों में दृढ़निश्चय की कमी बनी रहती है. इसलिए हालांकि चीन में क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों का जन–समुदाय एक हिरावल दस्ते की भुमिका अथवा एक सेतु की भुमिका अदा कर सकता है, फिर भी यह नहीं हो सकता कि उनमें से सभी लोग अन्त तक क्रान्तिकारी बने रहेंगे. कुछ लोग बड़ी नाजुक घड़ी में क्रान्तिकारी पातों को छोड़ जाएंगे और निष्क्रिय बन जाएंगे, यहां तक कि उनमें से कुछ लोग क्रांति के दुश्मन भी बन जाएंगे. बुद्धिजीवी लोग केवल दीर्घकालीन जन–संघर्षों के दौरान ही अपनी कमियों को दुर कर सकते हैं.'' –माओ ''चीनी क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी'' (दिसम्बर 1939), संकलित रचनाएं (अंग्रेजी संस्करण), ग्रन्थ 2, पृष्ठ 322

40 साल तक दलितों के साथ रहते हुए भी कोबाड अपनी उच्च वर्गीय मानसिकता को नहीं बदल पाए हैं. महारों की बस्ती में जाने से उन्हें अमीबा पेचिस बीमारी हुई जो 50 साल से पकड़ी हुई है. बड़ी शर्म की बात है! देखिए, फ्रैक्चर्ड फ्रीडम में वो क्या कह रहे हैं– ''हालांकि मैं बौद्धिक और वैचारिक रूप से इन वंचित लोगों के लिए प्रतिबद्ध था, लेकिन शारीरिक रूप से मैं ऐसा नहीं था.

चिकित्सकीय रूप से साफ–सुथरे परिवेश में पले–बढ़े, मेरे सिस्टम ने झुग्गी–झोपड़ी की अस्वच्छ स्थितियों और भोजन की खराब गुणवत्ता के खिलाफ विद्रोह कर दिया. मैं यह जानते हुए कि मना करने से उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचेगी, और गलत समझा जाएगा; मेरे इनकार की व्याख्या या तो दंभ के रूप में की जाती या, इससे भी बदतर, जातिगत पूर्वाग्रह, इन विनम्र लोगों के यहां खाना खाता था जिन्होंने इतनी उदारता से जो थोड़ा सा उनके पास था, मेरे साथ साझा किया. हालांकि मैं उनसे अनजान था, मुझे यह भी पता नहीं था कि वे महार, तथाकथित अछूत थे. तब शुरू हुई तीव्र अमीबिक पेचिश जो बार–बार होता था, आधी सदी बाद आज भी मुझे आई.बी.एस. (चिड़चिड़ा आंत्र सिड्रोम) के रूप में पेरशान करती है.'' (पृष्ठ 40, फ्रैक्चर्ड फ्रीडम)

यानी दलित उनकी महानता में चार चाँद लगाए, किंतु दलितों के साथ घुलमिल जाने से क्या खतरे होते हैं, यह वो दिखाना चाहते हैं. यह घोर जातिवादी मानसिकता है. आखिर, कोबाड अपनी औकात पर उतर आये. वो लिखते हैं कि अगर वो महारों के घर खाना नहीं खाए होते तो वे उन्हें जातीय बायस के समझने की संभावना थी. मतलब अपनी महानता के तमग़े को बरकरार रखने के लिए ही वे महारों के साथ बैठकर खाना खाए, न कि उनके साथ घुलमिलकर जाति निर्मूलन के संघर्ष में एकताबद्ध होने. कोबाड भाई! आपको तो महारों ने नहीं बुलाया था कि जाकर उनका उध्दार करें, वे तो यही समझते थे कि एक व्यापक दृष्टिकोण वाले कम्युनिस्ट के साथ कार्य कर रहे हैं, पर 'फ्रैक्चर्ड फ्रीडम' तो कुछ और ही, विशेष सामाजिक तबके के खान–पान के प्रति आपकी नफरत की सूरत दिखा रहा है. इस महान बुद्धिजीवी को दलितों से सीखने के लिए कुछ नहीं मिला है? उन्हें दलितों की बस्ती में अस्वस्थ वातावरण दिखा पर उस स्थिति के पीछे के सामाजिक–आर्थिक कारण नहीं दिखे. उन्हें यह समझना चाहिए कि दलितों के शोषण से प्राप्त अतिरिक्त मूल्य के बल पर उच्च वर्ग का स्वच्छ वातावरण पनपता है और उसी शोषण के कारण दलित बस्तियां गंदी रह जाती हैं. भक्ति आंदोलन के एक संत तुकाराम डिक्लासिफाय होने बाबत ऐसे मूल्य बताते हैं–

''जे का रंजले गांजले त्यासी म्हणे जो आपुले,

तोची साधु ओळखावा देव तेथेची जाणावा''. (भक्ति आंदोलन के संत तुकाराम महाराज का दोहा)

क्रांतिकारी आंदोलन में कोबड की जिस तरह की भूमिका रही, उसी में वह आधार छुपा है जिसने उन्हें डिक्लासीफाय नहीं होने दिया.

आज जब अपने अतीत को लिखे हैं तो उसमें वही लोग याद हैं (या सोच समझकर) जो या तो आंदोलन के बाहर चले गए हैं, लाईन बदल दिए हैं. अपने

करने वाला खतरनाक विचार है. इससे अंततः कुछ नहीं मिलने वाला है. इससे केवल सत्ताधारी वर्ग को फायदा है. कोबाड के निष्कर्ष से निकला रिलेवन्स और रिफ्लेक्शन का सारांश मनोगतवादी, वर्गविलयवादी है, मार्क्सवाद विरोधी है और यह सत्ताधारी वर्ग की सेवा करता है. कुल मिलाकर कोबाड ने खुद लिखित रूप में एक तरह से कह दिया है कि वे अब कम्युनिस्ट नहीं बल्कि आम तौर पर एक आध्यात्मिक इन्सान जो बुढ़ापे में भगवान की पुजा पाठ में लग जाता है, बनकर मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद एवं उस सिद्धांत के मार्गदर्शन में चलने वाले क्रांतिकारी आंदोलन पर अविश्वास पैदा करने वाले प्रतिक्रियावादी की भूमिका निभा रहे हैं.

मार्क्सवाद को सुधारने के नाम पर उसे खारिज करने वालों में कोबाड पहला व्यक्ति नहीं है. दूसरे इंटरनेशनल के समय में बेर्नस्टीन से लेकर फ्रांकफर्ट् स्कूल के कइयों ने ये प्रयोग किए. ऐसे तमाम लोगों को इतिहास के कूड़ेदान में फेंककर मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद अजेय बनकर आगे बढ़ा. कोबाड भी उसी सूची में शरीक हो गए.

दुनिया भर में प्रतिगामियों द्वारा बड़े पैमाने पर यह प्रचार किया जा रहा है कि सिद्धांत के तौर पर मार्क्सवाद–लेनिनवाद अप्रासंगिक बन गए हैं, इस सदी के इतिहास ने यह साबित किया कि साम्यवाद आचरणयोग्य नहीं रह गया है, इतिहास और सिद्धांत का अंत हो गया है (एंड ऑफ हिस्टरी एंड ऑफ आइडियालॉजी). परंतु दूसरी ओर 1989–90 के सोवियत युनियन एवं पूर्वी युरोप के परिणामों को ऐतिहासिक भौतिकवादी दृष्टिकोण से समझने में असमर्थ एवं गहरे संकट के भंवर में फंसे कम्युनिस्ट पार्टियों के नेता और मार्क्सवादी–लेनिनवादी बुद्धिजीवी इन निर्णयों पर पहुंच रहे हैं कि आखिर मार्क्सवाद ही संकट में है और उसे सुधारने की जरूरत है या मार्क्सवाद पूरी तरह गलत है. वेणु जैसे नेता जो कभी सीआरसी नामक एक मार्क्सवादी–लेनिनवादी गुट के नेता थे, तो सर्वहारा अधिनायकत्व पर से विश्वास खोने के साथ शुरू होकर आखिर गांधीवादी अहिंसा सिद्धांत के अनुयायी बन जाने के हद तक अधःपतित हो गए. यहां हास्यास्पद बात यह है कि ये भूतपूर्व मार्क्सवादी बुद्धिजीवी अपने दिमागों में उपजे संकटों को पहचानने से इन्कार करते हुए चिल्ल–पों कर रहे हैं कि मार्क्सवाद एवं समाजवाद में ही संकट है.

दुनिया के कम्युनिस्ट आंदोलन के हर मोड़ पर मार्क्सवाद के नाम पर मार्क्सवादविरोधी सिद्धांत एवं रुझान पैदा होते आए हैं. मुक्त पूंजीवाद के इजारेदारी पूंजीवाद में परिवर्तित होने के साथ ही नए सिद्धांत सामने आए. एड्वर्ड् बेर्नस्टीन, प्लेखनोव, कार्ल काउट्स्की जैसों के जरिए ये सिद्धांत सामने आए. इन सिद्धांतों की आलोचना करते हुए कॉमरेड् लेनिन ने साम्राज्यवादी अवस्था में सटीक सर्वहारा

का है जिन्हें अमानवीय हालत में रखकर अंत में मौत के करीब पहुंचने के बाद ही सशर्त जमानत दी गयी. कई लोगों ने राजनीतिक बंदियों का दर्जा पाने के लिए संघर्ष करते हुए अपने प्राण न्योछावर किए. उक्त मांग को लेकर आज भी जेलों में संघर्ष जारी है. कोबाड के जैसे व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए न सोचते हुए, आज भी कई लोग तकलीफें झेलकर राजनीतिक बंदियों के हित में कार्य कर रहे हैं. कोबाड के 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' का जेल विवरण कहता है कि केवल उन्हीं को टेबल खुर्सी दी गई थी. रेडियो दिया गया, फोन करने की सुविधा दी गई, सेवा करने के लिए सेवादार मिले, हथकड़ी कभी नहीं लगाए, शारीरिक यातनाएं नहीं दी गयी. जेल में 'कास्ट और क्लास अट्रॉसिटी के इस बेहतरीन उदाहरण' को कोबाड चिन्हित नहीं करना चाहते हैं. जहां कहीं भी रहे, हर कम्युनिस्ट का कर्तव्य होता है, अन्याय के खिलाफ संघर्ष करते रहना. वह अपनी परवाह नहीं करता है. उसका जीवन ही दुसरों की तकलिफें दुर करने के लिए समर्पित होता है. कोबाड ने जेल के माफियाओं को दी जानेवाली विशेष सुविधाओं का विरोध नहीं किया बल्कि उनका उपभोग किया. इन माफियाओं को दी जानेवाली विशेष सुविधाओं के कारण आम कैदियों के साथ जो अन्याय होता है उसके बारे में जेल अथॉरिटी को या कोर्ट को दस साल में एक चिट्ठी भी नहीं लिखी. जबकि सभी के लिए सुविधाएं उपलब्ध कराने की मांग को लेकर स्वयं के लिए मंजूर सुविधाओं का बहिष्कार कर आंदोलनों व हड़तालों में शामिल व उनका नेतृत्व करने वाले माओवादी कार्यकर्ताओं व नेताओं की रिकॉर्डों का भरमार है, विभिन्न भारतीय जेलों में.

कश्मीर की आजादी के लिए समर्पित अफजल गुरू जिनके साथ कोबाड ने थर्मास की चाय भी पी, जिनसे रूमी और इस्लाम की तालिम ली, उनकी फांसी का विरोध क्यों नहीं किया? उनकी फांसी के निषेध में जेल के कैदियों को गोलबंद क्यों नहीं किया? कम से कम खुद भी तो भूख हड़ताल कर सकते थे, क्यों नहीं की? इतना तो कर सकते थे ना! कहाँ गए थे, कोबाड के फ्रीडम और मानवता के मूल्य? कहां गए थे जनवादी मूल्य? कहाँ गयी थी, कम्युनिस्ट सक्रियता? यह सब छोड़िए, सारे समाचार तो जेल में उन्हें नियमित मिल रहे थे, फिर भी उन्हें किसानों के आंदोलन नहीं दिखे, तुत्तीकोरिन और हिरो होंन्डा मजदुरों के आंदोलन नहीं दिखे, विस्थापनविरोधी आंदोलन नही दिखें, नोटबंदी, जीएसटी, ई वे बिल नहीं दिखे, आधार की सख्ती नहीं दिखी, निजता को छीनने वाले सरकारी आदेश नहीं दिखे, साथी राजनीतिक बंदीयों को दी गयी प्रताड़ना नहीं दिखी, महिलाओं पर अत्याचार के मामले में देश भर में बार–बार प्रकट व प्रदर्शित गुस्सा नहीं दिखा. इनमें से किसी पर भी दस साल के लंबे जेल जीवन के दौरान कोबाड ने एक शब्द भी नहीं कहा. जनता के लिए लड़ने का जज्बा कहाँ गया? लाखों, करोड़ों

की संपत्ति त्यागकर, संभावित अच्छा केरिअर त्यागकर क्रांति करने के लिए निकले उस कोबाड को अब इतने सालों बाद अपने जीवन के प्रति इतना मोह क्यों हुआ? यहां तक कि उन्होंने जेल में भौतिक सुविधाएं पाने के लिए आंदोलनकारी के मूलभूत मूल्यों को भी धूल में मिला दिया. न केवल बड़े डॉन माफियाओं से सुविधाएं प्राप्त की बल्कि माओवादी पार्टी के और जनता के दुश्मन बने पुलिस एजेंटों जैसे 'टिपीसी' (तृतिय प्रस्तुति कमेटी, झारखंड का एक प्रतिक्रांतिकारी गिरोह) वालों से भी भौतिक सुविधाएं प्राप्त की. इतना ही नहीं, उनको कानूनी मदद् भी दिलवाई और अब किताबों में उनका महिमा मंडन भी कर रहे हैं. केवल महिमा मंडन ही नहीं बल्कि उनके मूल्यों को अच्छे मूल्य के रूप में भी पेश कर रहे हैं. कोबाडजी, क्या ये ही हैं, आपके मूल्यों के प्रोजेक्ट के अच्छे मूल्य?

इस संदर्भ में कॉमरेड् माओ के इस कथन पर ज़रा गौर करें, ''एक कम्युनिस्ट का हृदय विशाल होना चाहिए और उसे निष्ठावान व सक्रिय होना चाहिए, क्रांति के हितों को अपने प्राणों से भी ज्यादा मूल्यवान समझना चाहिए और अपने व्यक्तिगत हितों को क्रांति के हितों के मातहत रखना चाहिए; उसे हर जगह और हमेशा सही सिद्धान्तों पर डटे रहना चाहिए और सभी गलत विचारों और कामों के विरुद्ध अथक संघर्ष चलाना चाहिए ताकि पार्टी का सामूहिक जीवन और अधिक सुदृढ हो तथा पार्टी और आम जनता के बीच की कड़ियां और अधिक मजबूत हो; उसे किसी व्यक्ति विशेष से अधिक पार्टी और आम जनता की चिन्ता होनी चाहिए, और अपने से अधिक दूसरों का ध्यान रखना चाहिए. सिर्फ तभी उसे एक कम्युनिस्ट माना जाएगा.''–माओ, ''उदारतावाद का विरोध करो'' (7 सितम्बर 1937), संकलित रचनाएं (अंग्रेजी संस्करण), ग्रन्थ 2, पृष्ठ 33

कोबाड ने दस साल एक माह भारत के विभिन्न जेलों में बिताए हैं. उम्र के इस पड़ाव में जेल की यातनाएँ बहुत असहनीय होती हैं. बहुत फिक्र थी, पार्टी को उनकी सेहत की. पार्टी ने यथासंभव कोशिश की कि वे जेल में सुरक्षित रहे और उन्हें आवश्यक सुविधाएं मिले. यथाशीघ्र उन्हें बाहर निकाल सके. परंतु बाहर आने के बाद अपनी किताब फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम के एक अध्याय में जेल जीवन के बारे में लिखकर पार्टी की छवि धूमिल करने की जो कोशिश की है उससे कोई भी उनसे नफरत किए बगैर नहीं रह सकते. वो कहते हैं कि उनकी गिरफ्तारी के समय मीडिया ने हव्वा बनाया था पर रिलीज होने पर सायलेंस है. यह कोई अचरज की बात नहीं है. सत्ता ने कोबाड को कैद इसलिए नहीं किया कि वे एक सामाजिक कार्यकर्ता थे बल्कि इसलिए कि उनके विचार और उन विचारों पर चल रहा आंदोलन जिसका वो स्वयं नेतृत्व कर रहे थे, वह उनकी सत्ता के लिए सबसे बड़ा खतरा है. वे जब गिरफ्तार हुए थे, तब माओवादी नेता थे और रिलीज होने

व्यवस्था और जातिप्रथा को जारी रखने के मूल्यों की बात ही करता है. शूद्रों और अतिशूद्रों के लिए वही ब्राम्हणवाद अमानवीय और पाशविक बन गया है. आज वही ब्राम्हणवाद अपने नये अवतार में भारत के शासकों के लिए वैचारिक आधार प्रदान करता है जिसके बल पर सारा शोषण, दमन, अन्याय हो रहा है, और झुठी मुठभेड़ हत्याएँ की जा रही हैं. जिस पंचतंत्र का कोबाड ने अध्ययन किया है और अपनी किताब में उल्लेख किया है, उसके तमाम नैतिक मूल्य तत्कालीन सामंती समाज को बल देने वाले ही थे. जिस ब्राम्हणीय हिन्दुत्व फासीवादी सरकार ने कोबाड को दस साल जेल के सलाखों के पीछे रखा क्या उसी की विचारधारा के सामने यह शरणागति नहीं है?

मानव समाज में राजनीतिक सत्ता के उदय के साथ ही मानव जीवन की क्रियाओं का संबध राजनीति से जूड़ गया है. आज की सत्ता तो और भी केन्द्रीकृत और गहरी होते हुए पूरे विश्व के मानव समाज को, एक–एक इंसान की क्रियाओं को अपने गिरफ्त में ले चुकी है. दुनिया के तीन बुनियादी अंतरविरोध – साम्राज्यवाद और उत्पीड़ित राष्ट्रों व जनता के बीच; पूंजीवादी देशों में पूंजीपति वर्ग और मजदूर वर्ग के बीच; साम्राज्यवादियों के बीच के आपसी अंतरविरोध जिनमें से पहला पधान है, दिन–ब–दिन तीखे होते जा रहे हैं. साम्राज्यवादियों के बीच मुनाफे की होड़ ने मानवीयता तो क्या प्रकृति का तानाबाना ही बिगाड़ दिया है. व्यवस्था परिवर्तन की मांग अब अस्तित्व की जरूरत बन गई है. इतनी भयावह और संकट की परिस्थिति में पूंजीवाद ने मानव को लाकर खड़ा कर दिया है. इस पूरी भौतिक वास्तविकता के बदले बिना आजादी और सुख कैसे प्राप्त हो सकता है? अन्न और पेय जल के लिए दुनिया की बड़ी आबादी तड़प रही है और माओवादी नेता होने का तमगा उतारकर फेंकने के चक्कर में 'पोंगा पंडित' बने कोबाड अच्छे मूल्य को मुलभूत कारण बता रहे हैं. पेट भर खाने वाले भी जब उनके आर्थिक हित टकराते हैं तो आपस के व्यवहार के अच्छे मूल्यों को ताक पर रखकर एक दुसरे का गला काटने पर उतर आते हैं. दुनिया ने साम्राज्यवादीयों के दो विश्व युध्द देखे है जिनमें करोड़ों लोग मारे गए थे और तब से आज तक उन्हीं के द्वारा प्रायोजित युध्दों में उससे भी ज्यादा लोग मारे गए और आज भी मारे जा रहे हैं. क्या इन अंतर्विरोधों को आध्यात्म के प्रवचनों से हल किया जा सकता है? इसके हल के बिना आजादी, खुशी कैसे प्राप्त होगी? कोबाड द्वारा पेश किए गए आध्यात्म के आधारों वाले फ्रीडम, युनिवर्सल हैपिनेस का पुलिंदा और कुछ नहीं बल्कि खयाली पुलाव है. इसका कोई भौतिक आधार नहीं है. यह धरातल पर उतर ही नहीं सकता. यह कोरा पंडितायी लेखन केवल झुठा सपना दिखाता है. शोषितों को उनके शोषण और दुखों के असली कारणों से भटकाता है. यह शोषितों को संघर्ष करने से मना

जो कम्युनिस्ट परियोजना से अधिक न्यायसंगत और टिकाऊ हो. फिर भी, दुनिया भर में इसकी विफलताओं के कारण कुछ पुनर्विचार की आवश्यकता है. मुझे लगा कि इसमें कोई शक नहीं है कि बीजों को बचाए रखना है, लेकिन यह सुनिश्चित करना होगा कि फूल मुरझाए नहीं और फल खट्टे न हों. उसके लिए, शायद बीजों को पहले की तुलना में बहुत अधिक देखभाल के साथ पोषित करने की आवश्यकता है. मैंने निष्कर्ष निकाला कि मुख्य रूप से, पौधों की देखभाल की जानी चाहिए: पहला, आजाद माहौल में. दूसरा, वह नए मूल्यों के समूह से निर्मित हो जैसा कि अनुराधा—मॉडल द्वारा दर्शाया गया है. तीसरा, इसका लक्ष्य सार्वभौमिक खुशी होनी चाहिए. वहां मैदान में बैठकर मैंने सोचा कि बदलाव के किसी भी परियोजना — कोई भी विकल्प में जीवन के इन तीन पहलुओं को बुनना चाहिए, जिसकी रूपरेखा मैं नीचे बताऊंगा.'' ..... (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 198)

उन्होंने आजादी की खोज के लिए भौतिक नियमों के बजाय आध्यात्म का सहारा लिया है. वे कह रहे हैं कि सारे आध्यात्मिक दार्शनिक, महात्मा आजादी की खोज में ही हैं. एरिस्टॉटल का संदर्भ देते हुए कह रहे हैं कि फ्रीडम और हैपिनेस व्यक्ति के मूल्यों से संबध रखते हैं, इसलिए महात्माओं, आध्यात्मिक दार्शनिकों के विचारों की यह परंपरा को हमें जारी रखना चाहिए. इतना ही नहीं, प्रसिध्द दार्शनिक और कवि इक़बाल का वक्तव्य महत्व के साथ कोट कर रहे हैं कि, समाजवाद + भगवान = इस्लाम. उन्होंने जेल से छह लेख (क्वश्चन ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पिपल्स इमैन्सिपेशन) लिखे थे जिनका सारांश आध्यात्मिकवाद ही है.

भक्ति परंपरा से भी सीखने की बात करने वाले कोबाड ब्राम्हणवाद, जातीय बंधनों को तोड़ने और सत्ता को चैलेंज करने के उसके मुख्य पहलू जो तत्कालीन वर्ग संघर्ष का ही एक रूप है, की चर्चा नहीं करते पर उसके समाज सुधार के डाइल्यूट पहलू को जारी रखने की बात कर रहे हैं. यानी उत्पादन प्रणाली में चलने वाले संघर्ष, उत्पादन संबधों में बदलाव के लिए तड़पने वाली प्रणाली की आवश्यकता और उससे होने वाली ऊपरी संरचनाओं की प्रक्रियाओं को नजरअंदाज कर रहे हैं. यह ऐतिहासिक भौतिकवादी अवधारणा के खिलाफ है.

यह कुल मिलाकर मार्क्सवाद का निषेध करने का प्रयास है. वे सुख की कल्पना तो करते हैं पर दुख क्यों है, इसके कारणों की चर्चा नहीं करते. उन कारणों को दुर करने के उपायों की चर्चा नहीं करते. सदियों से शोषक—शासक वर्गों द्वारा पोषित बुद्धिजीवियों की विचारधारा की एक खासियत रही है. वे कथनी में खुब अच्छा बोलते हैं पर करनी में उतने ही घोर अन्यायी रहते हैं. दिखावे में अच्छा रहते हैं, आचरण में उतने ही बुरे रहते हैं. भारत में तो ब्राम्हणवादी विचारधारा जिसका आधार ही आध्यात्म है वह भी अच्छे मूल्यों की बात करता है पर वर्ण

के समय उन्होंने अपना क्रांतिकारीपन त्याग दिया है. यह जब राज्यसत्ता को यकीन हो गया है तब कोबाड का हव्वा बनाकर उन्हें कोई खास राजनीतिक लाभ नहीं मिलता और रही माओवादियों के विरोध में उन्हें इस्तेमाल करने की बात वह तो वे स्वयं जेल से आर्टीकल लिखकर और अभी किताब लिखकर कर ही रहे हैं. अब तो शासक वर्ग खुशी जाहिर कर रहे हैं और फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम को व्यापक प्रचार दिलाने में लगे हैं. इतना ही नहीं, कॉरपोरेट मीडिया कोबाड के साक्षात्कारों के जरिए माओवाद के खिलाफ हौआ बनाने की नाकाम कोशिश में लगा है.

कोबाड जिस 'हैपीनेस' की चाहत रखते हैं, वह तो वर्गसंघर्ष में सर्वहारा के नेतृत्व में जीत के जरिए सत्ता हासिल किए बगैर प्राप्त होनेवाली नहीं है. ठीक कहा कोबाड ने कि परिवर्तन लाने वालों को पहले खुद में अच्छे मूल्य निर्माण करना चाहिए. मूल्य की चर्चा तो आगे करेंगे. पहले देखते हैं, इस क्रांतिकारी ने अथवा समाजवादी ने अथवा समाज सेवक ने जेल में किन मूल्यों का पालन किया. उन्होंने दिल्ली, झारखंड़ और गुजरात में माफिया डॉन के नेटवर्क से खान पान और अन्य सुविधा प्राप्त की. इसमें उन्हें कोई शर्म महसूस नहीं हुई. इतना ही नहीं, बल्कि उनमें सामाजिक मूल्य हैं, यह दर्शाते हुए उन्हें महिमामंडित भी किया है. झारखंड के जेलों में उन टीपीएफ वालों जो जनविरोधी हैं, गद्दार बनकर प्रतिक्रांतिकारी गिरोह बनाये हैं, से सेवा ली. एक तरफ झारखंड के जेलों का यह विवरण देते हैं कि वहाँ कुपन के बजाय कैश सिस्टम चलता है और यह पूरा माफियाओं के हाथ में होता है. ऐसी आलोचना भी रखते हैं और उन्हीं माफिया सरदारों से खुद सहूलियतें भी लेते हैं. गद्दार टीपीएफ वालों को महिमामंडित करते हैं, उनकी मदद् करने अपने वकीलों को कहते हैं. वो अब मूल्यों का पाठ पढ़ा रहे हैं. हर कम्युनिस्ट व्यवस्था परिवर्तन के लिए लड़ता है. जेल में क्रांतिकारीयों, कम्युनिस्टों की व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष की परंपरा रही है. बड़े नेता होने के बावजूद (कम से कम कम्युनिस्ट) कोबाड ने चंद सुविधाओं के लिए शर्मनाक तरीके से संघर्ष की परंपराओं को रौंद डाला और एक भद्दा और घटिया उदाहरण पेश किया. पुरे दस साल में एक बार भी अन्य राजनीतिक बंदियों के लिए आवाज नहीं उठाई. जेल व्यवस्था के खिलाफ अपने खुद के लिए उन्होंने एक बार भूख हड़ताल की. पर अन्य के लिए एक बार भी नहीं. दस साल में देश और दुनिया में हो रही घटनाओं पर एक बार भी मत व्यक्त नहीं किया. इस राजनीतिक खामोशी का राज क्या है? जाहिर है, खुद के लिए सुविधा प्राप्त करने के ऐवज में यह चुप्पी है. माफियाओं और जेल अथॉरिटी के साथ यह सेटिलमेंट कौनसे मूल्य दर्शाते हैं? बुर्जुवा नामचीन सेटलरों से दोस्ती और मुलाकातों का रहस्य क्या है? जेल के इस चाप्टर में जितना हो सके पार्टी और आंदोलन को बेइज्जत करने की कोशिश की

और गद्दारों और माफियाओं को महिमामंडित किया. इस चाप्टर में कोबाड पुरी तरह बेनकाब हो गए हैं, वह किसी भी कोने से कम्युनिस्ट तो क्या एक साधारण आदर्शवादी की हैसियत भी खो बैठे हैं.

क्रांति कोई नौकरी या पार्ट टाईम जॉब नहीं कि सेवानिवृत्ति की उम्र में ग्रैच्युटी लेकर नाती, पोतियों के साथ आराम से समय बितायें. कॉमरेड् अनुराधा को यह मंजूर नहीं था. सुविधापरस्त और चमड़ी बचाऊ दृष्टिकोण वालों से वह घृणा करती थी. सच्चे कम्युनिस्टों को तकलीफें और मृत्यु भय विचलित नहीं करते क्योंकि वे जो रास्ता चुने रहते हैं, वह वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर सोच–समझकर, परखा हुआ रास्ता रहता है, इसमें उनकी इच्छा भी शामिल रहती है. क्रांतिकारियों के जीवन में जेल की संभावनाएँ हर पल बनी रहती हैं. जेल निश्चित ही व्यक्ति की परीक्षा की पराकाष्ठाओं में से एक होती है. उसमें भी यदि टॉर्चर किया गया हो और न्यूनतम मानवीय सुविधाएं भी प्रदान नहीं की गयी हों तो वह अमानवीय बन जाता है. लेकिन पूंजीवाद ने तमाम शोषित जनता के लिए पूरी धरती को ही पाशविक बना दिया है. जनता की खुशहाली के लिए ही क्रांतिकारी स्वेच्छा से इस पाशविक सत्ता के खिलाफ भिड़ते हैं, उस हेतु आवश्यक कठिन रास्ता चुनते हैं. 'आव्हान' द्वारा गाए जाने वाला एक और प्रचलित गीत–

साम्यवादी हैं हम मेहनतकश हैं,
मार्क्सवादी हैं हम लेनिनवादी हैं
है अपना सिध्दान्त ना माने वेदांत
घुसखोरी को न झुके, मन को न धोखा देते
अन्याय का कर सामना, न्याय को हम पूजते
हर अड़चन लांघकर, कार्य अपना साधते......

मूल्यों के संदर्भ में कोबाड ने माओ की यह शिक्षा भुला दी– ''एक कम्युनिस्ट को किसी भी समय और किसी भी परिस्थिति में अपने निजी हितों को प्रथम स्थान नहीं देना चाहिए; उसे इन्हें अपने राष्ट्र और आम जनता के हितों के मातहत रखना चाहिए. इसलिए स्वार्थ, काम में ढिलाई, भ्रष्टाचार, मशहूरी की ख्वाहिश इत्यादि प्रवृत्तियां अत्यन्त घृणास्पद हैं, जबकि निस्वार्थ, भरपूर शक्ति से काम करना, जनता के कार्य में तन–मन से जूट जाना और चुपचाप कठोर परिश्रम करते रहना, ये ऐसी भावनाएं हैं जो इज्जत पाने लायक हैं.'' (माओ, 'राष्ट्रीय युद्ध में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की भुमिका', अक्टूम्बर 1938, संकलित रचनाएं, अंग्रेजी संस्करण, ग्रन्थ 2, पृष्ठ 198)

कि केवल उनको प्यार और ममता की देवी बनाकर प्रचार करना. भारत के क्रांतिकारी आंदोलन में हजारों नेत्रियाँ जो शहीद हुई हैं, वे सभी बहुमूल्य हैं. उन सभी ने उच्च कोटि के मूल्यों को अपनाते हुए अपना सर्वोच्च योगदान शोषित जनता के हित में दिया. उन्होने हमेशा रास्तों के कांटों को साफ करने की कोशिश की. बीच रास्ते में अपने लक्ष्य को छोड़कर मुँह नहीं मोड़ा. कॉमरेड् अनुराधा पार्टी की नेत्री थी, कोबाड की संपत्ति नहीं. वास्तव में जब कोबाड पार्टी, नेतृत्व, आंदोलन की जिम्मेदारी का निषेध किया तब ही कॉमरेड् अनुराधा के साथ के रिश्ते की बुनियाद भी कोबाड ने खो दिया. उन्हें कॉमरेड् अनुराधा के साथ अपने रिश्तों और व्यवहार का इजहार करके चर्चा में घसीटना नहीं चाहिए. अनुराधा को क्रांतिकारी अनुराधा ही रहने दिया जाए. उन्हें आध्यात्मिक मूल्यों की देवी बनाकर अपने भटके हुए अधकचरे विचारों की चर्चा की वेदी पर दोबारा बलि चढ़ाने के कोबाड की कोशिश का हर तरफ से विरोध होना चाहिए. यह उनका अवमूल्यन होगा. उन्होने छात्र, दलितों, आदिवासियों, मजदूरों, बुध्दिजीवीयों, महिलाओं में जो कार्य किए हैं, वो सब नवजनवादी क्रांति को सफल करने के उद्देश्य से जनता को तैयार करने के लिए ही था. उनके कार्य को मात्र सोशल एक्टिविस्ट या ट्रेड युनियनिस्ट बताकर सुधारवाद के चौखट में फिट करने की कोशिश बंद होनी चाहिए.

कोबाडजी, कॉमरेड् अनुराधा के उच्च मूल्यों की आड़ में अपने को महान बनाए रखने के कुटिल इरादे के तहत क्रांतिकारी नेता के आभामंडल और रिश्ते को बैसाखी की तरह इस्तेमाल करने की चालबाजी बंद कीजिए.

रिफ्लेक्शन अॅन्ड रिलेवन्स (Reflections And Relevance) – एक प्रतिक्रियावादी एवं प्रतिक्रांतिकारी सिद्धांत के सिवाय और कुछ नहीं:

कोबाड ने कम्युनिस्ट एक्टिविस्ट के रूप में अपने 4 दशकों के कार्य के सारांश के रूप में जो प्रतिबिंबन और प्रासंगिक विचार निकाले हैं उसका यथार्थ यही है कि 'आजादी की रट लगाओ और शासक वर्गों की सेवा व गुलामी करो.' उन्होंने जो विचार व्यक्त किए, वो इस प्रकार हैं.

''प्रासंगिकता के प्रश्न पर यह सवाल उठा कि क्या साम्यवादी परियोजना समाज की बुराइयों को दूर करने के लिए प्रासंगिक थी. .... इसमें कोई संदेह नहीं है कि तत्काल परिवर्तन की आवश्यकता है; लेकिन क्षितिज पर कोई विकल्प दिखाई नहीं दे रहा है. साथ ही, मुख्य समाजवादी राज्यों के पूर्व दशा में लौट जाने और दुनिया भर में प्रमुख समाजवादी/कम्युनिस्ट आंदोलनों के अधर में चले जाने के कारण बीसवी शताब्दी में साम्यवाद ने दुनिया को जो आशा दी थी, वह अब मौजूद नहीं रही है. फिर विकल्प क्या है? जेल–3 में पेड़ों के बीच मैदान में बैठकर मैं सोचने लगा कि आज तक ऐसी कोई अन्य आर्थिक प्रणाली सामने नहीं आई है

''वर्ग संघर्ष की आग में तपने से ही कोई कम्युनिस्ट शुद्ध सोना बन सकता है.'' (कामरेड चारू मजूमदार, संशोधनवाद से लड़कर किसान संघर्ष को आगे बढ़ाओ. 1966)

कॉमरेड् अनुराधा सतत् प्रत्यक्ष वर्गसंघर्ष में रही, सड़कों पर जनता के साथ रैलियों में नारे लगाते हुए, कारखानों के गेटों पर भाषण देते हुए, सरकारी दफ्तरों के सामने जनता को लेकर जुझते हुए, बुध्दिजीवियों में वर्गदृष्टि से ध्रुवीकरण करते हुए, छात्रों को क्रांति के लिए प्रेरित करते हुए, महिलाओं को आत्मसम्मान के साथ खड़ा रहने की हिम्मत देते हुए, वर्ग संघर्ष में जनता के बीच पानी में मछली की तरह रहती थी. फैक्टरि मालिकों के गुंडों ने उन्हें अगुवाकर रस्सी से बांधकर रखा था, फिर भी वह न डरी न झुकी. जनता के साथ जीवंत संबध बनाए रखी थी. सिध्दान्त पर अड़िग रहते हुए उन्होंने कार्य किया. प्रत्यक्ष जनयुध्द में रहकर अनुभव हासिल की थी. इसलिए स्वाभाविक ही वर्गयुध्द की यह प्रक्रिया उच्च मूल्यों को व्यक्ति में गढ़ती है. उनको आध्यात्मिक मूल्यों की देवी बनाकर उनका अपमान न किया जाए. ऐसा करके भारत के क्रांतिकारी आंदोलन में उनके वास्तविक योगदान का अवमूल्यन कर रहे हैं. कॉमरेड् अनुराधा हमेशा साथी महिला कामरेडों और उत्पीड़ित महिलाओं से मूल्य आत्मसात करते हुए उनसे सीखती रही. वे अपने आपको सर्वोपरी कभी नहीं समझी थी. वह देशभर के महिला आंदोलन एवं संगठन को मार्गदर्शन देने की कमेटी की ओर से दी गई जिम्मेदारी का निर्वाहन कर रही थी. फील्ड अनुभव के लिए पार्टी द्वारा दिए गए अवसर का बखूबी उपयोग करते हुए उन्होंने दंडकारण्य गोरिल्ला जोन के बस्तर डिविजन में वहां की डिविजनल कमेटी सदस्या की हैसियत से 1997 से 1999 तक काम किया. इस दौरान कॉमरेड् अनुराधा गोरिल्ला जीवन की कठिनाइयों के अनुरूप स्वयं को डालते हुए बस्तर की आदिवासी अवाम के साथ न केवल घुलमिल गयी थी, बल्कि महिला समस्याओं का गहराई से अध्ययन कर उन्होंने अच्छी–खासी समझ बना ली थी. इस सच्चाई पर परदा डालते हुए कोबाड यह कह रहे हैं कि अनुराधा शोध कार्य के लिए बस्तर गयी थी. बाद में वे महाराष्ट्र राज्य कमेटी की सदस्या बन गयी थी और जनवरी, 2007 में संपन्न एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस में केंद्रीय कमेटी सदस्या चुनी गयी थी.

पार्टी और जनता में शहीद क्रांतिकारियों के प्रति प्रगाढ़ आदर और सम्मान की भावना रहती है. दरअसल ये उनके आशय को पूरा करने के दृढ़संकल्प में व्यक्त होते हैं. क्रांतिकारी जनता एवं कार्यकर्ता अपने आचरण में कॉमरेड् अनुराधा के आशय को पूरा करने में लगे हुए हैं. यही वास्तविक प्यार, लगाव, समर्पण, समर्थन, आदर और सम्मान और शहीदों के मूल्यों को अपनाने का वास्तविक तरीका है न

पुलिस के सुर में सुर मिलाते हुए पार्टी पर कीचड़ उछालना

झारखंड के जेलों में कुपन सिस्टम के अमल न होने के बारे में बताते हुए कोबाड माओवादियों को भी जेल माफिया की कतार में ला खड़ा किया. ''अन्य सभी जेलों में कूपन सिस्टम था लेकिन झारखंड के जेलें केवल नकदी पर चलते थे. जेल में बड़ी संख्या में मौजूद 'माओवादी' इस माफिया नियंत्रण का मुकाबला करने के बजाय, अक्सर इसका एक हिस्सा बनते थे. कभी–कभी इसका नेतृत्व भी करते थे.'' .... ''पता चला कि अधिकांश माफिया स्वयं नक्सली कैदी थे.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 117)

जेल में मिले बाजीराम महतो जो पार्टी छोड़कर चला गया था, के बयान के आधार पर ऐसा लिखा कि मानो पार्टी में पूरा वैसा ही चल रहा हो. फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम बाजीराम पर... ''उन्होंने लगभग 2008 में आंदोलन छोड़ दिया था और अपना खुद का गिरोह बना लिया था. उन्होंने कई अन्य लोगों की तरह, माओवादियों को इस शिकायत के साथ छोड़ दिया कि नेतृत्व बहुत नौकरशाही और असहिष्णु हो गया था. अंतिम तिनका जिसने उनकी आस्था को तोड़ दिया था, वह यह कि जो रुपए उन्होंने स्वयं इकट्ठे किए और बिना एक पैसा लिए, बोरों में भरकर नेतृत्व को दिया, गांव में किसी भी विकास कार्य में उपयोग नहीं किया गया था. इससे भी बुरी बात यह थी कि जब उन्हें (या उनके परिवार को) जरूरत थी, तब उन्हें कुछ भी नहीं दिया गया. तब भी जब उन्हें पुलिस द्वारा तोड़ी गई झोपड़ियों के पुनर्निर्माण के लिए पैसों की आवश्यकता थी. उसने खुद अपनी बहन की शादी के लिए कुछ पैसे मांगे थे जिसे अस्वीकार कर दिया गया था.'' .....(फ्रैक्चर फ्रीडम, पृष्ठ 163)

कोबाड के फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम के अर्धसत्यों व असत्यों को जानने इन सच्चाइयों पर नजर डालें.

कोबाड की किताब 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' के, अंडर टेल ऑफ टु एइड्स नामक सब चाप्टर में बाजीराम महतो नाम के जिस व्यक्ति का जिक्र किया गया है उसके अपने बयान के अनुसार उसने माओवादी कम्युनिस्ट केन्द्र के सांस्कृतिक फ्रंट झारखण्ड एभेन में 1995 से लेकर 2002 तक काम किया था. फिर 2006 में एरिया कमेटी का सहायक कमाण्डर बना. फिर बाद में 2008 में प्लाटून के सेक्सन कमाण्डर बना. यह कहानी सरासर झूठ है. हां, बाजीराम महतो जरूर हमारे दस्ते में 2007 में आया था और 5–6 महीना रहकर ही भाग गया था. वह एक अवारा व लम्पट किस्म का व्यक्ति था. पार्टी में जब वह आया तो अपना वर्ग चरित्र के साथ आया था. पार्टी में आने के बाद अनुशासन के तहत रहने के लिए जब उसकी आलोचना की जाती थी, तो तुरंत गुस्से में आ जाता था. फिर एक दिन एक

महिला साथी के साथ अश्लील व्यवहार किया जिसके लिए साथी लोगों द्वारा उसकी कड़ी आलोचना की गयी. यही सब कारण है जिसके चलते बाजीराम 5–6 महीना पार्टी में रहकर, अंततः पार्टी अनुशासन का पालन न कर सकने के चलते पार्टी से भाग खड़ा हुआ और एक सशस्त्र गुण्डा गिरोह का निर्माण कर लिया.

फिर, बाजीराम महतो के बयानानुसार उसने पार्टी में लेवी का एक बोरा रूपया जमा किया, जो बिलकुल बेबुनियाद है. क्योंकि पार्टी फण्ड संग्रह के सवाल को लेकर हमारी पार्टी की ''वित्तीय पॉलिसी'' दस्तावेज है जिसमें स्पष्ट कहा गया है कि लेवी जोनल/डिविजनल कमेटी ही उठा सकती है. तब अगर हम मान भी लेते हैं कि बाजीराम एरिया कमेटी का सहायक कमाण्डर था, तो उसके द्वारा लेवी उठाने का सवाल ही नहीं है. वह कैसे लेवी उठा सकता था? यह तो जोनल कमेटी का सदस्य था ही नहीं! हमारे पार्टी संविधन में लिखा हुआ है कि मजदूर वर्ग और गरीब भूमिहीन किसान वर्ग से आए हुए कार्यकर्ताओं को 6 महीने के बाद ही पार्टी सदस्यता दी जाती है. तब बाजीराम 5–6 महीने में ही एरिया कमेटी का सहायक कमाण्डर कैसे बन गया? अभी पार्टी सदस्यता पाने के तय मानदण्ड के करीब भी नहीं पहुंचा था.

फिर, कोबाड ने अपनी किताब में लिखा है कि हजारीबाग सेन्ट्रल जेल में बंद आंदोलन के सभी नेताओं (यहां तक कि निचली कतारों के नेता भी) की पहचान धन कुबेरों की है.

कोबाड द्वारा यह कहा जाना कि माओवादी नेता लोग धन कुबेर हैं, ये बातें बिलकुल तथ्यहीन हैं. यह बिलकुल केन्द्र व विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा माओवादी आंदोलन को बदनाम करने के दुष्प्रचार से मिलता है. जिस तरह से सरकार दुष्प्रचार करती है कि माओवादी नेता लोग अपने बाल–बच्चों को विदेशों में पढ़ाते हैं, बड़े–बड़े शहरों में इन लोगों के फ्लेट हैं, करोड़ों रूपये इन लोगों के बैंक खातों में हैं आदि, आदि. कोबाड ने अपनी किताब में यह नहीं बताया कि फलां–फलां माओवादी नेता धन कुबेर हैं. फिर, कोबाड आगे लिखते हैं, ''मेरे पास बहुत सारा पैसा है, यह सोचकर माओवादी नेता लोग हमारे पास हजारीबाग सेंट्रल जेल में आये थे. लेकिन जब उन लोगों को पता चला कि हमारे पास पैसा नहीं है, ये लोग हमसे दूरी बना लिये.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम)

अब सवाल उठता है कि यदि माओवादी नेता लोग खुद धन कुबेर थे तो कोबाड के पास पैसा पाने की आशा से क्यों जाते. कोबाड की बात में ही विरोधाभास नजर आता है.

यह सर्वविदित है कि जहां कहीं भी सरकार की गलत नीतियों के खिलाफ आन्दोलन के रास्ते में जनता आगे बढ़ती है तो हजारों निर्दोष जनता को झुठे

कॉमरेड अनुराधा भारतीय क्रांति का चमकता तारा बनकर सदा प्रकाशमान रहेगी

मूल्यों की चर्चा के प्रोजेक्ट में उन्होंने अनुराधा को सामने रखकर बंदुक चलाई है. यह एक चालबाजीपूर्ण अवसरवादी तरिका है. कोबाड जानते हैं कि माओवादी पार्टी और उसके प्रभाव में जो जनता आंदोलन करती है उनके दिलों में क्रांतिकारी आंदोलन में शहीद हुए कॉमेरेडों के प्रति कितना सम्मान और आत्मीयता रहती है. हम अमर शहीद कॉमरेड् अनुराधा के बारे में कोई चर्चा नहीं करना चाहते है. लेकिन कोई उनका अवमूल्यन करें यह भी बर्दाश्त नहीं. क्योंकि उन्होंने भारत की क्रांति के लिए अपना सर्वोच्च योगदान दिया है. वो भारतीय क्रांति की नेता थी. वो भाकपा

ध(माओवादी) की सेन्ट्रल कमेटी की सदस्या थी. अपने अंतिम सांस तक भारत की नवजनवादी क्रांति के लिए दीर्घकालीन जनयुध्द की लाईन पर समर्पित रही. उन्होंने कभी मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद से मुँह नहीं मोडा. जितना संभव था, उन्होंने भारतीय परिस्थिती में इसे लागु करने में अपनी क्षमता और सृजनात्मकता का उपयोग किया. वर्ग संघर्ष की भट्टी में तपकर वह कुंदन बनी थी. वर्गसंघर्ष में भूमिका निभाने के लिए बहुत से मूल्यों की आवश्यकता होती है और ये वर्गीय दृष्टि से ही अमल में आते हैं. जिस संकीर्ण दायरे में कोबाड ने कॉमरेड् अनुराधा को समेटा है वह उनके व्यक्तित्व और आभामंडल को संपूर्ण रेखांकित नहीं करता बल्कि कम करके आंकता है. बेशक कॉमरेड् अनुराधा अग्रणी पंक्ति में थी और उनके जिन मूल्यों की बात कोबाड ने रखी है, वह दरअसल भाकपा (माओवादी) के सर्वसाधारण आचरण का द्योतक है. कॉमरेड् अनुराधा इससे कहीं आगे बढ़कर उँचाईयों को प्राप्त की थी. हां, पार्टी में कुछ अपवाद तो रहते हैं, कुछ 'चाणक्य सिन्ड्रोम', 'ब्लैक ऐन्ड व्हाईट कैटिगॅरि '(कोबाड कैटिगॅरि) के पनपते रहते हैं. आंदोलन के आगे बढ़ने के दौर में ये ऐसे इतराते हैं मानो जो कुछ भी हो रहा है वह उनके ही कारण है. पर जैसे ही टेंपॅररि सेटबैक की परिस्थिति आ जाती है वह जिम्मेदारी से भागते हैं. ये वर्ग संघर्ष की तीव्रता के साथ अथवा दुश्मन के साथ सीधा पाला पड़ने (गिरफ्तारी, जेल, मुठभेड़) के बाद एक्सपोज हो जाते हैं. कॉमरेड् अनुराधा को बाल हास्य, चेहरे पर आंतरिक भाव दिखाना, स्पष्ट बोलना आदि सीमित आधारों में समेटकर, मूल्य के मॉडल के रूप में पेश कर, वास्तव में उनका अवमूल्यन कर रहे हैं. मूल्य आकाश से नहीं टपकते हैं. व्यक्ति अपने कार्यों के व्दारा उन्हें अर्जित करता है. वर्ग संघर्ष की आंच में तपकर ही कोई अच्छा कम्युनिस्ट बन सकता है. उसकी कमी या अभाव से कोबाड का पतन हो गया जबकि उसमें तपकर कॉमरेड् अनुराधा मजबूत हुई.

लाना संभव नहीं है. इस रिपोर्ट् पर आधारित होकर कोबाड पूरी तरह गलत व मनोगतवादी निर्णय पर पहुंचकर पार्टी नेतृत्व में जारी आंदोलन पर हमला कर रहे हैं. कोबाड यह कह रहे हैं कि जिस तरह नारायणपटना में पार्टी जनता से दूर हो गयी ठीक उसी तरह झारखंड व तेलंगाना जेलों से संग्रहित रिपोर्टों के जरिए भी यही बात साबित हो रही है, इस उदाहरण की पुनरावृत्ति सभी जगह हो रही है. उपरोक्त सच्चाइयों व कोबाड के निष्कर्षों से उनकी बेमानी स्वयमेव साबित होती है कि उन्होंने पार्टी कमेटियों की ओर से अधिकृत जानकारी या रिपोर्ट् हासिल करने की कभी कोशिश ही नहीं की. यह ठीक उसी तरह का दुष्प्रचार है जैसे आम तौर पर पुलिस करती है.

''दमन के कारण जन आंदोलन के पतन के साथ, या तो पूरा काम ध्वस्त हो जाता है या दस्ते/पार्टी जनता से दूर हो जाते हैं या घूमंतू विद्रोहियों में बदल जाते हैं जो अपने भोजन और अस्तित्व के लिए ठेकेदारों से पैसा इकट्ठा करते हैं.'' (फ्रैक्चर्ड फ्रीडम, 157 पेज)

यह पार्टी की छवि को धूमिल करने की अत्यंत नीच हरकत है. यह जनता की मुक्ति के लिए अत्यंत कठिन जिंदगी को स्वीकारकर, जान की बाजी लगाते हुए लड़ने वाले जनयोध्दाओं का सरासर अपमान है. यह उन हजारों शहीदों जिन्होंने जनयुध्द में अपनी जान की कुर्बानी दी है, का अपमान है. यह चालबाजीपूर्ण व मौकापरस्त बयान है, जिसका हर जगह से खंडन होना जरूरी है.

देश में नक्सलबाड़ी के समय से क्रांतिकारी आंदोलन पर बेरोकटोक दमन जारी है. विगत 50 सालों से भी ज्यादा समय से पार्टी एवं क्रांतिकारी आंदोलन देश में शोषक–शासक वर्गों का मुकाबला करते आ रहा है. 20 हजार से भी ज्यादा पार्टी नेताओं, कार्यकर्ताओं एवं क्रांतिकारी जनता ने अपने अनमोल प्राण न्योछावर किए. फिर भी क्रांतिकारी आंदोलन लहर–दर–लहर विस्तारित होते हुए साम्राज्यवादियों, देश के दलाल शासक वर्गों को चुनौती दे रहा है. भारत के क्रांतिकारी आंदोलन के प्रति दुनिया भर की सहोदर माओवादी पार्टियों से रोज–ब–रोज मदद् प्राप्त हो रही है. चाहे कोई भी मामला क्यों न हो, समग्र अवलोकन के बगैर, सतही तौर पर देखकर ही कोबाड इस तरह के गलत विचार बना लिए. चूंकि उनमें यह रुझान प्रारंभ से ही था, इसलिए वे यह नहीं समझ सके कि द्वंद्वात्मक व ऐतिहासिक भौतिकवादी नियम के मुताबिक क्रांतिकारी आंदोलन का प्रस्थान आगे बढ़ने, पीछे हटने; उतार–चढाव; मोड़–घुमाव; ज्वार–भाटा से होते हुए ही आगे बढ़ता है. कठमुल्लावादी सोच के कारण आंदोलन में कई संदर्भों में वे ढुलमुलपन का शिकार हो गए. इस तरह वे आज आंदोलन से दूर हो गए.

मुकदमों में फंसाकर जेलों में डाल दिया जाता है. चाहे यह आंदोलन जल–जंगल–जमीन, इज्जत बचाने की हो, चाहे राष्ट्रीय सत्ताओं का आंदोलन हो या माओवादी पार्टी के नेतृत्व में चल रहे मौजूदा समाज परिर्वतन का संघर्ष हो. सभी में हजारों निर्दोष जनता को झूठे मुकदमों में फंसाकर जेलों में डाल दिया जाता है और झूठी गवाही दिलाकर लोगों को सजाएं भी दी जाती हैं. ऐसे ही मुकदमों में हजारों जनता माओवादी होने के आरोप में जेलों में बंद हैं व उनमें बहुतों को फांसी व आजीवन कारावास तक की सजाएं हुई हैं. ऐसे में अगर किसी को माओवादी केसों में सजा हो जाती है तो वह आदमी माओवादी नेता तो नहीं हो जाता है ना?

हमारे देश में भ्रष्टाचार का क्या आलम है, यह किसी से छुपा नहीं है. बिहार–झारखण्ड के जेलों में भ्रष्टाचार का क्या आलम है, यह पत्रकार रूपेश कुमार सिंह की जेल डायरी 'कैदखाने का आइना' किताब में पढ़कर आसानी से समझा जा सकता है. जेल में गेट से शुरू कर गुमटी, वार्ड, पाकशाला, अस्पताल सभी जगहों पर भ्रष्टाचार का नंगा नाच होता है. ऐसे में अगर हजारीबाग जेल में झूठे माओवादी मुकदमों में फंसाकर जिन्हें सजा दी गयी हो और वो लोग अगर जेल के भ्रष्टाचार में लिप्त हैं व सहयोग या हिस्सेदारी करते हैं, तो इन लोगों को माओवादी नेता के रूप में चिन्हित करना क्या उचित है? बिल्कुल नहीं. ऐसे ही कुछ व्यक्ति हजारीबाग सेंट्रल जेल में हैं. जब कोबाड हजारीबाग जेल में बंद थे, उस समय पार्टी के एक सैक(SAC–स्पेशल एरिया कमेटी) स्तर के व दो जोनल स्तर के नेता ही उस जेल में थे. और ये तीनों अंडा सेल में बंद थे. जेल भ्रष्टाचार में कौन–कौन माओवादी नेता लिप्त हैं, उनके नाम व पार्टी पद कोबाड को अपनी किताब में देना चाहिए था.

शोषक–शासक वर्ग माओवादी आंदोलन को बदनाम करने के लिए चौतरफा हमला चला रहे हैं. इसी के तहत माओवादी नेताओं के बारे में दुष्प्रचार किया जा रहा है कि लेवी के रूपयों से ये लोग बहुत पैसे वाले हो गये हैं. शोषक–शासक वर्गों द्वारा व्यापक रूप से इस किस्म का दुष्प्रचार चलाकर आम जनता के दिमाग में कुछ हद तक इस बात को बैठा पाने में सफल हुए हैं. ऐसे ही लोगों या पार्टी छोड़ चुके या फिर गद्दार बने लोगों द्वारा कही गयी बातों को सुनकर कोबाड द्वारा धरणा बना लेना और यह कहना कि माओवादी नेताओं से लेकर निचली कतारों के नेताओं तक धन कुबेर हैं, यह सरकारों के सुर में सुर मिलाने के अलावा और कुछ नहीं है.

विशाखापटणम जेल में चड्डा भूषणम के कथन पर आधारित होकर कोबाड पार्टी की कार्यनीतिक लाइन की निंदा कर रहे हैं. चड्डा भूषणम एओबी एसजडसी

सदस्य के रूप में काम करते हुए डिमोट होकर डीवीसीएम की हैसियत से नारायणपटना एरिया में काम करने के दौरान गिरफ्तार हुए थे. पार्टी अनुशासन का पालन न करते हुए वो व्यक्तिगत कामकाज के तहत पार्टी द्वारा बताए बातों को अनसुना कर अविश्वसनीय व अवसरवादी लोगों के साथ रिश्ता जारी रखे थे. उसी तरह के एक व्यक्ति के जरिए वो गिरफ्तार हो गए थे. जब वे पार्टी में थे, तब भी एसजडसी, डीवीसी के निर्णयों पर अमल न करते हुए अपने विचारों के मुताबिक कार्य करते थे. नारायणपटना आंदोलन के बारे में जो कथन उनके द्वारा कहे जाने की बात कोबाड कह रहे हैं, वह पूरी तरह गलत है. उनकी गिरफ्तारी के पहले और बाद में भी पार्टी नारायणपटना आंदोलन की समीक्षा करती आयी.

नारायणपटना एरिया में छसी मुलिया संघ में नाचिका लिंगा नेता के तौर पर विकसित हुए थे. उस एरिया में विकसित होते आंदोलन को उच्च स्तर में ले जाने चूंकि वहां कार्यरत दक्षिणपंथी लाइन वाला युसीसीआरआई (एम–एल) पार्टी नेतृत्व तैयार नहीं था, इसलिए उनके साथ लिंगा के मतभेद उत्पन्न हुए. इस कारण से वे नारायणपटना आंदोलन को स्वतंत्र रूप से संचालित करने लगे थे. उसी इलाके में नारायणपटना, बंदगांव एरियाओं में माओवादी पार्टी कार्यरत थी और 'जोतने वाले को जमीन', 'क्रांतिकारी जन कमेटियों को ही सभी अधिकार' नारों के साथ किसानों को जुझारू संघर्षों में गोलबंद करते हुए गांवों में क्रांतिकारी किसान कमेटियों का निर्माण कर रही थी. माओवादी पार्टी के नेतृत्व में देश भर में संघर्ष संचालित हो रहे थे. वैसी परिस्थितियों में 2008 में लिंगा ने हमारी पार्टी से संपर्क साधा. उनके साथ पार्टी ने संयुक्त कार्याचरण अपनाया. वे यह तय करने के बाद कि माओवादी पार्टी के नेतृत्व में संघर्ष करना चाहिए, पार्टी में अपने संगठन सहित 2009 में शामिल हुए. उस संगठन को उसी तरह जारी रखते हुए पार्टी ने मार्गदर्शन दिया. लिंगा को एओबी एसजडसी ने वहां की पार्टी डिविजनल कमेटी में शामिल किया. लिंगा उस इलाके में लोकप्रिय नेता थे. पार्टी ने उन्हें उन संगठनों का मार्गदर्शन करने की जिम्मेदारी दी. पार्टी नेतृत्व के तहत आंदोलन और व्यापक व जुझारू हो गया. तब तक केंद्र सरकार ने 2009 में ऑपरेशन ग्रीनहंट दमन अभियान शुरू किया जिसके तहत नारायणपटना आंदोलन को दबाने अर्ध–सैनिक बलों व बीएसएफ के कई कैंप बैठाए गए. इस दमन के खिलाफ जन प्रतिरोध और पीएलजीए का प्रतिरोध जारी रहा. इस दमन के साथ लिंगा में ढुलमुलपन शुरू हुआ. विगत में उनके द्वारा संचालित संघर्ष खुला एवं कानूनी दायरे में था. लेकिन जैसे–जैसे आंदोलन उग्र होता गया, दमन बढ़ता गया. उसके अनुरूप मुश्किलभरे भूमिगत जीवन अपनाकर काम करने की सन्नद्धता का अभाव, उनकी पत्नी को गिरफ्तार कर जेल में डालना, छात्रावास में शिक्षारत बेटे को पुलिस द्वारा नाना

प्रकार की यातनाएं देना आदि के चलते वे परेशान हो गए थे. इससे वे पार्टी से दूर होते गए. (स्थानीय संस्थाओं के चुनाव में भाग लेने, बुर्जुआ पार्टियों के साथ संबंध बढ़ाने के कारण वे जनता से भी दूर होते आए).

लिंगा के पार्टी छोड़कर स्थानीय चुनावों में भाग लेने एवं उनके साथ गांवों के एक तबके के चुनाव में शामिल होने का बहुसंख्य जनता ने विरोध किया. ये सारे परिणाम तीन सालों में हुए. इससे पार्टी नारायणपटना आंदोलन को संगठित नहीं कर सकी. हालांकि नारायणपटना, बंदगांव, माली–देवमाली, कोरापुट जिले के विभिन्न इलाकों में पार्टी जुझारू आंदोलन संचालित करती आयी.

वर्गसंघर्ष का तो दूर तक पता नहीं है पर उसके विरोध में लिखने के लिए कोबाड बालिश उदाहरण जरूर पेश कर रहे हैं. वे कहते हैं – ''अक्सर कम्युनिस्ट वर्ग संघर्ष शब्द की एक कच्ची समझ देते हैं, जो व्यक्तियों जिनसे ''वर्ग'' बनता है, को पूरी तरह से नकारती है. इस तरह की सोच का परिणाम एक तरफ आर्थिक नियतत्ववाद होता है, और दूसरी ओर, यह केवल जंगल देखती है और पेड़ नहीं. यह लोगों को केवल उपकरण/परिवर्तन के औजार मात्र के तौर पर कम करके आंकती है, यह भूल जाती है कि परिवर्तन स्वयं उन्हीं लोगों के लिए है. यह सभी को स्ट्रेटजैकेट में डाल देता है जहां संवेदना, भावना आदि का कोई भी संकेत 'बुर्जूआ पाप' है, और 'वर्ग' कठोरता ही एकमात्र गुण है, भले ही वह ''मणि सिंड्रोम'' (जिसने कहा था, केरल में हम उन सभी को मारते हैं जो विरोध करते हैं) पैदा करता हो. इसलिए मानवता को गैर–वर्ग कहा जाता है, वैसे स्वतंत्रता और खुशी भी. यह जाति के बारे में भी कहा गया था.'' ..... (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पिपल्स इमैंसिपेशन, पृष्ठ 17)

यह फिर उस झारखंड के जेल में बताए कहानी के जैसा ही है. वास्तव में यह ठीक वैसा ही है जैसे कोई केवल एक पेड़ को देखकर जंगल का आभास बता रहे हैं. केरला का कोई एक 'मनी' की बात जो आज के दौर के आंदोलन में प्रासंगिक भी नहीं है, इतिहास के किसी अंधेरे कोने में बंद है, जिस तरफ केरला के फुटपरस्ती भी देखना नहीं चाहते और कौन जानता है कि कोबाड के साथ उसकी क्या बातचीत हुई है, न यह कोई पार्टी दस्तावेजों में मौजूद है, को लेकर कोबाड कम्युनिस्ट क्लास की क्रूड अंडरस्टैंडिंग दे रहे हैं और ऐसे बचकाना फाईंडिंग्स निकालकर थोप रहे हैं. कोई भ्रष्ट दिमाग या जानबुझकर लांछन लगाने के उद्देश्य से ही कोई ऐसा कर सकता है. यहां वह कहावत फिट बैठती है, 'उल्टा चोर कोतवाल को ड़ाँटे.'

गिरफ्तार होकर जेल में बंद व अधःपतित व्यक्ति द्वारा रिपोर्ट् लेकर उस पर एकांगी ढंग से निर्धारण पर पहुंचना सही पद्धति नहीं है जिससे सच्चाई को सामने

है. उनका कहना है कि पैसे और सत्ता की बुराइयों से होनेवाले नकारात्मक प्रभाव को काउन्टर करने के लिए मूल्य तथा फ्रीडम और डिमॉक्रसि की आवश्यकता है और इसके लिए शिक्षा और जागरूकता निर्माण करने की सतत जरूरत है. इसका मतलब यही निकलता है कि पैसे और सत्ता की बुराइयों से जो डैमिज होता है, सिर्फ उसे कन्ट्रोल करने का रास्ता बता रहे हैं न कि उन बुराइयों को जड़ से मिटाने का. यह तो कार्पोरेट प्रोजेक्ट स्ट्रैटजि है, जिसके तहत किसी भी प्रोजेक्ट को बनाते समय डैमिज कन्ट्रोल के लिए एक एनजीओ का फाउंडेशन साथ में ही बनाते हैं जोकि उनकी प्रोजेक्ट प्लानिंग का ही हिस्सा होता है. साथ ही जनता को भटकाने के लिए कॉरपोरेट सामाजिक जवाबदेही (कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटि) के नाम पर जनता के मुंह पर झूठन फेंकते हैं. कोबाड ऐसे लिख रहे हैं जैसे वो आइडिऑलॅजि व डाइअलेक्टिक्स से हटकर बात कर रहे हैं. परंतु वास्तव में वह मार्क्सवाद के काउन्टर में आध्यात्मिक विचारधारा को सामने रख रहे हैं. यह सब अंत में शासक वर्गों की सेवा करने के सिवाय और कुछ नहीं है.

"आजादी का मतलब प्राकृतिक नियमों से छुटकारे का सपना नहीं है. आजादी उन नियमों के बारे में ज्ञान से, विशिष्ट उद्देश्यों के लिए उनको काम में लगाने (उपयोग करने) से मिलने वाले अवसर से मिलकर बनी है. हमारे ऊपर, प्रकृति पर नियंत्रण में, सहज अनिवार्यता के बारे में ज्ञान की बुनियाद पर खड़े नियंत्रण में आजादी है; इस वजह यह अनिवार्यतः ऐतिहासिक विकास का फल है.'' (एंगेल्स, ड्यूहरिंग मत खंडन, पृ.104)

अतः वर्ग संघर्ष को संचालित करते हुए वर्गहीन समाज की तरफ अर्थाथ समाजवाद और फिर साम्यवाद की स्थापना के लिए अनिवार्यता के मुताबिक व्यवहार करना ही आजादी है. वर्ग संघर्ष की अनिवार्यता को नजरअंदाज करना, वास्तविक रूप में आजादी के लिए जो अनिवार्यता की द्वंद्वात्मकता है उसके अनुरूप व्यवहार करने से इनकार करने जैसा ही है. ऐसा व्यवहार आजादी नहीं प्रदान करता बल्कि हमें अनिवार्यता का गुलाम बनाता है. वर्ग संघर्ष में निभायी जानेवाली भूमिका को छोडकर समूह से, सामाजिक, ऐतिहासिक चरण से अलग कर व्यक्ति को केद्रिंत करते हुए आजादी के बारे में बातें करना बेमानी है.

जनवादी केंद्रीयता

''लोकतंत्र का प्रारंभिक बिंदु संरचनात्मक नहीं, बल्कि मानवीय है. यदि व्यक्ति (विशेषकर नेता) जिनसे राज्य/पार्टी/संगठन बनता है, लोकतांत्रिक नहीं हैं, तो संगठन लोकतांत्रिक कैसे हो सकता है, चाहे उसकी संरचना कुछ भी हो? रूप का परिवर्तन सारतत्व को नहीं बदल सकता है. जनवादी केंद्रीयता के संगठन की साम्यवादी अवधारणा को लें. सिद्धांत के रूप में, इससे अधिक लोकतांत्रिक कुछ

दांव–पेंच बनाकर मार्क्सवाद को विकिसित किया. बेर्नस्टीन की आलोचना करते हुए लेनिन ने इस तरह कहा –

'' आलोचना करने की आजादी'' (फ्रीडम ऑफ क्रिटिसिज्म) के नाम पर मार्क्सवाद की आड़ में मार्क्सवाद पर नीचतापूर्ण हमला करते हुए मर्क्सवाद के बुनियादी उसूलों को ही बदलने वाले बेर्नस्टीन एवं अन्य की आलोचना करते हुए लेनिन ने उनके असली उद्देश्य का अद्भुत ढंग से पर्दाफाश किया. 'क्या करें, पुस्तक में उन्होंने जिन विषयों का उल्लेख किया, वो आज भी कोबाड के मामले में पूरी तरह लागू होते हैं. परंतु कोबाड यह कह रहे हैं कि खुशी जब आजादी के साथ जुड़ जाती है तभी उसे सहमति मिलती है, आजादी व्यक्ति से शुरू होनी चाहिए. इसकी क्या गारंटी है कि सामाजिक लक्ष्य के बिना आजादी अराजकतावाद की ओर नहीं ले जाएगी? बिना लक्ष्य की आजादी आलोचना करने की आजादी बनकर रह जाएगी. लेनिन के कहे अनुसार मार्क्सवाद को सुधारने के नाम पर उसका सुधारवाद में पतन होता है.

लेनिन ने कहा – ''..यह निर्विवाद विषय है कि 'आज के संदर्भ में 'आलोचना करने की आजादी' अत्यंत शौकीन' नारा है. सभी देशों में समाजवादियों एवं जनवादियों के बीच चलने वाले विवादों में यह अत्यंत साधारण तौर पर उपयोग किए जाने वाली शब्दावली है.

''..बेर्नस्टीन ने बहुत ही स्पष्ट रूप से ऐलान किया, ''....'अप्रासंगिक बने कठमुल्लावादी' मार्क्सवाद के प्रति 'आलोचनात्मक' दृष्टिकोण दर्शाने का यह रुझान किसका प्रतिनिधित्व करता है. मिल्लरांड ने उसका निरूपण किया था.

''..सामाजिक जनवाद (यानी साम्यवाद–अनुवादक) को सामाजिक क्रांति का नेतृत्व करने वाली पार्टी के स्थान से सामाजिक सुधारों को अमल करने वाली पार्टी में बदल डालना है. इस राजनीतिक मांग को मजबूती देने के लिए एक पद्धति के मुताबिक जमाए गए कई 'नए' तर्कों, कारणों को बेर्नस्टीन सामने लाए. समाजवाद को वैज्ञानिक आधार पर खड़ा करने के अवसर, उसकी अनिवार्यता, आवश्यकता, उसी तरह तीव्र होती दरिद्रता, सर्वहाराकरण, पूंजीवादी अंतरविरोधों को ऐतिहासिक भौतिकवादी नजरिए से साबित करने के मुद्दे को खारिज किया.

''..'अंतिम लक्ष्य' को अविवेकपूर्ण घोषित किया. सर्वहारा अधिनायकत्व को पूर्ण रूप से खारिज किया. समाजवाद और उदारतावाद के बीच उसूली तौर पर अंतर है, इससे भी इन्कार किया. यह कहते हुए कि बहुमत की राय के मुताबिक शासन के चलने के जनवादी समाज का क्रियान्वयन नहीं कर सकते हैं, वर्ग संघर्ष के सिद्धांत को खारिज किया.

''..इस तरह क्रांतिकारी सामाजिक जनवाद से बुर्जुआ सामाजिक सुधारवाद की ओर मुड़ने की मांग, उसके साथ ही मार्क्सवाद के सभी मूलभूत विचारों को बुर्जुआ आलोचना का शिकार बनाने का मोड़ लिया. चूंकि राजनीतिक मंचों, विश्वविद्यालयों के पीठों, अनेकों पर्चों, प्रसिद्ध सैद्धांतिक लेखों के जरिए यह आलोचना काफी समय से जारी है, पढ़े–लिखे वर्ग समूची युवा पीढ़ी को दशकों से योजनाबद्ध ढंग से इस आलोचना पर आधारित होकर शिक्षित कर रहे हैं, इसलिए जुपिटर के सिर से जैसे अचानक मिनर्वा प्रकट हुआ (रोमन पुराणों के मुताबिक देवताओं में जुपिटर प्रमुख हैं. जबकि मिनर्वा दस्ताकारी, कलाओं, विज्ञान वगैराह, शिक्षकों, डॉक्टरों को बचाने वाली देवी है. जनविश्वास यह है कि यह देवी कवच पहनकर, हाथ में तलवार लिए जुपिटर के सिर से उद्भुत होकर ऊपर उठी. कोई व्यक्ति या वस्तु प्रारंभ से ही सभी मामलों में संपूर्ण है, यह कहने के लिए इस उदाहरण को पेश करते हैं.), ठीक वैसा ही सामाजिक जनवाद में इस 'नए आलोचनात्मक' रुझान का प्रकट होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है. इस नए रुझान के विषयवस्तु को सिलसिलेवार ढंग से विकसित होने की जरूरत नहीं थी. वह पूरा का पूरा बुर्जुआ साहित्य से समाजवादी साहित्य में स्थानंतरित कर दिया गया.'' ('क्या करें' –पृष्ठ 6–8)

इन भूतपूर्व मार्क्सवादियों को शासक वर्गों व पुलिस अधिकारियों से मिलने वाले प्रात्साहनों के बारे में लेनिन ने इस तरह बताया.

''आलोचना का झंडा उठाकर मार्क्सवाद का खात्मा करने में करीब–करीब एकाधिकार हासिल भूतपूर्व मार्क्सवादी इस साहित्य में जड़ जमा चुके हैं. 'परंपरावाद का विरोध करो', 'आलोचना करने की आजादी जिंदाबाद' ये तात्कालिक फैशन बन गए हैं. ऊपर से सेन्सार वाले, सुरक्षा जवान भी इस फैशन से बच नहीं सके. यह इस बात से समझ सकते हैं कि बेर्नस्टीन लिखित सुविख्यात ग्रंथ (हेरोस्ट्रेटस के लिए इस्तेमाल किए अर्थ में **हेरोस्ट्रेटस एशिया माइनर इलाके में निवासरत ग्रीक राष्ट्रीयता का व्यक्ति जो ख्याति अर्जित करने के लिए प्राचीन ग्रीस के विख्यात कलात्मक भवन आर्टिमिन मंदिर को ई.पू. 356 में जला डाला था.'') तीन रूसी संस्करणों में प्रकाशित हुआ. उतना ही नहीं, बेर्नस्टीन, प्राकोविच एवं अन्यान्य के ग्रंथों को जुबटोव (यह मास्को शहर का पुलिस प्रमुख था) ने प्रोत्साहित किया. '' (उपरोक्त ग्रंथ, पृष्ठ–20)

अधिकारिक तौर पर पार्टी के पास पहुंचने के पहले ही 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम' पुस्तक देश, विदेशों के बड़ी पुस्तक दुकानों, आखिर हवाई अड्डों में स्थित पुस्तक दुकानों में आज उपलब्ध है. कॉमरेड् अक्किराजु हरगोपाल पर आये साहित्य के प्रकाशन को रोकने एनआईए ने उसे जब्त कर प्रकाशकों व मुद्रकों को अवैध मुकदमों में

है, तो यह कोरी बकवास के सिवाय और कुछ नहीं होता. फ्रीडम यानी स्वतंत्रता या आजादी, यह मार्क्सवादी अवधारणा में पहले से स्पष्ट रूप से दर्शायी गई है. यदि कोबाड फिर एक बार ऐतिहासिक भौतिकवाद पर नजर डालते तो उन्हें इतनी बौध्दिक तकलीफ उठाने की जरूरत नहीं पड़ती. 'आजादी' ऐतिहासिक भौतिकवाद की मूल अवधारणा है. व्यक्ति, वर्ग या समाज द्वारा अनिवार्यता (आवश्यकता) को पहचानकर, तदनुसार व्यवहार में उतरना ही आजादी (स्वतंत्रता) है. एंगेल्स ने इसकी संक्षिप्त व्याख्या करते हुए कहा "आवश्यकता को पहचानना ही आजादी है. " ऐतिहासिक भौतिकवाद इतिहास की चालक शक्तियों और नियमों की खोज और अध्ययन करता है. समाज के विकास के नियम जानने की जरूरत क्या है? तद्नुसार व्यवहार के जरिये सामाजिक जीवन की बेहतरी के लिए. और क्यों? यानी आवश्यकता को पहचान कर उसके अनुरूप मानव व्यवहार को मोड़ने का उद्देश्य ऐतिहासिक भौतिकवाद में अंतर्निहित होता है. मनुष्य जिस सीमा तक प्रकृति और समाज के वस्तुगत नियमों को जान पाता है उसी हद तक वह स्वतंत्रता हासिल करता है. अनिवार्यता को पहचानना सिर्फ पहचानने भर के लिए नहीं, उसके मुताबिक व्यवहार करने के लिए भी है, यह समझना होगा. एंगेल्स ने कहा है कि आग की खोज ने भाप के इंजन की खोज से भी कहीं ज्यादा मानवता को आजादी प्रदान की थी. इस तरह आजादी का अर्थ वस्तुगत नियमों से आजादी नहीं. मनुष्य की स्वेच्छाचारिता नहीं.

अपने चार दशक के कार्य का सारांश को वो इस तरह पेश कर रहे हैं.

''संक्षेप में, सामाजिक और क्रांतिकारी कार्यां में मेरे चार दशकों के व्यवहार के प्रतिबिंब के ये मुख्य बिंदु थे जो जेल में मेरे आकलन करने की कोशिश के नतीजें हैं. सार यह है कि उत्पीड़ितों के संगठनों में (साथ ही सामाजिक जीवन में – दोनों को विभाजित नहीं किया जाना चाहिए) विचारधारा और एक द्वंद्वात्मक दृष्टिकोण के अलावा, खुशी प्राप्त करने के लक्ष्य से आजादी/लोकतंत्र के पहलुओं और दैनिक व्यवहारों में अच्छे मूल्यों को बहुत ही सचेतन रूप से स्थापित करना होगा. यही अकेला धन और शक्ति की बुराइयों और साथ ही अन्य सभी नकारात्मक फसलों के खिलाफ दीर्घकालिक गारंटी हो सकता है.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 216)

व्यक्ति की जागरूकता से ही समाजवाद में स्थित्यंतर, निजी पध्दति का और सामूहिक पध्दति का सहअस्तित्व, स्वदेशी का पुरस्कार, (आरएसएस वालों का भी एक विंग है) क्या यह बुर्जुआई प्रोग्राम नहीं है? राजीव दिक्षित के भाषणों में प्रश्नों की प्रस्तुति तो ठीक है पर उनके उत्तर राजनीतिक और आर्थिक धरातल पर उतर ही नहीं सकते. क्योंकि वो व्यवस्था परिवर्तन की गति के इंजन को छोड़कर गाड़ी हांकने की कोशिश करते हैं. कोबाड की गाड़ी में तो इंजन (वर्ग संघर्ष) ही नहीं

संस्कृति को भी प्रोत्साहित करती है जो मुख्यतः अहंकारयुक्त ब्राह्मणवादी जाति–आधारित संस्कृति है. यह सामाजिक अन्तर–क्रिया और चिन्तन के लगभग सभी पहलुओं पर अपना छाप छोड़ती है. यह अभिव्यक्त होता है श्रम के प्रति, महिलाओं के प्रति, उत्पीड़ित जातियों के प्रति तथा दूसरी जातियों के प्रति दृष्टिकोण के रूप में, विवाह के तौर–तरीकों, जन्म, मृत्यु, भाषा के प्रति दृष्टिकोण में और जाति के प्रतीकों के रूप में. धार्मिक मतान्धता और विज्ञान–विरोधी विचारों को भी जोर–शोर से भड़काया जा रहा है. साथ ही क्रान्तिकारी आन्दोलनों का मुकाबला करने और उन्हें गुमराह करने के लिए संशोधावादी, सुधारवादी व अर्थवादी विचारधारा को भी व्यापक पैमाने पर फैलाया और सामने लाया जा रहा है.

''..पार्टी को इन सभी साम्राज्यवादी और सामन्ती विचारधाराओं व संस्कृति का भंडाफोड़ करना होगा और उनके खिलाफ निरन्तर संघर्ष भी करना होगा. साथ ही साथ उसे जनता के सामने विकल्प के रूप मे नव जनवादी और समाजवादी संस्कृति को सामने लाना चाहिए. अन्ततः नव जनवादी क्रान्ति इस साम्राज्यवादी–सामन्ती विचारधारा व संस्कृति को धराशाई करेगी और नव जनवादी विचारधारा व संस्कृति को स्थापित करेगी तथा साथ ही साथ समाजवादी विचारधारा व संस्कृति को भी बुलन्द करेगी.

''..यह विचारधारा और संस्कृति सर्वहारा वर्ग की महान विचारधारा – मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के जरिये मार्गदर्शन प्राप्त करेगी. साथ ही यह संस्कृति पूरी दुनिया में राष्ट्रीय मुक्ति, जनवाद और समाजवाद के लिए जारी क्रान्तिकारी संघर्षों के साथ एकताबध्द होकर लोक जनवादी तथा समाजवादी संस्कृति के लिए लड़ेगी और इस तरह उनके साथ अपनी अन्तरराष्ट्रीय एकजुटता का इजहार करेगी. यह सभी किस्म की संशोधावादी विचारधारा को परास्त करेगी तथा सबसे ज्यादा वैज्ञानिक और विकसित विचारधारा मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के लाल झण्डे को ऊँचा उठाये रखेगी.''––भाकपा (माओवादी) पार्टी कार्यक्रम.

आजादी और जनवादी केंद्रीयता(फ्रीडम ऐंड डेमोक्रैटिक सेंट्रलिज्म)

फ्रीडम

कोबाड फ्रीडम याने आजादी की बात रख रहे हैं. आजादी का वातावरण रहना चाहिए, ऐसा उनका कहना है. इसके साथ मूल्य और हैपिनेस का मिक्चर भी है. उनका आग्रह है कि यह सब युनिवर्सल रहना चाहिए. पर वो यह नहीं बता रहे हैं कि किसकी फ्रीडम की बात कर रहे हैं? अगर व्यापक शोषित जनता की बात कर रहे हैं तो यह साम्यवाद के सिवाय संभव नहीं है. इसके लिए क्रांति के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं है. जैसा कि कोबाड कहते हैं, फ्रीडम साम्यवाद के बगैर संभव

फंसाया. हालांकि बाद में तेलंगाना हाईकोर्ट् ने जब्त साहित्य को वापस कराने की राहत दी. कोबाड की किताब को इस कदर मिलने वाली आजादी से यह स्पष्ट होता है कि वह शासक वर्गों के लिए कितनी उपयोगी है.

मार्क्सवादी सिद्धांत को समझकर, उसके उसूलों को दुनिया, समाज एवं क्रांति के लिए कार्यान्वयन करते हुए विकसित करने के क्रम में दुनिया भर में अनेक रुझान पैदा हुए. वस्तुगत परिस्थितियों की जटिलता को समझने में, मार्क्सवादी उसूलों का कार्यान्वयन करने में मौजूद समस्या ही विभिन्न रुझानों के पनपने का प्रधान कारण है. रूसी क्रांति के बाद युरोप में समाजवादी क्रांतियों का सफल न होना, 1923 तक विश्व पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा सापेक्षिक स्थिरता हासिल करना, 1929 के बाद महामंदी (ग्रेट डिप्रेशन) के दौर में भी क्रांतियों को आगे बढ़ाने में मजदूर वर्ग की विफलता, दूसरे विश्व युद्ध के बाद 1950, 1960 के मध्य तक पूंजीवादी व्यवस्था का संकट से अस्थायी तौर पर बाहर आकर विकसित होना, कई देशों में सरकारी हस्तक्षेप के जरिए कल्याणकारी कार्यक्रमों को अपनाया जाना, तथाकथित समाजवादी राज्यों का एक–एक कर पतन होना, खासकर 1989–90 के सोवियत युनियन एवं पूर्वी युरोप के परिणाम – बदलती वास्तविक परिस्थितियों के साथ मार्क्सवाद के सृजनात्मक कार्यान्वयन न कर पाना, मार्क्सवाद के मूलभूत उसूलों को कठमुल्लावादी सूत्रों के तौर पर लेना आदि एक तरह की समस्या है तो असल में मार्क्स, एंगेल्स की रचनाओं में मौजूद विषयों को विविध तरीकों में समझना, व्याख्या करना दूसरे किस्म की समस्या है.

सब्जेक्टिव मार्क्सिज्म या मानवतावादी मार्क्सवाद. इनमें से अत्यधिक क्रांतिकारी रूमानी (स्वच्छंदतावादी) किस्म के थे. आल्दूजर एवं उनके अनुयायी इसी मानवतावादी मार्क्सवादी किस्म के ही थे. तथापि इनके बीच में ही मार्क्सवाद के प्रति भिन्न मत एवं राय मौजूद हैं. ये सभी (जर्मनी के फ्रैंकफर्ट् स्थित 'इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल रिसर्च' के थे. 1923 में स्थापित इस रिसर्च इंस्टिट्यूट ने एक दशक तक काम किया. हिटलर के सत्तारूढ़ होने के बाद उसके सदस्यों में से ज्यादातर लोग अमेरिका चले गए. इनमें से प्रमुख थे, माक्स हर्क हैमर, हेर्बर्ट माक्यूस, थियोडर अडार्नो, एरिक फ्राम, लोवेंथाल, हबरमस) विज्ञानशास्त्र की अपेक्षा ये दर्शनशास्त्र पर ज्यादा विश्वास रखते थे. हेर्बर्ट माक्यूस जैसों ने आधुनिक विज्ञान और प्रोद्योगिकी का पूर्णतया विरोध करने का रुख अपनाया.

फ्रैंकफर्ट् स्कूल के करीबन सभी लोग सामाजिक व सांस्कृतिक मामलों को उनकी आर्थिक बुनियाद तक सीमित करने का विरोध करते हैं. ये कहते हैं कि बुनियाद और ऊपरी संरचना के बीच आपसी प्रतिचर्या होनी चाहिए, विभिन्न क्षेत्रों को 'सापेक्षिक स्वायत्तता' होनी चाहिए. ये सभी लोग यह मानते थे कि रैडिकल

राजनीतिक परिवर्तनों के लिए चेतना, मनोगत अंश, संस्कृति, सिद्धांत, समाजवाद के बारे में अनुसंधान करने की आवश्यकता है.

1960 के दशक में दुनिया भर में छिड़े छात्र एवं अन्य संघर्षों, वामपंथी विचारों के पुनर्जीवन से इन पश्चिमी मार्क्सवादियों के सिद्धांतों ने कुछ प्रतिष्ठा हासिल की थी. परंतु ऐसे सभी लोग जो यह तर्क देते हैं कि मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओ विचारधारा आर्थिक निश्चयवाद को ऊंचा उठाती है एवं बुनियाद व ऊपरी संरचना के संबंध को यांत्रिक रूप से देखती है, इन पश्चिमी मार्क्सवादियों के शरण में जाते हैं. मानव स्वभाव, प्रवृत्ति, उनके परिवर्तन से संबंधित विषय, बुनियाद एवं ऊपरी संरचना की आपसी प्रतिचर्या वगैराह जिनके बारे में यह कहा जाता है कि ये मार्क्सवाद में नहीं हैं, के बारे में मार्क्स से लेकर माओ तक कहते आए. इस मुद्दे पर इसी दस्तावेज में विभिन्न संदर्भों में हमने उन्हीं की रचनाओं के जरिए यह कहा कि मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद एक समग्र सिद्धांत है. मार्क्स, एंगेल्स ने मार्क्सवाद को आर्थिक नियतिवाद कहे जाने की कड़ी भर्त्सना की थी. बाद के समय में माओ ने ऊपरी संरचना में वर्ग संघर्ष को जारी रखने के महत्व को न सिर्फ सैद्धांतिक तौर पर रेखांकित किया बल्कि व्यावहारिक तौर पर सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति को संचालित किया.

इस तरह कोबाड पहले क्रांतिकारी राजनीति से अधःपतित हो गए, फिर मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद को खरिज कर बेर्नस्टीन एवं फ्रांकफर्ट् विचारधारा के बगल में खड़े हो गए. वे वहां से भी आगे बढ़कर यानी फ्रैंकफर्ट् स्कूल के सिद्धांतों को भी पीछे छोड़कर आध्यात्मवाद की गोद में जा गिरे. क्रांतिकारी संकट के दौर में ऐसे लोगों का प्रकट होना स्वाभाविक ही है. तथापि ऐसे लोगों को पीछे ढकेलते हुए क्रांतिकारी आंदोलन का आगे बढ़ना भी अवश्यंभावी है.

मूल्यों की चर्चा – कोबाड की गैर–मार्क्सवादी अवधारणाएं

मूल्य (आर्थिक नहीं बल्कि मनुष्य के आचारण में व्यक्त होने वाले गुण):

कोबाड ने अपने लेखों और किताब में मूल्यों की बहुत चर्चा की है. यहाँ तक कि अच्छे मूल्यों के अभाव में ही दुनिया में समाजवाद पलट गया या कम्युनिस्ट आंदोलन कमजोर हो गया (उनके शब्दों में सडन की ओर). उनका यह कहना है कि ये मूल्य व्यक्तिगत व आंतरिक हैं, और हजारों सैंकड़ों वर्षों से, महात्माओं, संतों, गुरूओं और धार्मिक तथा आध्यात्मिक विचारधाराओं ने ये बातें बतायी हैं. मार्क्सवाद इसको महत्व नहीं देता है. मनुष्य के मूल्यों के बारे में उन्होंने अच्छे मूल्य और बुरे मूल्य की दो कैटिगॅरि बनाई हैं. मूल्य मनुष्य के जन्मजात गुण होते हैं, ऐसे कह रहे हैं. यह पदार्थ से परे रहने की बात कर रहे हैं.

एक तरफ यह कह रहे हैं तो दुसरी तरफ–

''बाजार कट्टरवाद और पूर्ण उपभोक्तावाद ने दार्शनिक भौतिकवाद (पदार्थ और विचार में से पदार्थ प्राथमिक) को अश्लील भौतिकवाद में बदल दिया जिसने मनुष्य के आध्यात्मिक मूल्यों – उसके संवेगों, भावनाओं और उसकी मानवता के नष्ट कर दिया है.'' (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पीपल्स इमैंसिपेशन, पृष्ठ 16)

.... 'भौतिकवादी' और आज के धर्मवादियों दोनों ने मानवता खो दी है.'' ... (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पीपल्स इमैंसिपेशन, पृष्ठ 16)

कमाल की बुध्दि है? आध्यात्म का गुण भी गाते हैं और यह भी कहते हैं कि उसने मानवता को खो दिया है. दूसरी ओर यह भी कहते हैं कि भौतिकता भी मूल्यों का नाश करती है. दुनिया में विचारधारा की दो ही श्रेणियां हैं. फिर दोनों में भी मानवता, मूल्य, भावनाएं नहीं हैं तो फिर तीसरी कौनसी धारा कोबाड के पास है? कुछ नहीं है. मार्क्सवाद को नाकाम साबित करना ही कोबाड का असली उद्देश्य है.

जैसा कि कॉमरेड् माओ ने कहा, ''निशाना साधकर तीर चलाना चाहिए'' और उनका आशय था, निशाना क्रांति और तीर मार्क्सवाद–लेनिनवाद. कोबाड का निशाना अब क्रांति के बजाय अच्छे मूल्यों का निर्माण और तीर आध्यात्मवाद. अगर वह निराशा के गर्त में डुबे हैं तो चुपचाप बैठना चाहिए था. पर वो मार्क्सवाद को उस हताशा और निराशा का कारण बता रहे हैं (प्रत्यक्ष नहीं पर सारांश वही है). वह मात्र व्यक्तिगत बात नहीं रहती. एक नामचीन 'माओवादी' नेता जब खुलेआम जनता के बीच में अपनी हताशा और निराशा को वैचारिक दृष्टिकोण के साथ पेश करते हैं तो वह व्यक्तिगत मामला नहीं रह जाता है. यह जानबूझकर क्रांति विरोधी विचार फैलाने की कोशिश होती है.

देखें, जीवन के मूल्यों के विषय में हमारा पार्टी कार्यक्रम क्या कहता है.

भाकपा(माओवादी) के पार्टी कार्यक्रम (पॉईन्ट 26) में नये मूल्य और जनवादी संस्कृति निर्माण बाबत दिया दृष्टिकोण जिसके मार्गदर्शन में सभी पार्टी कतारें कार्यरत हैं:

''आज हमारे जन जीवन के सभी क्षेत्रों पर एक सड़ी–गली, पतनशील, जनवाद–विरोधी व जन–विरोधी घिनौनी अर्धऔपनिवेशिक, अर्धसामन्ती संस्कृति हावी है. साम्राज्यवादियों और उनके दलालों अपने प्रचार–तन्त्र के जरिये आज श्रम के प्रति नफरत, पितृसत्ता, अन्धविश्वास व कुसंस्कार, निरंकुशता, साम्राज्यवादी गुलामी, राष्ट्रीय अन्धराष्ट्रवाद, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, अन्धलोलुपता, आत्म–केन्द्रितता, उपभोक्तावादी संस्कृति और विकृत यौनलिप्सामूलक विचारधारा व संस्कृति को बड़े पैमाने पर प्रचारित व आरोपित कर रहे हैं. यह उस सामन्ती

''लेकिन फिर भी ऊपर वर्णित तीन नैतिक सिद्धांतो में बहुत कुछ समानता है – क्या यह नैतिकता का कम से कम एक हिस्सा नहीं है जो एक समय, हमेशा के लिए तय हो गया है? ये नैतिक सिद्धांत एक ही ऐतिहासिक विकास के विभिन्न चरणों का प्रतिनिधित्व करते हैं, इसलिए एक समान ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है, और केवल इसी कारण से उनमें बहुत कुछ समानता है. उससे ज्यादा भी. आर्थिक विकास के समान या लगभग समान चरणों में कमोबेश सहमति वाले नैतिक सिद्धांतों की आवश्यकता होती है. जिस क्षण से चल संपत्ति का निजी स्वामित्व विकसित हुआ, उन सभी समाजों जिनमें यह निजी स्वामित्व मौजूद था, यह नैतिक निषेधाज्ञा समान थीः आप चोरी न करें. क्या यह निषेधाज्ञा इस प्रकार एक शाश्वत नैतिक निषेधाज्ञा बन जाती है? कतई नहीं. जिस समाज में चोरी के सभी उद्देश्यों को समाप्त कर दिया गया हो, जिसमें सबसे अधिक केवल पागल ही कभी चोरी करेंगे, उस समाज में नैतिकता के उपदेशक की क्या हंसी नहीं उड़ेगी जो इस शाश्वत सत्य की औपचारिक घोषणा करता हो कि आप चोरी नहीं करेंगे.''

''इसलिए हम किसी भी नैतिक हठधर्मिता को इस बहाने से कि नैतिक दुनिया के सभी अपने स्थायी सिद्धांत हैं जो इतिहास और राष्ट्रों के बीच मतभेदों से ऊपर हैं, एक शाश्वत, अंतिम और हमेशा के लिए अपरिवर्तनीय नैतिक कानून के रूप में हम पर थोपने के हर प्रयास को अस्वीकार करते हैं. हम इसके विपरीत यह मानते हैं कि अंतिम विश्लेषण में सभी नैतिक सिद्धांत उस समय प्राप्त समाज की आर्थिक स्थितियों के उत्पाद के रूप में रहे हैं. और समाज में जबसे वर्ग विरोध पैदा हो गए हैं, नैतिकता हमेशा वर्ग नैतिकता रही है; इसने या तो शासक वर्ग के वर्चस्व और हितों को सही ठहराया है, या जब से उत्पीड़ित वर्ग पर्याप्त शक्तिशाली हुआ है, इसने इस वर्चस्व के खिलाफ अपने आक्रोश और उत्पीड़ितों के भविष्य के हितों का प्रतिनिधित्व किया है. इसमें कोई संदेह नहीं करेगा कि इस प्रक्रिया में कुल मिलाकर, मानव ज्ञान की अन्य सभी शाखाओं की तरह, नैतिकता में प्रगति हुई है. लेकिन हम अभी तक वर्ग नैतिकता से आगे नहीं बढ़े हैं.'' (फ्रेडरिक एंगेल्स. एंटी – डुहरिंग, भाग–1)

मार्क्स की समझदारी को कोबाड इन मुद्दों के साथ चर्चा में लाते हैं... 'आजादी, मानवता, खुशी'.

''लेकिन यहां मैं आजादी, मानवता, खुशी की अवधारणाओं से संबंधित मार्क्स की समझ को न केवल उलटफेर के कारणों को बेहतर ढंग से समझने बल्कि आज के प्रचलित अस्तित्व में इन मूल्यों की कमी के प्रभाव को भी समझने के लिए चर्चा में लाना चाहता हूं.'' (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पीपल्स इमैंसिपेशन, पृष्ठ 16)

मार्क्स के अनुसार, ''प्रजातियों की स्वयं–उत्पत्ति'' (''विषय के रूप में समाज''), और इस तरह एक दूसरे से जुड़े परस्पर संबंधित व्यक्तियों की लगातार श्रृंखला को एक एकल व्यक्ति के रूप में माना जा सकता है, जो स्वयं को उत्पन्न करने के रहस्य को पूरा करता है. यहां यह स्पष्ट है कि व्यक्ति शारीरिक और मानसिक रूप से एक दूसरे को जरूर बनाते हैं, लेकिन खुद को नहीं बनाते हैं.'' (कार्ल मार्क्स, जर्मन विचारधारा – 1845)

अच्छे मूल्य के मॉडल के रूप में कोबाड अमर शहीद कॉमरेड् अनुराधा को रख रहे हैं. उन्होंने आंदोलन की समस्या पर उत्तर खोजते हुए जिस 'मूल्य का बनाया मॉडल' पेश किया है, वह दरअसल संकीर्ण, वर्गविलयवादी, वर्गसंघर्ष से परे और आध्यात्मिक है. जानवरों की प्राचीन कहानियों से मनुष्य के मूल्यों को लेने की बात करते हैं. यह ठीक उसी तरह की कोशिश है जो प्राइमरि के बच्चों को मूल्य सिखाने की जाती है. मूल्य निर्माण में वर्ग संघर्ष पूरी तरह गायब है और यह पूरी तरह व्यक्ति केन्द्रित और इसमें समाज के बजाय व्यक्ति को प्राथमिकता दी गयी है. यह आध्यात्मिक प्रवचन के अलावा और कुछ नहीं हैं. बडी दुखःद बात यह है कि जिनसे वे बेहद प्यार करते हैं, उन्हीं अनुराधा के सर्वहारा मूल्यों का अपमान कर रहे हैं और विकृत तरीके से पेश करते हुए अपने संकल्पित तथाकथित 'उन्नत विचार के प्रोजेक्ट' के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं. यहां वे जानबूझकर इस बात पर नकाब डाल रहे हैं कि बच्चों सी निर्मल मुस्कान, चेहरे पर आंतरिक भाव का व्यक्त होना, उत्पीड़ित वर्गों व विशेष सामाजिक तबकों के प्रति असीम प्यार, स्नेहिल स्वभाव, दुश्मन वर्गों के प्रति नफरत आदि मूल्य सर्वहारा वैश्विक दृष्टिकोण यानी निजी संपत्ति के बिना, वर्गविहीन समाज व्यवस्था की स्थापना के लिए संघर्षरत होने के कारण कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों में स्वाभाविक हैं. चूंकि आदिवासियों और उत्पीड़ित–शोषित जनता में निजी संपत्ति की भावना उनकी वास्तविक भौतिक जीवन की परिस्थितियों के अनुरूप ही कमजोर रहती है, खासकर आदिवासी प्रकृति के साथ आत्मसात होते हैं, इसलिए ये सब आदिवासी और शोषित जनता में पाए जाने वाले सर्वसामान्य भाव हैं. चूंकि कॉमरेड् अनुराधा साम्यवादी समाज की स्थापना के लिए पूरी तरह समर्पित थी, अतएव उनके अंदर इन मूल्यों का विराजमान होना स्वाभाविक ही था. इसलिए सामाजिक परिवर्तन के लिए इमानदारी से वर्गसंघर्ष में हिस्सेदारी लेने वाले सबों में ये पाए जाते हैं. वर्गीय समाज है, वर्गयुध्द जारी है, इसमें आध्यात्मिक मूल्यों को लेकर चलने वाला खड़ा ही नहीं रह सकता है.

चेतना के विभिन्न रूपों जैसे नैतिकता, धर्म, सिद्धांत आदि सभी का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहता है. प्रत्येक समाज में उसकी उत्पादन प्रणाली के अनुरूप मूल्य बदलते रहते हैं. एक समाज में मान्यता प्राप्त मूल्य दूसरे समाज में विपरीत बन

जाते हैं. उदाहरण के लिए सामंती समाज में संयुक्त परिवार व्यवस्था एवं उससे संबंधित नैतिकता सामान्य बात है. संयुक्त परिवार व्यवस्था के जारी रहने के लिए आवश्यक मूल्य समाज के लिए स्वीकार्य होते हैं. उसी तरह पूंजीवादी समाज में संयुक्त परिवार विच्छिन्न होकर एकल परिवार व्यवस्था सामान्य बन जाती है. उसके लिए आवश्यक मूल्य प्रचलन में रहते हैं. सामंती उत्पादन के जारी रहने के लिए भूमि केंद्र बिंदु में रहती है और पूरा परिवार उत्पादन में शामिल होता है. पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली में उसकी जरूरत नहीं रहती है. इसलिए उस उत्पादन के अनुरूप मनुष्य की गतिविधियां बदल जाती हैं. उसके मुताबिक मूल्य बदलते हैं. लोग उन मूल्यों का अनुसरण करते हैं. एक व्यवस्था में जीवनयापन करने वाले मनुष्य साधारणतया इन नियमों के प्रति एक सी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं. साधारणतया मनुष्य मेहनत करके जीना चाहता है. पूंजीवादी समाज में पूंजीपति माल एवं लाभलिप्सा के लिए मजदूरों व पीड़ितों के उत्पीड़न के जरिए जीने की नैतिकता का पालन करते हैं तो बिना निजी संपत्ति के मजदूर सामूहिक जीवन की आदतों व उसके लिए आवश्यक मूल्यों का अनुमोदन करते हैं. इसलिए मूल्य सापेक्षिक हैं और विभिन्न समाजों की उत्पादन प्रणालियों पर निर्भर होकर संस्कृति के हिस्से के रूप में मौजूद रहते हैं. किंतु वर्ग समाज में वर्गीय आधार पर ही मूल्य व्यक्त होते हैं.

कोबाड यह तो स्वीकार कर रहे हैं कि पूंजीवादी प्रणाली में खुशी (हैपीनेस) नहीं है. दूसरी ओर यह कह रहे हैं कि व्यवस्था को बदलने में मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद विफल हो गया है. इसलिए वे मूल्यों की परियोजना (प्रोजेक्ट) के बारे में बता रहे हैं. ये मूल्य व्यवस्था को बदल नहीं सकते हैं. विगत के सभी समाज क्रांतिकारी मार्ग में ही बदल गए. पूंजीवादी, साम्राज्यवादी व्यवस्था में बदलाव के लिए क्रांति आवश्यक है. मूल्यों, आध्यात्मिक मार्ग के बारे में बताना निष्क्रियतावाद है. समाजवादी सिद्धांत में पुरोगामी विचारों का सूत्रीकरण है. वहां निजी संपत्ति नहीं है. साम्यवाद में बहुसंख्यक जनता के लिए स्वतंत्रता, समानता, सभी को समान अधिकार इनके जरिए जनता के जीवन को खुशहाल बनाने का कार्यक्रम है. वर्तमान समाज में 90 प्रतिशत जनता के पास ये अवसर उपलब्ध नहीं है.

समाज के क्रांतिकारी बदलाव के तहत ही यह खुशी हासिल करना संभव है. जो वर्ग सत्ता में रहेगा, उस वर्ग के हितों की ही पूर्ति होती है. पूंजीपति सत्ता में रहते हैं तो उनके स्वयं के हितों की पूर्ति करने वाले राज्य, संविधान रहेंगे. मजदूर वर्ग सत्ता में रहता हे तो बहुसंख्य जनता के हितों की पूर्ति होती है. क्योंकि मजदूर वर्ग की कोई निजी संपत्ति नहीं होती है. मुनाफे के लिए जनता के खून पसीने

के खिलाफ लड़ाई में गुप्तता आवश्यक है. वरना दुश्मन की जाल में फंसकर खत्म हो जायेंगे. स्टेटफॉर्वर्ड् सापेक्ष ही रहता है. जब उस समय काल में किसी विषय पर यदि समग्र अध्ययन व जानकारी है तब ही स्पष्ट कुछ कह सकते हैं अन्यथा जो भी स्टेट फॉर्वर्ड् के नाम से कहेंगे वह मनोगतवादी विचार होंगे और उसका परिणाम विपरीत ही होगा. निश्चित ही इतनी लापरवाह कॉमरेड् अनुराधा कभी नहीं थी बल्कि परिस्थिति को भाँपकर विचार रखने की उनमें खूब बौध्दिक क्षमता थी. 'पंचतंत्र' से लेकर 'पतंजली' (बाबा रामदेव की कंपनी) तक आध्यात्मवाद में 'मूल्यों का उपदेश' काफी है. इतने 'ऊंचे' मूल्य रहने पर भी समाज में इतनी विषमता क्यों चलती आई? वर्ग दृष्टि छोडकर मूल्यों की बात करना बेमानी होती है.

इतिहास गवाह है कि इन्हीं आदर्शवादी सिध्दातों ने अपने समय के सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था की सेवा की है. सामाजिक व्यवस्था की भौतिक ढांचा बदले बगैर समतावादी मूल्यों की स्थापना के बारे में सोचना कोरी कल्पना है. यह आस लगाना कि शोषक वर्ग ऊंचे मूल्यों का पालन करेगा, यह 'सांप के सामने बीन बजाने' जैसा है. महान शिक्षक एंगेल्स ने 'ड्युहरिंग का मत खंडन' करते हुए निम्नलिखित विचार रखे थे – ''(अच्छे और बुरे के बीच विरोध) केवल नैतिकता के क्षेत्र में ही प्रकट होता है, अर्थात, मनाव जाति के इतिहास से संबंधित एक क्षेत्र, और यह ठीक इसी क्षेत्र में आखिरी और अंतिम सत्य अत्यंत विरले बोए जाते हैं. ......कोई एतराज़ कर सकता है..... यदि अच्छाई को बुराई से भ्रमित किया जाता है तो समूची नैतिकता का अंत हो जाता है, और हर कोई जो चाहे कर सकता है ..... लेकिन मामले को इतनी आसानी से निपटाया नहीं जा सकता. यदि यह इतना आसान व्यवसाय होता तो निश्चित रूप से अच्छाई और बुराई पर कोई विवाद नहीं होता; सबको पता होता कि क्या अच्छा था और क्या बुरा.''

''(धार्मिक नैतिकता) के साथ–साथ हम आधुनिक–बुर्जुआ नैतिकता और उसके साथ–साथ भविष्य की सर्वहारा नैतिकता भी पाते हैं. .....तो फिर कौन–सी सच्ची है? परम अंतिमता के अर्थ में, उनमें से कोई एक नहीं, लेकिन निश्चित रूप से जिस नैतिकता में स्थायित्व का वादा वाले अधिकतम तत्व शामिल हैं, जो वर्तमान में वर्तमान को उखाड़ फेंकने का प्रतिनिधित्व करता है, भविष्य का प्रतिनिधित्व करता है, और वह है सर्वहारा नैतिकता. (वर्ग के आधार पर नैतिकता से) हम केवल एक ही निष्कर्ष निकाल सकते हैं: मनुष्य, अंततया सचेत या अनजाने में, अपने नैतिक विचारों को उन व्यावहारिक संबंधों जिन पर उनकी वर्ग स्थिति आधारित होती है –– आर्थिक संबंधों जिनमें वे उत्पादन और विनिमय जारी रखते हैं, से प्राप्त करते हैं.''

लायी, स्त्री–पुरुष समानता का उच्च मूल्य स्थापित किया, महिलाओं को अधिकांश क्षेत्रों में प्रवेश की आजादी मिली. दूसरी ओर विश्व के तमाम औपनिवेशिक और अर्ध–औपनिवेशिक देशों की जनता को अपनी आजादी के लिए लड़ने प्रेरित किया. इतना ही नहीं, दुनिया भर के बहुसंख्य देशों में समाजवाद–साम्यवाद की स्थापना यानी वर्गविहीन समाजव्यवस्था की स्थापना के लक्ष्य के साथ कम्युनिस्ट पार्टियों का गठन हुआ. दूसरे विश्व युद्ध के दौरान फासीवाद के खिलाफ, समाजवादी केंद्र को बचाने रूस के 2 करोड़ से भी ज्यादा लोगों ने अपने प्राण न्यौछावर किए, दुनिया भर की कई कम्युनिस्ट पार्टियों, मजदूर संगठनों ने सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयता के ऊंचे मूल्य का पालन करते हुए सोवियत युनियन की जीत में अपनी हिस्सेदारी निभायी.

उसी तरह 1949 की चीनी क्रांति से भी विश्व की उत्पीड़ित जनता एवं मजदूरों में खुशी की लहर दौड़ गयी. चीन में बच्चियों के पैर बांध कर रखने की कुप्रथा की समाप्ति से जो खुशी महिलाओं व बच्चियों को मिली, वह अद्वितीय थी. रूसी और चीनी क्रांतियों ने निजी संपत्ति वाली व्यवस्था को खत्म करने की कोशिश की. सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद को ऊंचा उठाए रखना, गैर बराबरी को दोबारा पनपने न देने के लिए सर्वहारा अधिनायकत्व, सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के कइयों उच्च मूल्य, शारीरिक व मानसिक श्रम के बीच अंतर को दूर करना आदि इन्हीं क्रांतियों की देन हैं. अतएव, शोषणविहीन, वर्गविहीन समाज व्यवस्था – साम्यवादी व्यवस्था में ही मनुष्य असली आजादी, असली खुशी व उच्च मूल्य हासिल कर सकता है. इसीलिए दुनिया के सभी क्रांतिकारी दुश्मन वर्गों के भीषण दमन एवं कठिनाइयों के बीच ही अपने महान लक्ष्य के लिए समर्पित होकर आजाद महसूस करते हैं और खुशी से रहते हैं तथा ऊंचे मूल्यों का पालन करते हैं. यह स्वाभाविक ही है कि जब कोई क्रांतिकारी आंदोलन को छोड़ता है, तब पुरानी सड़ी–गली व्यवस्था का हिस्सा बनकर आजाद और खुश महसूस करता है, उसी सड़ी–गली व्यवस्था के मूल्यों की वकालत करता है. क्योंकि उसका वैश्विक दृष्टिकोण ही बदल जाता है.

जहां तक स्टेटफॉर्वर्ड् बोलने की बात है, वर्ग दुश्मन जहाँ कई किस्म के षडयंत्र करते हुए हमले करता है, कई किस्म के कोवर्ट हैं, इन सारे कुचक्र, जाल और षडयंत्रों के खिलाफ मुकाबला करते हुए, समाजवाद–साम्यवाद के निर्माण के लिए जनयुध्द संचालित करने वाले हमेशा अपने राजनीतिक उद्देश्यों व लक्ष्यों के मामले में खुलापन के साथ ही रहते हैं. हां, दोस्तों को जोडकर रखने तथा दुश्मन की चालों को समझते हुए उन्हें विफल करने हेतु अपने व्यवहार में कई किस्म के दांव–पेंच अपनाते हैं जिनमें से कई गुप्त रखे जाते हैं क्योंकि शक्तिशाली दुश्मन

को चूसने की जरूरत नहीं रहती है. मजदूर वर्ग श्रम, वितरण एवं संपदाओं में समानता की भावना से लैस रहता है. उत्पादन में, उत्पादन संबंधों में वह मूलभूत परिवर्तन लाता है. इससे समाज और व्यक्तियों में नए मूल्य प्रस्फुटित होते हैं. रोम एकी दिन मे नही बन सकता. समाजवाद में भी तुरत–फुरत ये तमाम बदलाव होने की संभावना नहीं रहती है. समाज में पराजित साम्राज्यवादी, पूंजीवादी एवं सामंती ताकतें सदा अड़चन पैदा करती हैं. समाज पर उनकी विचारधारा का असर रहता है. इसीलिए सत्ता हासिल करने वाले मजदूर वर्ग को ऊपरी संरचना में भी कई बार सांस्कृतिक क्रांतियों का संचालन करना पड़ता है. उस तरह वर्ग संघर्ष एवं निरंतर शिक्षा के जरिए व्यक्तियों में बदलाव ला सकते हैं. वर्ग संघर्ष व अच्छे मूल्यों को समाज व व्यक्ति में प्रस्फुटित करने के लिए चीन में माओ के नेतृत्व में संचालित सांस्कृतिक क्रांति नितांत पुरोगामी सिद्धांत साबित हुआ. मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद समाज और व्यक्तियों में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए आवश्यक उन्नत व सच्चा सिद्धांत है. कोबाड ने भी उसी विश्वास के साथ 40 साल क्रांति में काम किया. परंतु उन्होंने साम्यवाद के साथ संबंध विच्छेद कर साम्यवादी परियोजना को खारिज किया. वे यह कह रहे हैं कि अर्ध–औपनिवेशिक, अर्ध–सामंती व्यवस्था में ही अच्छे मूल्य हासिल कर सकते हैं. यह पूरा उलटफेर का मामला है. क्रांतिकारी सिद्धांत एवं व्यवहार के बगैर शून्य से इन मूल्यों को हासिल करना कतई संभव नहीं है. अंततया वह आध्यात्मिक मार्ग बनकर रह जाएगा.

"मनुष्य का अस्तित्व उसकी चेतना द्वारा तय नहीं होता है बल्कि उनका सामाजिक अस्तित्व ही उनकी चेतना को तय करता है. विकास के एक खास मुकाम पर समाज की भौतिक उत्पादक शक्तियां उस समय के उत्पादन संबंधों के साथ संघर्ष में आ उतरती हैं – यह इस बात को केवल कानूनी भाषा में व्यक्त करना भर होगा – उन संपत्ति के संबंधों से संघर्ष में उतरती हैं जिनके चौखट में वह तब तक कार्यरत रही. उत्पादक शक्तियों के विकास रूपों से ये संबंध उनकी बेड़ियों में बदल जाते हैं. इसके बाद एक सामाजिक क्रांति का पर्व (युग) आता है. आर्थिक बुनियाद में हुए परिवर्तन देर–सबेर समूचे महाकाय ऊपरी संरचनाओं के भी बदलाव का कारण बन जाते हैं. ऐसे परिवर्तन के अध्ययन के समय यह हमेशा जरूरी है कि आर्थिक उत्पादन की स्थितियों के भौतिक परिवर्तन, जिसे प्रकृति विज्ञानों की सटीकता के साथ समझा–पहचाना जा सकता है, और कानूनी, राजनीतिक, धार्मिक, कलात्मक तथा दार्शनिक–संक्षेप में, विचारधारा के रूपों–जिनमें लोग इस संघर्ष के बारे में सचेतन हो जाते हैं और इस लड़ाई को लड़ने उतर पड़ते हैं – में अंतर करें, ठीक जैसे किसी व्यक्ति के बारे में कोई

महज उस आधार पर निर्णय नहीं लेता, जिसे कि वह व्यक्ति खुद अपने बारे में सोचता है, कोई उसी तरह ऐसे परिवर्तनकाल का फैसला उसकी (काल्पनिक) चेतना के आधार पर नहीं कर सकता. इसके विपरीत उस चेतना की (तबके) भौतिक जीवन के अंतर्विरोधों से व्याख्या करनी होगी, (तबके) सामाजिक उत्पादन की शक्तियों और उत्पादन संबंधों की कसौटी से (व्याख्या करनी होगी) एशियाई, पुराकालीन, सामंती और आधुनिक बुर्जुआ उत्पादन प्रणालियों को समाज के आर्थिक विकास में युगांतरकारी प्रगति का दर्जा देना होगा."…. मार्क्स; राजनीतिक अर्थशास्त्र की आलोचना में एक अवदान; पृ.20–21)

प्राचिन आध्यात्म के मूल्यों का पुलिंदा उस काल से आज तक शोषित जनता पर थोपा गया, पर उसी समय शोषक वर्ग अपनी मनमानी करते रहें. मूल्य कोई आकाश से टपकी हुई चीज नहीं है. वह भौतिक परिस्थिति का हमारे मस्तिष्क में हुआ प्रतिबिंबन ही है. यह मूल्य कॉमन नहीं रह सकते.

"इंद्रियानुभूतियों के सिवाय पदार्थ अथवा गति में से किसी भी रूप को नहीं समझ सकते; जब गतिशील पदार्थ हमारे ज्ञानेंद्रियों पर कार्य (क्रिया) करता है, तब हमें अनुभूति प्राप्त होती है." (लेनिन, संकलित रचनाएं खंड, 14,पृ.302)

महान शिक्षकों के उपरोक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि समाज में मूल्य सामाजिक स्थिति और उत्पादन की पध्दती के साथ ही पनपते हैं. व्यक्ति की नैतिकता वह किस समाज में रहता है और उसमें कौनसे दर्जे में है, मूल रूप से उसी आधार पर तय होता है. उसके अनुसार वह अपने लिए नैतिक सिस्टम बना लेता है. एक अकेले के सार्वभौमिक मूल्य, वर्ग समाज में सबके कैसे हो सकते हैं? वर्गीय समाज में मूल्य भी वर्ग के अनुसार ही व्यक्त होते हैं. शत्रुतापूर्ण वर्ग अंतर्विरोध के हल के दौरान अपने वर्ग हित के लिए लड़ना ही अच्छे मूल्य होते हैं. आज भारत के समाज में सर्वहारा, किसान, उत्पीड़ित राष्ट्रीयताएं, धार्मिक अल्पसंख्यक, दलित, आदिवासियों के साथ मिल जाना और महिलाओं को समानता और सम्मान देना ही किसी के अच्छे मूल्यों से लैस होने की असली पहचान है. इसे आचरण में लाने का मतलब है, वर्गसंघर्ष में उनके हित के लिए लड़ना.

हमारे सामने व्यवस्था और उत्पादन पध्दति द्वारा स्थापित तीन तरीके के मूल्य हैं. सामंती व्यवस्था के मूल्य, पूंजीवादी व्यवस्था के मूल्य और सर्वहारा के मूल्य. मूल्यों, सिध्दान्तों और आदर्शों का निर्धारण और अमल अपनी वर्गदृष्टि से ही होता है. आजादी और खुशी का मतलब भी वर्ग समाज में अलग–अलग वर्गों के लोगों के लिए अलग–अलग होता है. ऐतिहासिक भौतिकवादी नजरिए से यदि हम मानव समाज के परिणाम को देखें तो यह बात साफ तौर पर समझ में आती है. भारत की वर्ण व्यवस्था और सामंती समाज के दौर में ब्राह्मणवाद ने उन्हें मजबूती से

बनाए रखने के लिए आवश्यक रूप में पुनर्जन्म एव कर्म सिद्धांत बनाया जिसके तहत मेहनतकशों के लिए मेहनत करने, लूट का विरोध न करने को ही अच्छे मूल्य बताए गए. वास्तविक दुनिया में सुख–सुविधा या खुशहाल रहने की कोशिश को पाप की संज्ञा दी गयी. जबकि ऊंचे कहलाए गए वर्णों, वर्गों व जातियों की खुशहाली के लिए लूट, दमन सब कुछ जायज ठहराया गया. वे बिना मेहनत के बैठकर खा सकते थे. यानी मूल्य सबके लिए समान नहीं थे. शंकराचार्य ने तो इस दुनिया को ही मिथ्या बताया. यहां खूब मेहनत यानी वर्णाश्रम धर्म के मुताबिक काम करने से मुक्ति मिलने तथा स्वर्ग में सुख–सुविधा, खुशी से रहने का मौका मिलने के प्रवचनों के जरिए मेहनतकश लोगों को भ्रमित किया गया. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के बीच सुख–सुविधा, खुशी, आजादी, मूल्यों के मामले में असीम भेदभाव को मनु स्मृति में साफ तौर पर देखा जा सकता है. यहां यह गौर करने वाली बात है कि आज ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवादियों द्वारा साम्राज्यवादियों, दलाल नौकरशाही पूंजीपतियों एवं सामंती ताकतों के शासन व शोषण को बरकरार रखने उन्हीं मूल्यों, उसी आध्यात्म को नए–नए रूपों में इस्तेमाल किया जा रहा है. यहां इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि मेहनतकशों का प्रतिनिधित्व करने वाले चार्वाक और लोकायतों ने ब्राह्मणवाद के ठीक विपरीत इस भौतिकवादी दर्शन को सामने लाए कि ऊपर कोई दुनिया नहीं है, यही दुनिया वास्तविक है. जो मेहनत करता है, उसे उत्पादों का उपभोग करना चाहिए. सत्ता की मदद से ब्राह्मणों ने उनका दमन किया.

इससे कोई इनकार नहीं कर सकता है कि 1871 के पेरिस कॅम्यून की स्थापना ने फ्रांस सहित दुनिया भर के मजदूरों व मेहनतकशों के दिलों में बेहद खुशी पैदा की. पूरी दुनिया में ही पहली बार फ्रांस के मजदूरों व मेहनतकशों को राज्यसत्ता में हिस्सेदारी हासिल हुई. 8 घंटे का काम, 8 घंटे का मनोरंजन व 8 घंटे का आराम वाला कानून बन गया जोकि पूंजीवादी फ्रांस में असंभव था. मजदूरों के लिए शोषण व दमन से मुक्ति ही सबसे बड़ी आजादी होती है और उसी से सबसे ज्यादा खुशी मिलती है. जान कुरबान करके भी अपने कॅम्यून को बचाने का जो जज्बा फ्रांस के मजदूरों ने दिखाया, वह सबसे ऊंचा मूल्य है. फ्रांस की बुर्जुआ क्रांति द्वारा सामने लाए गए मुख्य नारे के मानवीय मूल्य – 'आजादी, समानता और भाईचारा' आज भी हासिल करने वाले ऊंचे मूल्य के तौर पर दुनिया भर की उत्पीड़ित जनता के सामने हैं जो समाजवादी क्रांति, साम्यवाद में ही पूर्णतया संभव हैं.

इसे कोई झुठला नहीं सकता है कि 1917 की रूसी क्रांति ने एक ओर रूस में अर्ध गुलामी से किसानों को आजादी दिलायी, उनके जीवन में खुशी व खुशहाली

फ्रांको–प्रष्यन युद्ध के समय शासक वर्गों के बीच संघर्ष के कारण उनकी ताकत हालांकि घट गयी थी, लेकिन इस उद्देश्य के साथ कि क्रांतिकारी पार्टी, मनोगत शक्तियां संगठित नहीं हुई हैं, विद्रोह न करने मार्क्स ने पेरिस मजदूर वर्ग को सुझाव दिया था. फिर भी ब्लांकिस्टों के नेतृत्व में विद्रोह के लिए तैयार मजदूर वर्ग सत्ता हथियाकर पेरिस में 70 दिनों तक अधिकार चलाया. सत्ता पर काबिज मजदूर वर्ग की इच्छा के मुताबिक मार्क्स ने इस क्रांति को ऊंचा उठाए रखा. पेरिस की हार के बाद मार्क्स ने उस हार के लिए राजनीतिक दांव–पेंचों में हुई गलतियों को चिन्हित कराते हुए पहली बार सर्वहारा तानाशाही की आवश्यकता के बारे में बताया. उसी तरह सैद्धांतिक व राजनीतिक तौर पर संगठित पार्टी की जरूरत के बारे में भी बताया. क्रांति के कायम रहने व दुश्मन को पूरी तरह हराने के लिए दुश्मन के बैंकों पर कब्जा जमाने की आवश्यकता के साथ–साथ और भी कुछ विषयों के बारे में मार्क्स ने बताया. मजदूर वर्गीय क्रांतियों का दिशानिर्देशन किया. पेरिस विद्रोह के अनुभवों का अवलोकन करने से मार्क्स की शिक्षा के जरिए यह समझ में आ रहा है कि क्रांतियों की सफलता के लिए शासक वर्गों का युद्ध संकट में डूबना जितना आवश्यक है, उतनी ही जरूरी है, सैद्धांतिक तौर पर हथियारबंद मजबूत पार्टी एवं सही कार्यनीति.

पेरिस कम्यून के अनुभवों से मार्क्स द्वारा उपलब्ध सिद्धांत का रूसी परिस्थितियों के साथ सटीक तौर पर लागू कर प्रारंभ से ही लेनिन ने असली मार्क्सवादी सिद्धांत की बुनियाद पर सर्वहारा वर्ग को संगठित करने के साथ–साथ लौह अनुशासनयुक्त बोल्शेविक पार्टी का निर्माण किया. उस हेतु उन्होंने मेन्शेविकों के अलावा कई अन्य सोशल डेमोक्रैटों के साथ सैद्धांतिक, राजनीतिक, सांगठनिक संघर्ष किया. पूंजीवाद के साम्राज्यवादी अवस्था में कदम रखने का विश्लेषण करने वाले लेनिन ने यह कहा कि ऐसी परिस्थितियों में किसी एक देश में क्रांति संभव है, साम्राज्यवादी जंजीर में चूंकि रूस एक कमजोर कड़ी के रूप में है इसलिए रूस में क्रांति संभव है. 1905, 1917 में शासक वर्गों के बीच के युद्धों में मौजूद अनुकूल परिस्थितियों को उन्होंने यद्यपि ध्यान में लिया, फिर भी मजदूर वर्ग की सन्नद्धता, मजदूर–किसान मैत्री को अत्यधिक महत्व दिया. रूस में क्रांति को सफल करने वाली बोल्शेविक पार्टी के निर्माण के लिए उन्होंने 25 साल कार्य किया. यद्यपि पहले विश्व युद्ध ने बाहरी कारण के तौर पर रूसी क्रांति के लिए मदद पहुंचायी, लेकिन प्रधानतया बोल्शेविक पार्टी निर्माण, उपयुक्त दांव–पेंचों के कारण ही रूस में क्रांति सफल हुई. यदि हम यह कहते हैं कि रूसी क्रांति के लिए पहला विश्व युद्ध ही प्रधान कारण है, फिर उसी समय जर्मनी सहित कई युरोपीय देशों में क्रांतियां सफल नहीं

भी नहीं हो सकता है, जैसा कि इस सिद्धांत के अनुसार बहुमत निर्णय करता है, जो तब सभी के लिए बाध्यकारी होता है. व्यवहार में, निश्चित रूप से, नेता और उसकी मंडली अधिकांश मामलों को तय करती है और अन्य लोग मानने के लिए मजबूर होते हैं.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 209)

जनवादी केंद्रीयता कम्युनिस्ट पार्टी के व्यवहार के लिए प्राण समान है. जैसा कोबाड कह रहे हैं, वह पार्टी में किसी एक व्यक्ति या उसकी कोटरी द्वारा तय मुताबिक बाकी सभी के चलने का मामला कतई नहीं है. वे चरम अवसरवाद से इसी को सच मानने सभी से कह रहे हैं. इसी उसूल के अनुसार पार्टी में सर्वोच्च स्तर पर 40 साल तक उन्होंने काम किया. 1985 के संकट के दौरान जब वे केंद्रीय कमेटी के बहुमत में थे, पार्टी पर उनके निर्णयों को थोपने की जिद पकड़कर आखिर केंद्रीय कमेटी में विभाजन भी लाए. फिर इस उसूल पर आज यह आपत्ति क्यों जो उस दिन नहीं थी? आज वे अधःपतित होकर अवसरवादी पद्धतियों को अपना रहे हैं, इसीलिए इस निर्णय पर पहुंच गए हैं. दूसरी ओर वे जनवादी केंद्रीयता के सारतत्व को नहीं समझ पाने के कारण यह कुतर्क पेश कर रहे हैं. जनवादी केंद्रीयता के उसूल को कम्युनिस्ट पार्टियों में किस तरह अमल करना चाहिए, इस मुद्दे पर कॉमरेड् माओ ने सैद्धांतिक रूप से ऐसा विवरण दिया.

''हमें केंद्रीयता–जनवाद, इन दोनों से युक्त, अनुशासन–आजादी इन दोनों से युक्त, उद्देश्य में एकता–व्यक्ति की मानकिसक स्थिरता इन दोनों से युक्त जीवटता छलकती ताकतवर राजनीतिक वातावरण का सृजन करना चाहिए. ऐसे राजनीतिक वातावरण के अभाव में जनता के उत्साह को जागृत करना असंभव होता हैं. बिना जनवाद के कठिनाइयों को पार करना संभव नहीं होगा. परंतु यह भी सही है कि केंद्रीयता के नहीं रहने से ऐसा करना और भी असंभव हो जाता है.'' (एमएसडब्ल्यू, अंग्रेजी, वॉल्यूम 8, 'कियांग्सी कम्युनिस्ट लेबर युनिवर्सिटि को', प्वाइंट नंबर 2, दि प्रॉब्लेम ऑफ डिमॅक्रॅटिक सेंट्रलिज्म, पेरा 7)

इस तरह कॉमरेड् माओ ने जनवादी केंद्रीयता के सारतत्व को सटीक समझाया.

जैसा कि माओ ने कहा, जनवादी केंद्रीयता व्यवहार में यह नहीं कहता है कि शुष्क अल्पमत–बहुमत पद्धति का पालन करना चाहिए. जीवट राजनीतिक वातावरण में यह उसूल अमल होता है. इसीलिए कम्युनिस्ट पार्टियों में चाहे जितने भी भिन्नमत रहे, ऐक्य मानसिकता के साथ काम करते हैं. पार्टी में राजनीतिक तौर पर ताकतवर ढंग से काम करते हुए दुश्मन का मुकाबला करने में, जनता का नेतृत्व करने में वह बतौर मार्गदर्शक रहता है. इसीलिए नक्सलबाड़ी के समय से हजारों लोगों ने स्वेच्छा से क्रांति के लिए प्राण न्योछावर किए. बहुमत के नाम पर कुछ लोग जबर्दस्ती करते हैं और नौकरशाही तरीके से व्यवहार करते हैं, ऐसा

वातावरण यदि पार्टी में रहता तो पार्टी के नेतृत्व में हजारों लोग क्यों बलिदान देते? कुरबानी से डरकर क्रांतिकारी आंदोलन से भागने वाले कोबाड जैसे लोग ही गलत आरोप लगाते हैं. उतना ही नहीं, साम्राज्यवादियों के सुर में सुर मिलाते हुए कोबाड यह दुष्प्रचार कर रहे हैं कि जनवाद के अभाव की वजह से पार्टी में व्यक्तिवाद एवं कम्युनिस्ट शासन में तानाशाह पैदा हो गए हैं और वहां सब कुछ तानाशाही रहती है. जबकि पार्टी में रहते समय कोबाड का व्यवहार गैर–सांगठनिक, निर्माण में न बने रहने की मानसिकता वाला और अतिजनवादी था. इसीलिए वे पार्टी के संचालन के मौलिक उसूल जनवादी केंद्रीयता पर हमला कर रहे हैं.

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के सांगठनिक उसूलों की 6वीं एवं 7वीं धाराएं यह स्पष्ट करती हैं कि जनवादी केंद्रीयता का उसूल सभी कम्युनिस्ट गतिविधियों को केंद्रीकृत करने एवं नेतृत्व तथा साधारण पार्टी सदस्यों, उसी तरह पूरी पार्टी एवं उत्पीड़ित जनता के बीच आपस में जीवंत संबंधों को विकसित करने में मददगार है. जैसा कोबाड कह रहे हैं, जनवादी केंद्रीयता आजादी एवं जनवाद को हानि पहुंचाने वाली नहीं है. कोबाड यह कह रहे हैं कि जनवाद, राज्य के एक निर्माण से संबंधित समस्या नहीं है और वह व्यक्ति में आंतरिक तौर पर रहना चाहिए. हां, यह सही है कि व्यक्ति में जनवादी विचार उत्पन्न होना चाहिए. वह जनवाद के लिए उपयोगी होगा. परंतु समाज में जब राजनीतिक व्यवहार के जरिए परिवर्तन होता है, तभी व्यक्ति में परिवर्तन आता है. व्यक्ति समाज के हिस्से के रूप में रहता है. समाज से अलग मनुष्य जी नहीं सकता है. हिंदू दर्शन में जैसा कहा जाता है कि कहीं बैठकर तपस्या करने से ऋषियों को ज्ञान प्राप्त हुआ है, एक भ्रम है. वह समाज को धोखा देकर अपना पेट भरने के लिए काम आने वाले दर्शन के सिवाय और कुछ नहीं है. मान लिया जाए कि कोई व्यक्ति यदि अपने दीर्घ विचार के जरिए ज्ञान हासिल किया हो. तब भी उस व्यक्ति को हासिल ज्ञान सामाजिक तौर पर प्राप्त अनुभव के सिवाय कोई दूसरे स्रोत से संभव नहीं है. मार्क्सवाद के अनुसार समाज की उत्पादन प्रणाली पर आधारित होकर ही मनुष्य के विचार बनते हैं. समाज द्वारा व्यक्ति को प्राप्त होने वाले विचार उस व्यक्ति को रूपांतरित करते हैं. उस तरह वह व्यक्ति उस समाज के निर्माण में सक्रिय व सकारात्मक भूमिका निभाता है. समाज में भी गलत रुझान वाले मनुष्य रहते हैं. वे नकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं. वे तानाशाह भी बन सकते हैं. समाज के आगे बढ़ने में वे रोड़ा भी बन सकते हैं. इसलिए समाज या किसी निर्माण को प्रधान बनाकर विचार करके किसी भी विषय के बारे में उसूल बनाना होगा. समाज में पहले आजादी और जनवाद रहना चाहिए. समाज के वर्ग समाज में तब्दील होने के बाद हजारों सालों से मनुष्य आजादी, जनवाद के लिए संघर्ष करता आ रहा है. फ्रांस की क्रांति में

दरअसल आधे अधुरे ज्ञानार्जन के लोग अथवा अधिभौतिक सोच के लोग ही कहते हैं. पर कोबाड जैसे कम्युनिज्म के जानकार व्यक्ति जब इस तरह की बातें रखते हैं तो यही अर्थ निकलता है कि वो जानबूझकर ऐसा कर रहे हैं. क्या कोबाड जानते नहीं कि मानव अपनी जीवनयापन की क्रिया शुरूआत से ही सामाजिक रूप से ही करते हैं? क्या समाज और मनुष्य को अलग किया जा सकता है? क्या कोबाड को यह बताने की आवश्यकता है कि निजी संपत्ति और व्यक्ति स्वतंत्रता के प्रश्नों का मार्क्स–एंगेल्स ने कम्युनिस्ट घोषणापत्र में ही उत्तर दे दिया था?

''पूंजीवादी समाज में, इसीलिए भूत, वर्तमान पर हावी रहता है; कम्युनिस्ट समाज में वर्तमान, भूत पर हावी रहता है. पूंजीवादी समाज में पूंजी स्वतंत्र और व्यक्तित्व से लैस होती है जबकि जिंदा इंसान पराधीन और व्यक्तित्व विहीन हो जाता है.'' (कम्युनिस्ट घोषणा पत्र के 'सर्वहारा और कम्युनिस्ट्स' का पेरा 22)

मानव समाज के एक से दुसरे समाज व्यवस्था में रूपांतरित होने में वर्ग संघर्ष ही मुख्य चालक शक्ति रही है. **उत्पादक शक्तियों और उत्पादन संबंधों के बीच का अंतर्विरोध ही समाज की चालक शक्ति है.** हर परिवर्तन में दबे हुए समाज ने तत्कालिन सत्ताधारी वर्ग के खिलाफ संघर्ष किया है और नये समाज की रचना की है.

मूल्यों की बात करने वाले कोबाड विश्व सर्वहारा द्वारा मार्क्सवादी सिध्दान्त के सहारे हासिल बहुमूल्य उपलब्धियों को नहीं देख पा रहे. रूस और चीन के सर्वहारा और शोषित जनता द्वारा बलिदानों के जरिए हरेक क्षेत्र में हासिल मानव मूल्यों को नहीं देख पा रहे हैं. वह नही देख पा रहे हैं कि इन दो क्रांतियों ने मार्क्सवाद में नये और उन्नत मूल्य गढ़े हैं. दुनिया के सामने मार्क्सवाद ने पूंजीवाद के विकल्प को धरातल पर उतारकर विश्वास को यकीन में बदल दिया. विश्व कम्युनिस्टों का बढ़ा हुआ यह आत्मविश्वास कोबाड को नजर नहीं आ रहा है. इस आदर्श को लेकर फिलिप्पीन्स, तुर्की, भारत एवं अन्य देशों में क्रांतिकारी आंदोलन एवं जनयुध्द चल रहे हैं जिनकी आंच कोबाड तक नहीं पहुँच रही है क्योंकि उन्होंने अधिभौतिकवादी और आध्यात्मिक चादर ओढ़ रखी है.

क्या विश्व युद्धों के दौरान ही क्रांतियां संभव हुई?

कोबाड यह कह रहे हैं कि विश्व युद्ध के समय में ही दुनिया के विभिन्न देशों में क्रांतियां संभव हुई. वो यह कह रहे हैं कि फ्रांको–प्रष्यन युद्ध के समय पेरिस क्रांति, पहले विश्व युद्ध के दौरान रूसी क्रांति, दूसरे विश्व युद्ध के दौरान चीनी क्रांति संभव हुई हैं. वर्तमान परिस्थितियों में उस तरह की युद्ध परिस्थितियां चूंकि नहीं हैं इसलिए दुनिया में, भारत में भी क्रांति संभव नहीं है.

कोबाड ऐतिहासिक सच्चाइयों को भुलाकर बात कर रहे हैं.

मरोड़ कर यह कहने की चेष्टा करे कि केवल आर्थिक पहलू ही एकमात्र निर्णायक तत्व हैं, तो वह उस प्रतिपादन को एक अर्थहीन, अमूर्त और हास्यापद उक्ति में बदल रहा है. यह सही है कि आर्थिक परिस्थिति आधार है, पर ऊपरी संरचना के विभिन्न अंग–वर्ग संघर्ष के राजनीतिक रूप एवं उसके नतीजें, यानी युद्ध में जीतने के बाद विजेता वर्ग द्वारा स्थापित किए जाने वाले संविधान वगैराह के न्याय संबंधी रूप, भिन्न संघर्षों में शामिल लोगों के मन में इन वास्तविक संघर्षों के प्रतिफलन, राजनीतिक, न्याय शास्त्र संबंधित व दार्शनिक सिद्धांत, धार्मिक विचारों और उनसे विकसित सैद्धांतिक व्यवस्थाओं के फलस्वरूप उनका परिणाम भी ऐतिहासिक संघर्ष की दिशा और मार्ग पर अपना प्रभाव डालते हैं और कई बार उनके रूप को खास तौर पर निर्धारित भी करते हैं. इन सब तत्वों की अंतर्क्रिया है जिसमें अनंत स्वस्फूर्त घटनाओं के बीच (यानी वस्तुओं, घटनाओं के बीच का अंदरूनी आंतरिक संबंध इतनी लंबी दूरी का है, या निरूपण के लिए इस कदर असंभव है कि हम ऐसा मान सकते हैं कि वह है ही नहीं या उसे उपेक्षित किया जा सकता है), आर्थिक गतिविधि अंततया स्वयं को आवश्यक बना देता है. अन्यथा इतिहास की किसी भी अवस्था के साथ भी इस सिद्धांत का क्रियान्वयन पहले किस्म के सरल समीकरण के हल से भी आसान हो जाता है''. (जे. ब्लौह को एंगेल्स का पत्र, 1890, मार्क्स–एंगेल्स संकलित रचनाएं 4. पृष्ठ 138)

उसी पत्र में उन्होंने और भी इस तरह विवरण दिया.

''हमारे इतिहास का हम ही निर्माण करते हैं. लेकिन प्रथमतया अति निर्दिष्ट संबंधों के मुताबिक, ठोस परिस्थितियों के तहत हम वह काम करते हैं. इनमें आर्थिक संबंध व परिस्थितियां अंतिम रूप से निर्णायक हैं. परंतु राजनीतिक एवं अन्य विचार, परिस्थितियां, असल में मनुष्यों के दिमागों का पीछा करने वाली परंपराएं भी निर्णायक न सही कुछ भूमिका निभाती हैं....अंतिम नतीजा कभी भी कई वैयक्तिक इच्छाओं के बीच – उनमें से फिर एक–एक, जीवन से संबंधित कई विशेष परिस्थितियों के कारण उस तरह तैयार किया गया है – संघर्षों में से उत्पन्न होता है, इतिहास निर्मित होने का तरीका यही है. इस तरह प्रतिच्छेदन करने वाली असंख्य शक्तियों, समांतर चतुर्बुजी ताकतों की अनंत श्रृंखला जिनके परिणामस्वरूप ऐतिहासिक घटना घटती है.'' (पृष्ठ. 138–139)

सर्वहारा जनवाद को क्या कोबाड जानते नहीं है कि समाजवाद से साम्यवाद तक के सफर में सर्वहारा की तानाशाही अनिवार्य है? क्या कोबाड जानते नहीं कि समाजवादी या नवजनवादी क्रांतियों का स्वभाव सामाजिक है एवं मनुष्य के सर्वांगीण विकास की बात उसमें निहित हैं? मार्क्सवाद आर्थिक सिध्दान्त है, कम्युनिस्ट आर्थिक क्रांति करते हैं, समाज की अन्य विधाओं के बारे में नहीं सोचते, ऐसा

बुर्जुआ वर्ग ने आजादी, जनवाद, भाईचारे का नारा दिया. मजदूर वर्ग सहित सभी ने उस नारे को लेकर संघर्ष किया. लेकिन उसके बाद बुर्जुआ वर्ग ने अपने शोषण को जारी रखने के लिए उस नारे का उपयोग किया. अब मुक्त बाजार तक वह सीमित हो गया. आजादी व जनवाद के लिए मजदूर वर्ग को फिर से संघर्ष करना होगा. उसी के तहत मजदूर वर्ग को सत्ता के लिए संघर्ष करना होगा. मजदूर वर्ग द्वारा हासिल की जाने वाली सत्ता के जरिए ही बहुसंख्यक जनता की आजादी और जनवाद की गारंटी रहेगी. समाजवाद स्थापित होगा. इसलिए सर्वहारा तानाशाही को अमल करते हुए सांस्कृतिक क्रांतियों के जरिए समाज एवं मनुष्य में परिवर्तन लाने का प्रयास करना चाहिए. इस तरह ही 90 पतिशत जनता को आजादी व जनवाद प्राप्त होंगे. इसके सिवाय दूसरा कोई चारा नहीं है.

निस्वार्थ भाव से सर्वोच्च मानव मूल्य के लिए जनमुक्ति की राह में हजारों की कुर्बानी आंतरिक आजादी के उच्च स्तर के मूल्य हैं:

कोबाड का कहना है कि भारत के कम्युनिस्टों में भी अच्छे मूल्य नहीं हैं और आंतरिक जनवाद भी नहीं हैं. कम्युनिस्ट पार्टी, पार्टी की जनवादी केन्द्रीयता पध्दति और आत्मालोचना–आलोचना यह नाममात्र हैं. संगठनों में लीडर–कैडर संबंध कार्यालयों में बॉस और क्लर्क के बीच का संबंध जैसा रहता है. यह कोबाड द्वारा पार्टी पर कीचड़ उछालने की नाकाम कोशिश के सिवाय और कुछ नहीं. अब तक के अपने जीवनकाल में उच्च स्तर के बुद्धिजीवी का तमगा लिए इतराते रहे, किंतू आंदोलन के सामने उत्पन्न सैध्दान्तिक, राजनीतिक सवालों को हल करके उसे आगे लेकर जाने में असमर्थ रहे, धरातल पर अपने विचारों को उतार पाने में विफल रहे. क्योंकि वे जमीन से जुड़ते ही नहीं थे. महाराष्ट्र के अपने नेतृत्व के आंदोलन को सुधारवाद के दलदल में डूबने से बचा नहीं सके. आंदोलन की समस्या पर ध्यान कम और नेतृत्वकारी व्यक्तियों में कौन श्रेष्ठ, इस जद्दोजहद में ज्यादा से ज्यादा शक्ति खर्च करने वाले बुध्दिजिवी को दुसरों पर ठीकरा फोड़ना जचता है.

पार्टी में आंतरिक संघर्ष ''एकता–संघर्ष–मजबूत एकता'' के सिध्दान्त पर संचालित होता आ रहा है जिसका माध्यम है, आत्मालोचना–आलोचना. महाराष्ट्र का आंदोलन जिन समस्याओं का सामना कर रहा था, उन पर 2009 में कोबाड ने जो आत्मालोचना की थी, जिसमें उन्होंने महाराष्ट्र में पनप रहे सुधारवाद की प्रमुख जिम्मेदारी स्वयं उठाई थी, क्या वह नाममात्र की थी? क्या किसी ने उन्हें जबरदस्ती की थी कि वो यह आत्मालोचना करें? ताज्जुब की बात यह है कि 40 साल के बाद अब, वह भी जेल जाने के बाद उन्हें यह समझ में आया कि पार्टी में आंतरिक जनवाद नहीं है और नाममात्र की आत्मालोचना होती है. 'भारतीय

कम्युनिस्ट' शब्द प्रयोग करके कम्युनिस्टों और संशोधनवादियों के सभी रंगो को उन्होंने एक ही श्रेणी में लपेटा. आम तौर पर आरएसएस ऐसा शब्द प्रयोग करती है. जिन्हें संशोधनवादी करार दिया गया है उन्हें कम्युनिस्टों की श्रेणी में हम गिनती नहीं करते, कोबाड भी नहीं करते थे. जहाँ तक भाकपा (माओवादी) का सवाल है और उसके इतिहास का तो यह अपने आप में जीता जागता उदाहरण है कि किस तरह उसने दो दिशाओं के बीच संघर्ष और जनवादी केन्द्रीयता के आधार पर भारत की क्रांतिकारी शक्तियों को एकताबध्द किया. अगर जनवाद न होता, तो इतने साल कोबाड उस पार्टी में कैसे टिकते? अगर विचारों का संघर्ष न होता तो वह प्रक्रिया क्या थी जिसके तहत कोबाड अपने विचारों को पकड़कर 1985 में तत्कालीन पीपुल्स वार की केंद्रीय कमेटी के बहुमत के साथ मिलकर पार्टी से अलग हुए थे और फिर जुड़ गए थे? फिर वह प्रक्रिया क्या थी कि महाराष्ट्र के आंदोलन में सांगठनिक उसूल के उल्लंघन के मामले में कोबाड पर कार्रवाई हुई थी और फिर बाद में उनके कामकाज की समीक्षा कर सीसी द्वारा उन्हें 2001 में वापस नेतृत्व में लाया गया? 21 सितंबर 2004 को भाकपा (मा–ले) (पीपुल्सवार) और एमसीसीआई की एकता हुई, शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोधों का हल होकर एकता कायम हुई. इस ऐतिहासिक प्रक्रिया का देश और दुनिया की क्रांतिकारी ताकतों ने स्वागत किया जिसके साक्षी खुद कोबाड भी हैं. फिर भी वो आज कह रहे हैं कि आंतरिक जनवाद नहीं है? 2007 में संपन्न भाकपा (माओवादी) की एकता–9वीं कॉंग्रेस की उस ऐतिहासिक प्रक्रिया को कोबाड क्या नाम देंगे? एकता की प्रक्रिया के दौरान सामने आए मतभेदों से संबंधित मामलों मसलन युग स्वभाव, भारत की अर्ध औपनिवेशिक व अर्ध सामंती व्यवस्था में दलाल नौकरशाही पूंजीपति वर्ग की भूमिका तय करना कि वह साम्राज्यवादी शोषण का प्रधान वाहक/प्रिंसिपल वेहिकल है या नहीं, पंजाब में कृषि विकास की दशा, जाति प्रश्न आदि पर दो साल तक पूरी पार्टी में सामान्य सदस्यों से लेकर सीसी तक और अंत में कॉंग्रेस में हुई घमासान चर्चा और उसके बाद पारित की गयी दस्तावेज जिनकी रोशनी में देश का क्रांतिकारी आंदोलन चल रहा है, इन सबको नकारते हुए यह वक्तव्य देना कि पार्टी में आंतरिक जनवाद नहीं है, पार्टी को तोडफोड करने की कुटिल नीति के सिवाय और कुछ नहीं.

कोबाड का पार्टी के आंतरिक जनवाद पर सवाल खड़ा करना या तो जान बूझकर है, या जो वो सोचते थे, उस पर दुसरों को कन्विन्स करने लायक आधार या दलील मुहैया करने में सफल नहीं होने की कमी उन्हें अपने आप में खाए जा रही थी और वह बाहर निकलकर अब इस वाह्यात बयान में व्यक्त हो रही है. कोबाड के व्दारा पेश किए गए कौनसे ऐसे विषय हैं जिन्हें पार्टी ने चर्चा में नहीं

प्रत्यक्ष आंदोलन द्वारा ही, क्रांति द्वारा ही संभव है; इसलिए शासक वर्ग को उखाड फेंकना और किसी तरह संभव नहीं होता है, उतना ही नहीं, उसे उखाड़ फेंकने वाले वर्ग को केवल क्रांति के जरिए ही पीढ़ियों से अपने भीतर समाए कचरे को साफ कर, नए समाज का निर्माण करने में उपयुक्त क्षमतावान वर्ग के रूप में तैयार होने के लिए भी यह क्रांति आवश्यक है.'' ('जर्मन आइडिऑलॅजि' में साम्यवादी क्रांति की आवश्यकता का चौथा बिंदु, पृष्ठ 88)

वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित होकर विगत 100 सालों से भी ज्यादा समय से समाजवादी समाज निर्माण की प्रक्रिया जारी है. समाजवाद को साम्यवाद की ओर आगे बढ़ाने के लिए वर्ग संघर्ष एवं सांस्कृतिक क्रांतियों को अत्यंत कंटीले रास्ते में दीर्घकाल तक संचालित करना पड़ता है. उस हेतु काफी हिम्मत व धीरज की जरूरत होती है. सिर्फ 40 सालों में ही क्रांति से पीछे मुड़कर कोबाड उस सिद्धांत पर हमला करते हुए मजदूर वर्ग को अधःपतित करने विफल प्रयास कर रहे हैं. सामाजिक परिवर्तनों की लंबी लड़ाइयों तथा लंबे क्रांतिकारी सैद्धांतिक संघर्षों को समझे बगैर यह बात आसानी से दिमाग में नहीं उतरती हैं.

कोबाड का कहना है, ''अगर खुशी एजेंडे में कहीं नहीं है, तो अनिवार्य रूप से सभी नकारात्मक मूल्य रेंगने लगेंगे. अगर हम पूरी परियोजना के बारे में सोचे बिना अपने लक्ष्य को केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित रखते हैं, तो उस एकमात्र लक्ष्य को प्राप्त करने, इन अन्य पहलुओं को नकारने की प्रवृत्ति बन सकती है. निरपवाद रूप से यह अदूरदर्शी है जैसा कि हमने रूस और चीन में देखा है जहां नए शासक नए मालिक बन जाते हैं, हालांकि आर्थिक लाभ से कोई इनकार नहीं कर सकता है.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 208, 209)

कोबाड की ही तरह इतिहास में कुछ लोगों द्वारा मार्क्सवाद को आर्थिक नियतिवाद करार देकर भर्त्सना करने के संदर्भ में एंगेल्स ने निम्नांकित जवाब दिया.

इतिहास के बारे में उनके द्वारा प्रतिपादित भौतिकवादी दृष्टिकोण को आर्थिक नियतिवाद के रूप में विकृत करने की भर्त्सना करते हुए 1890 में जोसेफ ब्लौह को लिखे पत्र में एंगेल्स ने यह स्पष्ट किया कि सिर्फ आर्थक मामला अकेले ही निर्णायक है, ऐसा वे स्वयं या मार्क्स ने नहीं कहा.

(जोसेफ ब्लौह को लिखे एंगेल्स के पत्र से – मार्क्स, एंगेल्स रचनाएं पृष्ठ 394–98)

"इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा के मुताबिक इतिहास में चरम निर्णायक तत्व उत्पादन और असली जीवन का पुनरूत्पादन (प्रजनन) हैं. न तो मार्क्स ने और न मैंने ही कभी इससे ज्यादा का कोई दावा किया है. अतः अगर कोई इसे

सामाजिक साम्राज्यवादी शासक वर्ग के शी–जिन–पिंग गुट के नेतृत्व में वहां की पार्टी सांस्कृतिक क्रांति की खुलकर निंदा करने का साहस नहीं कर रही है.

मार्क्सवाद के महान शिक्षकों द्वारा बार–बार कही गयी इस बात कि सर्वहारा क्रांति के सफल होने के साथ ही समाजवादी समाज की स्थापना से संबंधित समस्या का स्वयमेव हल नहीं होता है, को हमने ऊपर देखा है. समाजवादी संबंध पूंजीवादी वर्गीय संबंधों की तरह पुरानी व्यवस्था के गर्भ से पैदा नहीं होते हैं. वे मनुष्य के चेतनापूर्वक कार्य से ही अस्तित्व में आते हैं. लंबे समय तक वर्ग संघर्ष को संचालित करने के जरिए, दुनिया भर में साम्राज्यवाद का खात्मा करने के जरिए, शोषक वर्गीय विचारधारा, संस्कति, आचार, व्यवहार, आदतों का समूल उन्मूलन एवं नये वैश्विक दृष्टिकोण को विकसित करने के जरिए ही समाजवादी समाज स्थापित होता है. यह अत्यंत मुश्किल भरा मार्ग है. इसके अलावा कोई हल्का मार्ग नहीं है. इस परिवर्तनकारी अवस्था में राज्य को एक मुख्य भूमिका निभानी होगी. परंतु जनता की क्रियाशील भूमिका जैसी–जैसी बढ़ती है, राज्य की भूमिका कम होती जाती है. आखिर वर्गविहीन कम्युनिस्ट समाज में उसकी आवश्यकता ही नहीं रह जाती है. इसलिए तब वह अदृश्य हो जाती है. कम्युनिस्ट विगत क्रांतियों के बाद के समाजों के अनुभवों को लेते हैं. यह चिह्नित कर कि राज्य को सर्वेसर्वा बनाना ठीक नहीं है, जनदिशा पर आधारित होकर, वर्ग संघर्ष को तेज करते हुए, कम्युनिस्ट यह कोशिश करते हैं कि सचेतन जनता सभी क्षेत्रों में अपनी गतिविधियां संचालित करें. आज विभिन्न देशों में क्रांतियों का नेतृत्व करने वाली सभी कम्युनिस्ट पार्टियां विगत के अनुभवों से सीख लेते हुए आगे बढ़ रही हैं.

महान शिक्षाकों ने समाजवादी निर्माण में मजदूर वर्ग के सामने उत्पन्न होने वाली समस्याओं का सैद्धांतिक तौर पर विश्लेषण कर कम्युनिस्ट पार्टियों का दिशानिर्देशन किया. पुराने समाज के दुष्ट प्रभाव कितना प्रगाढ़ रहता है, इसे चिह्नित कर मार्क्स ने यह कहा कि अंतरयुद्धों व जन संघर्षों में फौलाद बने बगैर समाजवादी समाज निर्माण संभव नहीं होता है.

''...हम मजदूरों से क्या कहते हैं कि आप लोगों को पंद्रह, बीस, पचास साल भी अंतरयुद्धों, जन संघर्षों में सुदृढ़ बनना होगा. वह मात्र संबंधों को बदलने के लिए ही नहीं, बल्कि स्वयं आप लोगों को बदलने व राजनीतिक कुशलता अर्जित करने के लिए भी जरूरी है.''

अपने 'जर्मन आइडिऑलॅजि' पुस्तक में उन्होंने इस बात का और स्पष्टीकरण दिया. ''व्यापक पैमाने पर इस कम्युनिस्ट चेतना को विकसित करने एवं लक्ष्य को सफल बनाने के लिए मनुष्यों में व्यापक बदलाव की आवश्यकता है. यह बदलाव

लिया? कौनसे विषय हैं जो अनुत्तरित हैं? सही मायने में कोबाड को स्वयं से पूछना चाहिए कि क्या उन्होंने कभी भारत की क्रांति के सामने मौजूद सैध्दान्तिक, राजनीतिक प्रश्नों का गहन अध्ययन कर नई उन्नत सोच, नई राह पार्टी के सामने रखी? इतने साल क्रांतिकारी आंदोलन के साथ जुड़े रहने के बावजूद कोबाड अपनी बौध्दिक क्षमता को और उँचाई पर क्यों नहीं ले जा पाए जिसकी उनसे पार्टी उम्मीद करती थी? अपनी एक तरह की बौध्दिक क्षमता को उसी स्तर पर बनाए रखे. वह क्षमता आगे के लिए एक छलांग क्यों नहीं ले पाई? क्योंकि वो आंदोलन के साथ जुडकर तो रहे, केन्द्रीय कमेटी में भी रहे पर आंदोलन को कभी दिल से अपनाए नहीं. हमेशा एक किस्म का अंतर बनाकर रहे. इसलिए उनके राजनीतिक लेखन भी उस तरह की नयी दृष्टि प्रदान नहीं करते जिससे कि एक कार्यकर्ता को ऊर्जा और जोश प्राप्त हो. उनके ज्यादातर राईटिंग्ज में विश्लेषण कम और इन्फॉर्मेशन ज्यादा रहता है. एक रिसर्च स्तर पर वो नहीं हैं. इस संबंध में उन्हें समय–समय पर बताया जाता रहा. जमीन से वास्तविक रूप से जुडकर नहीं रहने के परिणाम स्वरूप (10 साल के जेल जीवन ने उसमें आग में घी डालने का काम किया) उनकी बुद्धि अधिभौतिकवाद और मनोगतवाद के दायरे में सिमटकर रह गया, मार्क्सवाद से अलग हो गयी. फिर उस बुध्दि को बलिदान करने वाले मूल्य कैसे दिखेंगे?

अपनी उम्र के चार दशक क्रांतिकारी के रूप में जीवन बिताने वाला शख्स गरीब, शोषित जनता के आंदोलन का नेतृत्व करने वाली पार्टी के बारे में अपनी सुविधानुसार आसानी से कह देता है कि मैं वह नहीं हूँ. अवसरवाद का यह नंगा रूप है. मजदूर, किसान, दलित, महिला, आदिवासी और अन्य शोषित जनता अपने कर्तत्व में आगे बढ़कर ही इस झूठी श्रेष्ठता को तोड़ सकती है. भारत के कम्युनिस्टों के सामने भारतीय परिस्थिति में मार्क्सवाद को अमल करने का सवाल ही मुख्य होता है. इस सवाल पर तो कोबाड अपनी बुध्दि खर्च नहीं कर पाए. उल्टा, प्रमाणित हो चुके सिध्दान्तों की मनोगतवादी, अवैज्ञानिक आलोचना रखने की शर्मनाक कोशिश कर रहे हैं. जनवादी केन्द्रीयता की जगह आम सहमति की बात काल्पनिक है, वर्ग समाज वाली दुनिया में वह लागु नहीं हो सकती. अगर इसे लागु करने की कोशिश करेंगे तो पार्टी खत्म हो जायेगी और क्रांति के सपने को भगवे चिवर में लपेटकर काशी में गंगा के किनारे बैठकर जाप करते रहना पड़ेगा. लगभग कोबाड उसी दिशा में बढ़ चुके हैं. सिर्फ इतना ही बाकी है कि पंचतंत्र, जोराईजम या अन्य कोई दुसरा आध्यात्म, यह ठोस तय नहीं हुआ है. जिसने खुद पार्टी के सांगठनिक सिध्दान्तो को तार–तार कर दिया है, जो मार्क्सवाद से नाता तोड़ चुका हो जो अपनी जिम्मेदारी से मुकरता हो, जो खुद अपने ही इतिहास को नकारता

हो, जो मौकापरस्ती का इस्तेमाल करते हुए पार्टी पर कीचड़ उछालता हो और माफियाओं से सुविधा प्राप्त करता हो उसे मूल्य की बातें करने का क्या अधिकार है? जो आध्यात्मवाद का शिकार होकर संशोधनवाद के कीचड़ में जाने को बेताब हो, उसे पार्टी के आंतरिक जनवाद के बारे में सवाल उठाने का क्या अधिकार है? माओवादी पार्टी जो विश्व में शोषित उत्पीड़ित जनता की मुक्ति के तहत भारत में उत्पीड़ित जनता की मुक्ति के लिए बीते 50 सालों से हजारों कुर्बानियां देती हुई अग्रसर है, आंतरिक जनवाद के बिना यह कैसे संभव हो सकता है? उसके बिना कोई शख्स निस्वार्थ भाव से अपना बलिदान देने के लिए कैसे तैयार हो सकता हैं? बलिदानों के मूल्य की अहमियत को परिसमापक नहीं समझ सकते, ना उसके पीछे की आजादी जिससे ओतप्रोत होकर एक कॉमरेड जान कुर्बान करने के लिए प्रेरित होता है. विचार और इच्छाओं को पार्टी लाईन के साथ मिलाकर ही एक कैडर पार्टी में वह आजादी महसूस करेगा जिससे उसे वह आत्मबल और आत्मविश्वास प्राप्त होता है कि वह जनता की मुक्ति के लिए अपने प्राण अर्पित करता है. हजारों की कुर्बानी ही आंतरिक आजादी का प्रतिबिंब है. यह उच्च स्तर का आदर्श और मूल्य है. कथनी और करनी के विषय पर कामरेड लेनिन ने यह कहा था–

''जनता को धोखा देने के लिए पूंजीवादी जनवादी लोग बराबर तरह–तरह के 'नारे' लगाते आये हैं और आज भी लगा रहे हैं. लेकिन सवाल है, उनकी इमानदारी की जाँच करने का, उनके शब्दों का मूल्य उनके कार्यो से लगाने का. हमें इन लोंगों की कपटी और आदर्शवादी उक्तियों से संतुष्ट न होकर उनके पीछे छिपी हुई वर्गीय यथार्थता की खोज करनी चाहिए.''(लेनिन ग्रथावली 7 पृ. 172)''

समाजवाद–साम्यवाद ही मानव जाति का असली मुक्ति मार्ग है

''जिस बात ने मुझे अतीत पर गहराई से चिंतन करने, वर्तमान को समझने और भविष्य की ओर देखने के लिए उकसाया, वह यह थी कि न केवल हमारी गतिविधियों में थोड़ी सी सफलता मिली, यहां तक कि उस दुनिया में भी जिसने 1960 के दशक के अंत में मुझे साम्यवाद की ओर आकर्षित किया, वह आज, मेरे ही जीवन काल में बहुत कम बचा है. क्यों?

''जैसा कि मैं ने उन लेखों के परिचय में ही कहा हैः 'ऐसा विनाशकारी उलटफेर क्यों? बेहतर भविष्य की हमारी आशाओं और सपनों का क्या हुआ? निरंकुश शासकों को भूल जाइए, जनता ने इतनी आसानी से वास्तविक स्वतंत्रता की जगह एक मुक्त बाजार का चयन और अपनी इच्छाओं को खत्म क्यों किया? यदि कोई स्पष्ट उत्तर और समाधान भी नहीं हैं, तो आज के कम्युनिस्ट अपनी सीमित दुनिया में शुतुरमुर्ग की तरह रहना जारी रख सकते हैं; लेकिन भविष्य उन्हें पीछे छोड़कर

यह संख्या अगली बार 4000 तक बढ़ सकती है. इस महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति की कीमत बहुत ज्यादा ही है. हालांकि एक, दो या तीन, चार सांस्कृतिक क्रांतियों द्वारा भी दो वर्गों के बीच, दो लाइनों के बीच होने वाले संघर्ष की समस्या का हल नहीं होता है लेकिन वर्तमान महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति जो है, वह कम से कम एक दशक की समयावधि तक(सर्वहारा वर्गीय लाइन को–अनुवादक) सुसंगठित करने वाली हो.''

''सांस्कृतिक क्रांति का लक्ष्य क्या है? सत्ता के पीठों पर कब्जा जमाकर पूंजीवादी मार्ग अपनाए हुए लोगों के खिलाफ संघर्ष करना इसका प्रधान कार्यभार है. परंतु यही उसका अंतिम लक्ष्य नहीं है. उसका असली लक्ष्य है, वैश्विक दृष्टिकोण से संबंधित समस्याओं का हल निकालना! यानी संशोधनवाद की जड़ों को उखाड़ फेंकने की ही समस्या.'' (अल्बेनियायी सैनिक प्रतिनिधि मंडल के साथ बातचीत, 1 मई, 1967 – माओ)

माओ के उपरोक्त कथन को गहराई से समझने के लिए निम्न लिखित विषय को देखें. मार्क्सवाद प्रत्येक अवस्था में विकसित होता आया है. वह मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद के रूप में विकसति हुआ. सोवियत युनियन के आर्थिक क्षेत्र में मौजूद समस्याओं का दार्शनिक तौर पर विश्लेषण कर माओ मार्क्सवादी सिद्धांत को नई ऊंचाइयों तक ले गए. उस आधार पर चीन में समाजवादी निर्माण में उन्होंने कई प्रयोग किए. मार्क्स और एंगेल्स द्वारा शुरुआती दिनों में उनके सिद्धांत पर उठायी गयी समस्यायओं को फिर से सामने लाकर उनका समाधान करने के क्रम में उन्होंने सिद्धांत को विकसित किया. उसी के तहत शहरों व ग्रामीण इलाकों तथा शारीरिक व मानसिक श्रम के बीच के अंतर जो समाजवादी निर्माण के रास्ते में अड़चन बना था, को दूर करने की कोशिश की. उत्पादन शक्तियों व उत्पादन के संबंधों के बीच के अंतरविरोध को हल करने के लिए वर्ग संघर्ष को कुंजीभूत तौर पर लेने की बात माओ ने कही. उतना ही नहीं, उन्होंने यह भी कहा कि ऊपरी संरचना में भी क्रांति आवश्यक है तथा उस हेतु सांस्कृतिक क्रांति आवश्यक है. सांस्कृतिक क्रांति ऊपरी संरचना से लेकर बुनियाद तक क्रांति को जारी रखती है. हमें यह समझना चाहिए कि माओ द्वारा सामने लायी गयी ''महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति (जीपीसीआर)'' का लक्ष्य है, सत्ताधारी लोगों के प्रति गुलामी की मानसिकता की तोड़ के तौर पर जनता के बीच सांस्कृतिक चेतना को विकिसित करना, सत्ता से सवाल करना ही नहीं बल्कि उसे ध्वस्त करने में जनता की संस्कृति में परिवर्तन लाना. सांस्कृतिक क्रांति का प्रभाव जनता के बीच में इस कदर घर कर गया है कि आज भी चीन के वर्तमान

फंसे हुए हैं. हम सिर्फ यह सपना ही देख सकते हैं कि उस कीचड़ से वे छुटकारा पा सकते हैं. तथापि यह मानना कि यह सब एक झटके में हो जाएगा, काल्पनिक दुनिया में विचरण करने जैसा ही होगा. 'राज्यसत्ता हाथ में आएगी या नहीं' वह इस कदर काल्पनिक रहेगा और व्यवहार में वह लगातार स्थगित होता रहेगा''.

''परंतु समाजवाद की स्थापना की हमारी सोच इस तरह की बिल्कुल नहीं है. पुराने समाज की उन सभी बीमारियों, कमजोरियों जिनका सर्वहारा जन समुदाय पर काफी दुष्प्रभाव पड़ता है, जो सर्वहारा को नीचे गिराने को देखती हैं, का मुकाबला करते हुए ही, उनके खिलाफ संघर्ष करते हुए ही, पंजीवादी समाज के धरातल पर खड़े होकर ही हम समाजवाद के निर्माण के लिए कमर कस रहे हैं. इस संघर्ष में हमें छोटे जोतों व थोड़ी बहुत संपत्ति वालों की स्वाभाविक आदतों, परंपराओं का सामना करना पड़ता है.'' जिनका वो देखें, पिछड़ने वाले शैतान के पाले' पुरानी कहावत का प्रभाव अब भी हम पर हावी है.

(10, 12 जनवरी, 1919 को आयोजित 'अखिल रूसी ट्रेड युनियन' दूसरी महासभा के सामने रखा गया प्रतिवेदन–लेनिन संकलित रचनाएं, वॉल्यूम 28, पृष्ठ 424–425).

रूस में पूंजीवाद की पुनर्स्थापना का अध्ययन कर, उसमें से सबक लेकर माओ ने सांस्कृतिक क्रांति आरंभ की. सांस्कृतिक क्रांति के दौरान समाजवादी समाज के निर्माण के बारे में माओ और भी स्पष्ट समझदारी पर पहुंच गए थे. उन्होंने स्पष्ट किया कि समाजवादी समाज निर्माण के लिए एवं पूंजीवादी पुनर्स्थापना को रोकने के लए एक सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति पर्याप्त नहीं है, उत्पीड़ित जनता को कई सांस्कृतिक क्रांतियों के जरिए ऊपरी ढांचे में क्रांति को निरंतर जारी रखना चाहिए. 1967 में जब सांस्कृतिक क्रांति तीव्र स्तर पर जारी था, तब उन्होंने कहा;

''आज की जो 'सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति'(जीपीसीआर) है, वह इतिहास में अभूतपूर्व है. भविष्य में इस तरह की क्रांतियां अवश्य होनी चाहिए. एक, दो या तीन, चार सांस्कृतिक क्रांतियों से सब कुछ ठीक–ठाक हो जाने के झूठे विश्वास, दिग्भ्रम का शिकार न होकर सभी पार्टी सदस्यों, जनता को चाहिए कि वे स्वयं को बचाए रखें. हमें सदा जागरूक रहते हुए पैनी नजर के साथ रहना चाहिए.''

''सिद्धांत को व्यवहार के साथ क्रियान्वयन करना है तो आंतरिक कारणों के जरिए ही बाहरी कारणों को काम करना होता है. तथापि इनमें पहला(यानी आंतरिक कारण–अनुवादक) ही प्रधान पहलु है. यदि वैश्विक दृष्टिकोण नहीं बदलता है तो फिर हम यह कैसे कह सकते हैं कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति सफल हुई है. यदि वैश्विक दृष्टिकोण नहीं बदलता है तो आज की सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति में सत्ता के पीठों पर कब्जा करने वाले 2000 पूंजीवादी मार्गावलंबियों की जगह

जाएगा.' उदाहण के लिए, भारत को देखें, न केवल संसदीय वामपंथी गतिरोध में हैं, बल्कि विभिन्न नक्सली गुट भी. विकास की तो बात ही छोड़ दें, दोनों ही प्रवृत्तियों में 1990 और 2000 के दशक के अपने चरम वर्षों की तुलना में गिरावट आई है, और वह भी ऐसे समय में जब नवउदारवादी आर्थिक नीतियों ने जनता को सबसे बुरी तरह प्रभावित किया है, और उन्हें समाजवादी नीतियों की सबसे अधिक आवश्यकता है!'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 205, 206)

समाजवाद क्यों इस कदर पीछे हटा कि वह फिर से आगे नहीं बढ़ पा रहा है? जनता असली आजादी के बजाए मुक्त बाजार को क्यों चुन रहे हैं? इन सवालों का समाधान चाहिए. कोबाड यह कह रहे हैं कि कम्युनिस्ट ऑस्ट्रिच जैसे हैं. ये तीन मूल्यों के प्रोजेक्ट को अपना लक्ष्य बता रहे हैं.

मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद का अध्ययन करने वाले कोबाड अपने आध्यात्मवाद का समर्थन करने के लिए ही जानबूझकर इन सभी मामलों से संबंधित सवाल उठा रहे हैं.

1976 में माओ के निधन के बाद चीन में डेंग के नेतृत्व में आधुनिक संशोधनवाद जैसे ही सत्तारूढ़ हुआ दुनिया में कोई समाजवादी देश नहीं रह गया. स्तालिन के निधन के बाद सोवियत युनियन में समाजवाद ध्वस्त हो गया. इन परिणामों के बाद इस बात पर कि समाजवाद का पीछे हट क्यों हुआ, कॉमरेड् माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने विश्लेषण किया. इसके साथ ही कइयों ने विश्लेषणयुक्त किताबें लिखी. उन दिनों दुनिया भर में बड़ी बहस हुई. हमारे देश में 1967 में सोवियत संशोधनवाद का विरोध करते हुए नक्सलबाड़ी संघर्ष, 1976 के बाद डेंग के आधुनिक संशोधनवाद पर पहले सीपीआई (एम–एल), एमसीसी, बाद में पीपुल्सवार, फिर 2004 में सीपीआई (माओवादी) विश्लेषण कर संशोधनवाद का प्रतिरोध करते हुए भारत में क्रांतिकारी आंदोलन को अत्यंत साहसिक ढंग से आगे बढ़ा रही है. ऐसी पार्टी के नेतृत्वकारी स्थान में चार दशक तक रहने वाले कोबाड द्वारा आज यह सवाल उठाना कि समाजवाद की कड़ी हार के क्या कारण हैं, स्वयं को धोखा देने के अलावा और कुछ नहीं है. हालांकि कोबाड के लिए जवाब देने की जरूरत नहीं है, फिर भी चूंकि वे जनता के बीच में एक बार और गड़बड़ पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं, इसलिए उन कोशिशों को नाकाम करने पार्टी फिर एक बार इस विषय पर विस्तारपूर्वक जवाब दे रही है.

मार्क्सवाद में मौजूद दो कुंजीभूत विषयों में पहला है, पूंजीवाद को उखाड़ फेंककर सर्वहारा वर्ग की राज्यसत्ता को कायम करना; दूसरा है, समाजवादी समाज का निर्माण. मार्क्स और एंगेल्स को स्वाभाविक तौर पहले मुद्दे पर प्रधान रूप से केंद्रित करना पड़ा. 'आजादी, समानता, भाईचारा' नारों की आड़ में अपने मनमर्जी

शोषण पर परदा डालने के पूंजीपतियों के प्रयासों, बुर्जुआ जनवाद को जनता के जनवाद के तौर पर वर्णित करते हुए पूंजीवाद को स्थायी करार देते हुए जनता को भ्रमित करने के प्रयासों का पर्दाफाश कर पूंजीपतियों के मुनाफे की असलियत को बाहर लाने पर उन्होंने अपना ध्यान केंद्रित किया. सामाजिक गतिशीलता के नियमों के जरिए उन्होंने यह निरूपण किया कि सामाजिक बदलाव के क्रम में पूंजीवाद का उद्‌भव जिस तरह अपरिहार्य है, ठीक उसी तरह पूंजीवाद को उखाड़ फेंककर समाजवाद का निर्माण करना भी उतना ही अपरिहार्य है. इसे समझकर अपनी ऐतिहासिक भूमिका निभाने के लिए मजदूर वर्ग को चेतनत करने के लक्ष्य के साथ उन्होंने आजीवन कार्य किया. मार्क्स, एंगेल्स के जीवनकाल में मजदूर वर्ग ने पेरिस में राज्यसत्ता हथियायी. पेरिस कम्यून अनुभव भी प्रधानतया सत्ता हासिल करने, उसे बचाने से संबंधित हैं.

सर्वहारा क्रांति के बाद समाज को समाजवादी समाज में तब्दील करने, कम्युनिस्ट समाज के लिए रास्ता सुगम बनाने का ऐतिहासिक कर्तव्य रूस में लेनिन और स्तालिन, क्रांति के बाद चीन में माओ के कंधों पर आ गिरा. किंतु क्रांति के बाद के उस कम समय में जब लेनिन जीवित थे, रूस में सत्ता से बेदखल किए गए शोषक वर्गों द्वारा फिर से सत्ता हथियाने के लिए गंभीर अंतरयुद्ध को जारी रखने तथा 14 साम्राज्यवादी देशों द्वारा लगातार सोवियत युनियन पर हमले करने की वजह से समाजवादी समाज के निर्माण के लिए वे पर्याप्त कोशिश नहीं कर सके. ऐतिहासिक अनिवार्यता की पृष्ठभूमि में रूस को एक कदम पीछे हटकर नयी आर्थिक नीतियों, 'युद्ध कम्युनिज्म' पर अमल करना पड़ा. 1924 में लेनिन के निधन के बाद समाजवादी समाज के निर्माण के लिए स्तालिन ने काफी प्रयास किए. फिर भी अनुभवहीनता, साम्राज्यवादी देशों के साथ युद्ध एवं अंतरयुद्धों में अकथनीय नुकसान का शिकार हो जाने तथा पुराने राज्ययंत्र की नौकरशाही, औद्योगिक प्रबंधकों, अन्य प्रतिनिधियों पर सत्ता संचालन एवं उद्योगों के प्रबंधन के लिए पहले अपरिहार्यता के चलते निर्भर होने के बावजूद, बाद के समय में भी अधिकारियों के जरिए उद्योगों व प्रशासन के संचालन को जारी रखने, देश के विकास को हासिल करने अर्थवाद (यानी उत्पादन शक्तियों के विकास के जरिए समाजवाद की ओर आगे बढ़ सकते हैं, इस विश्वास) का शिकार हो जाने, उत्पादन की शक्त्यिों में मजदूरों की चेतनापूर्वक भूमिका से अधिक उत्पादन के साधनों पर केंद्रित करने, 1936 तक रूसी समाज में वर्गों का अस्तित्व खतम हो गया है, इसलिए अब वर्ग संघर्ष की आवश्यकता नहीं है, ऐसे गलत निर्धारण पर पहुंचने, उसी समय राज्ययंत्र को लगातार मजबूत करने, एक शब्द में कहा जाए तो समाजवादी समाज के निर्माण में जनदिशा का पालन न करने के कारण स्तालिन

के निधन के बाद क्रुश्चेव संशोधनवादी गुट के लिए सत्ता हथियाना संभव हो पाया. नया बुर्जुवा वर्ग (सरकारी बुर्जुआ वर्ग) चूंकि तब तक महत्वपूर्ण स्थानों पर कब्जा कर रखा था, इसलिए उनका राजनीतिक प्रतिनिधित्व करने वाली क्रुश्चेव गुट ने स्तालिन एवं मजदूर वर्ग पर हमला करते हुए पूंजीवाद की पुनर्स्थापना की. उस तरह रूस में क्रांति के बाद के तात्कालिक समस्याओं के हल के लिए एक ऐतिहासिक अपरिहार्यता के कारण चुनी गयी पद्धति ने असहनीय बोझ बन एक नया शोषक वर्ग को पैदा किया.

सोवियत युनियन में समाजवादी समाज के निर्माण में उत्पन्न समस्याओं को ध्यान में रखकर चीन में 1960 के बाद (हालांकि तब तक सोवियत युनियन नमूने का आर्थिक विकास जारी रहा) दो पैरों पर चलने (कृषि को बुनियाद बनाकर औद्योगिक विकास हासिल करना) की नीति, समाजवादी शिक्षा आंदोलन संचालित करना आदि पर अमल करते हुए, महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के जरिए स्वार्थ पर जीत हासिल करने, लियो शाव ची, डेंग गुटों के नेतृत्व में मजबूत होते पूंजीवादी मार्गावलंबियों को हराने के लिए जनदिशा पर आधारित होकर वर्ग संघर्ष को जारी रखा गया था. पूंजीवादी मार्गावलंबियों का मुकाबला करने के लिए राज्यसत्ता पर आधारित होने जैसाकि रूस में किया गया, के बजाए जनता को चेतनत करते हुए वर्ग संघर्ष को तेज करने पर केंद्रित किया गया. कॉमरेड् माओ ने चेताया कि जनता की चेतनापूर्ण भूमिका के जरिए ही समाजवादी समाज का निर्माण संभव है, यदि वर्ग संघर्ष को आखिरी तक जारी नहीं रखेंगे तो मजदूर वर्गीय राज्यसत्ता बुर्जुआ राज्यसत्ता में एवं फासीवादी राज्यसत्ता में तब्दील हो जाने का खतरा बना रहेगा. माओ एवं चीनी कम्युनिस्ट पार्टी बार–बार यह खुलासा करते रहे कि उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत मालिकाना हक को कानूनन रद्‌द करने मात्र से समाजवाद स्वयमेव अस्तित्व में नहीं आएगा, जनता की चेतनापूर्वक कोशिश के जरिए ही, वर्ग संघर्ष को सभी क्षेत्रों में तेज कर पुराने समाज की विचारधारा, संस्कृति, आचार–व्यवहार, आदतों को बदलने के जरिए ही, पूंजीवादी मार्गावलंबियों को हराने के जरिए ही समाजवादी समाज का निर्माण संभव है.

इसी बात को कॉमरेड् लेनिन ने रूसी क्रांति के सफल होने के बाद इस तरह कहा;

''पुराने समाज से मजदूरों को अलग कर रखने का कोई चीनी दीवार जैसी चीज नहीं है. पूंजीवादी समाज से संबंधित पारंपरिक विचारधारा उनके भीतर काफी मात्रा में है. अब ये मजदूर पुराने समाज के कचरे जिसे वे अपने साथ चिपकाकर ला रहे हैं, को साफ किए बगैर ही, स्वयं को नए मानव के रूप में तब्दील किए बगैर ही नये समाज का निर्माण कर रहे हैं. वे अब भी पुराने कीचड़ में घुटनों तक

भगोड़ापन है. अपनी सुविधा के अनुसार आंदोलन के इतिहास से चंद टुकडों को निकालकर उसे मात्र समाज सुधार के तौर पर किए गए कार्य के रूप में दिखाना उन हजारों शहीदों जिन्होंने अपने प्राण न्योछावर किए और उन कार्यकर्ताओं और लाखों करोड़ों उत्पीड़ित जनता जो दिन रात खटकर क्रांतिकारी आंदोलन को आगे कूच करने के लिए दुश्मन वर्ग से लोहा ले रहे हैं, का अपमान है. एक तरफ अपने वर्ग और जाति की पृष्ठभूमि का महिमा मंडन, अपने पारसी और कार्पोरेट दोस्तों का महिमा मंडन, जेल में मिले सत्ताधारी वर्ग के बड़े लोगों और माफियाओं का महिमा मंडन और दूसरी तरफ क्रांतिकारी कम्युनिस्टों, लड़ाकू जनता और उनके आंदोलनों का निषेध करना, उनके अपने पारसी और उच्च वर्ग के होने की चाहत, प्रेम और गर्व को ही दर्शाता है. यह उनके अंदर भरे और पलते रहे गैर सर्वहारा रूझानों और पतित मूल्यों का ही द्योतक है.

दलित बस्ती की गंदगी को उनकी बिमारी का कारण बताना, यह निंदनीय जातिवादी मानसिकता है. जेल में माफियाओं से सुविधा लेना, उन्हें योगा सिखाकर उनकी सेहत का ख्याल करना, पर आम कैदियों की समस्याओं पर मौन धारण करना, यह मतलबी, चमडी बचाऊ, सुविधापरस्त व्यवहार और दृष्टिकोण है जो मानवीयता से भी उन्हें दूर करते हुए एक मौकापरस्त इन्सान के रूप में खड़ा कर देता है. यह वैचारिक और नैतिक मूल्यों की कसौटी पर विनिमय मूल्य हैं जो गरीब कैदियों की असुविधा के साथ अपनी सुविधा का विनिमय कर रहे हैं.

कोबाड ने जिस मूल्य के मॉडल की चौखट पर शहीद कॉमरेड् अनुराधा को बिठाया है, वह वास्तविकता में उनका अवमूल्यन है. यह अपने अधकचरे विचारों को भावनात्मक संबंधों के साथ अवसरवादी ढंग से जोड़कर सहानुभूति हासिल करने की उनकी बालिश लेकिन धूर्त कोशिश है.

पार्टी संचालन से संबंधित जनवाद, आत्मालोचना और कैडर लीडर के बीच रिश्तों बाबत कोबाड द्वारा व्यक्त विचार, पार्टी कतारों का मनगढ़ंत आधार पर किया गया श्रेणीकरण (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड पिपुल्स इमैंसिपेशन) पार्टी पर कीचड़ उछालने के सिवाय दूसरा कुछ नहीं है. यह जनता को पार्टी से दूर करने के लिए दुश्मनों व्दारा की जानेवाली कोशिशों का हिस्सा ही है. असीम त्याग, अप्रतिम बलिदानों और वर्ग संघर्ष के उच्चतम रूप सशस्त्र संघर्ष के घमासान में तपकर शोषित जनता की आशा की किरण बनी भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) पर बे सिर पैर के लांछन लगाना, उस जनता की आशाओं, आकांक्षाओं और उम्मीदों पर पानी फेरने का कार्य है.

क्रांतिकारी संघर्ष में पार्टी जनता की नेत्री होती है. उसकी ही छवि बिगाड़ दो तो निराशा और हताशा फैल जाती है, यह दुश्मन की सोच है. उसी दृष्टि से

हुई. उन क्रांतियों का साम्राज्यवादियों ने दमन भी किया. रूस में क्रांति के सफल होने के प्रमुख कारणों का कॉमरेड् स्तालिन ने निम्नांकित तरीके से उल्लेख किया.

''रूस में समाजवादी क्रांति की इस अपेक्षाकृत आसान विजय के कई कारण थे. नीचे लिखे हुए मुख्य कारण ध्यान देने योग्य हैं:

1) अक्टूबर क्रांति का दुश्मन अपेक्षाकृत ऐसा कमजोर, ऐसा असंगठित और राजनीतिक रूप से ऐसा अनुभवहीन था जैसे कि रूसी पूंजीपति. रूसी पूंजीपति आर्थिक रूप से अब भी कमजोर थे और पूरी तरह सरकारी ठेकों पर निर्भर थे. उनमें राजनीतिक आत्मनिर्भरता और पहलकदमी इतनी न थी कि परिस्थिति से निकलने का रास्ता ढूंढ सकें. मसलन, बड़े पैमाने पर राजनीतिक गुटबंदी और राजनीतिक दगाबाजी में उन्हें फ्रांसीसी पूंजीपतियों सा तजुर्बा न था, न अग्रेंज पूंजीपतियों की तरह, उन्होंने विशद रूप से सोचे हुए चतुर समझौते करने की शिक्षा पायी थी. हाल ही में उन्होंने जार से समझौता करने की कोशिश की थी. फरवरी क्रांति ने जार का तख्ता उलट दिया था और सत्ता खुद पूंजीपतियों के हाथ में आ गयी थी लेकिन बुनियादी तौर से घृणित जार की नीति पर ही चलने के सिवा उन्हें और कुछ न सूझ पड़ा. जार की तरह, उन्होंने 'विजय तक युद्ध करने' का समर्थन किया, हालांकि युद्ध चलाना देश की शक्ति से परे था और जनता तथा फौज दोनों युद्ध से बुरी तरह चूर हो चुके थे. जार की तरह, कुल मिलाकर वे भी बड़ी रियासती जमीन बनाये रखने के पक्ष में थे, हालांकि जमीन की कमी और जमींदारों के जुएं के बोझ से किसान मर रहे थे. जहां तक उनकी मजदूर नीति का संबंध था, वे मजदूर वर्ग से नफरत करने में जार के भी कान काट चके थे. उन्होंने कारखानेदार के जुंए को बनाये रखने और मजबूत करने की कोशिश नहीं की, बल्कि उन्होंने बड़े पैमाने पर तालेबंदी करके उसे असहनीय बना दिया.

कोई ताज्जुब नहीं कि जनता ने जार की नीति और पूंजीपतियों की नीति में कोई बुनियादी भेद नहीं देखा, और जो घृणा उसके दिल में जारर के लिए थी वही पूंजीपतियों की अस्थायी सरकार के लिए हो गयी.

जब तक समाजवादी क्रांतिकारी और मेन्शेविक पार्टियों का थोड़ा बहुत असर जनता पर था, तब तक पूंजीपति उन्हें पर्दे की तरह इस्तेमाल कर सकते थे और अपनी सत्ता बनाये रख सकते थे. लेकिन, जब मेन्शेविकों और समाजवादी क्रांतिकारियों ने जाहिर कर दिया ि कवे साम्राज्यवादी पूंजीपतियों के दलाल हैं और इस तरह जनता में उन्होंने अपन असर खो दिया, तब पूंजीपतियों और उनकी अस्थायी सरकार का कोई मददगार न रहा.

2) अक्टूबर क्रांति का नेतृत्व रूस के मजदूर वर्ग जैसे क्रांतिकारी वर्ग ने किया. यह ऐसा वर्ग था जो संघर्ष की आंच में तप चुका था, जो थोड़ी ही अवधि में दो क्रांतियों से गुजर चुका था औश्र जो तीसरी क्रांति के शुरू होने से पहले शांति, जमीन, स्वाधीनता और समाजवाद के लिए संघर्ष में जनता का नायक माना जा चुका था. अगर क्रांति का नेता रूस के मजदूर वर्ग जैसा न होता, ऐसा नेता जिसने जनता का विश्वास पा लिया था, तो मजदूरों और किसानों की मैत्री न होती और इस तरह की मैत्री के बिना अक्तूबर क्रांति की विजय असंभव होती.

3) रूस के मजदूर वर्ग को क्रांति में ग़रीब किसानों जैसा समर्थ साथी मिला, जो किसान जनता का भारी बहुसंख्यक भाग था. जहां तक आम मेहनतकश किसानों का सवाल था, क्रांति के आठ महीनों का तजुर्बा बेकार नहीं गया. इस तजुर्बे की तुलना 'साधारण' विकास के बीसियों सालों के तजुर्बे से निस्संदेह की जा सकती है. इन दिनों, उन्हें मौक़ा मिला कि वे अमल में रूस की तमाम पार्टियों को परख लें और अपनी दिलजमई कर लें कि न तो कॉन्स्टीट्यूशनल डेमोक्रैट और न समाजवादी क्रांतिकारी या मेन्शेविक ही जमींदारों से कोई गंभीर झगड़ा मोल लेंगे, या किसानों के हित के लिये अपना बलिदान करेंगे, कि रूस में एक ही पार्टी है – बोल्शेविक पार्टी – जिसका जमींदारों से कोई सम्बन्ध नहीं है और जो उन्हें किसानों की जरूरतें पूरी करने के लिये कुचलने को तैयार है. सर्वहारा और ग़रीब किसानों की मैत्री का यह दृढ़ आधार था. मजदूर वर्ग़ और ग़रीब किसानों की इस मैत्री के क़ायम होने से, मध्यम किसानों की गति निश्चित हो गयी. ये मध्यम किसान बहुत दिन तक ढुलमुल रहे थे और अक्तूबर विद्रोह के शुरू होने से पहले ही पूरी तरह क्रांति की तरफ़ आये थे और उन्होंने गरीब किसानों से नाता जोड़ा था. कहना न होगा कि इस मैत्री के बिना अक्तूबर क्रांति विजयी न होती.

4) मजदूर वर्ग का नेतृत्व राजनीतिक संघर्षो में तपी और परखी हुई बोल्शेविक पार्टी जैसी पार्टी ने किया था. बोल्शेविक पार्टी इतनी साहसी पार्टी थी कि निर्णायक हमले में जनता का नेतृत्व कर सके. वह इतनी सावधान थी कि मंजिल की तरफ़ जाने के रास्ते में ढंकी–मुंदी खाई–खन्दकों से बच कर निकल सके. ऐसी ही पार्टी विभिन्न क्रांतिकारी आन्दोलनों को चतुराई से एक ही सामान्य क्रांतिकारी धारा में मिला सकती थी. शान्ति के लिये आम जनवादी आन्दोलन, रियासती ज़मीन छीनने के लिये किसानों का जनवादी आन्दोलन, जातीय स्वाधीनता और जातीय समानता के लिये पीड़ित जातियों का आन्दोलन, और पूंजीपतियों का तख्ता उलटने के लिये और सर्वहारा डिक्टेटरशिप क़ायम करने के लिये सर्वहारा वर्ग का समाजवादी

रूप में वर्ग संघर्ष के मैदान में मार्गदर्शक बना हुआ है. नव उदारवादी बैसाखियाँ टुट चुकी हैं, पूंजीवादी आर्थिक संकट को कोई रास्ता नहीं सुझ रहा. कोरोना महामारी फैलाकर वह लोगों की लाशों पर उत्पादन को न्युनतम स्तर पर लाकर बचने की कोशिश में लगा है. यह परिस्थिति पूंजीवादी व्यवस्था की विफलता और साम्यवाद की प्रासंगिकता को ही दर्शा रही है. विज्ञानवादी, सच्चा मार्क्सवादी दिमाग को इससे निराश नहीं, उत्साहित होना चाहिए. पार्टी छोटी रहे या बड़ी, संख्या का सवाल नहीं है. सही राजनीतिक लाईन का सवाल हैं, सही दिशा और कार्यनीति का सवाल है, सही सांगठनिक उसूल का सवाल हैं, सही कार्यपध्दति और कार्यशैली का सवाल है. कोबाडजी, आपने तो इन सभी से नाता ही तोड़ दिया है. आध्यात्मिक चिंतन के साथ 'मार्क्सवाद' के बीजों को जोड़कर नए सिरे से एक काल्पनिक प्रोजेक्ट पकाने के काम में तो आप लगे ही हैं. उतना ही नहीं, भारत के क्रांतिकारी जनयुध्द के बाग में खिले फूल जैसे गौरवशाली क्रांतिकारी इतिहास एवं पार्टी पर आप जहरीली एसिड छिड़ककर उसे जलाने की नाकाम कोशिश करते हुए ही 'फूल मुरझाए नहीं' कह रहे हैं. रहा सवाल, खट्टे और मीठे फलों का तो खट्टे फल का होना मीठे फल के अस्तित्व की गारंटी है. खट्टे फल का स्वाद चखे बगैर मीठे की मिठास को व्यक्त नहीं कर सकते. वर्गीय समाज के अस्तित्व तक खट्टे मीठे सामाजिक फलों का होना स्वाभाविक है. आप वर्ग संघर्ष में जितनी मजबूती से खड़े रहेंगे, उतनी ही आपको मीठे सामाजिक फल की गारंटी रहती है. वर्ग संघर्ष को छोडने पर खट्टा फल भी नहीं मिलता, कड़वा खाना पड़ता है. यह बात कार्पोरेट दोस्तों से घिरे कोबाड समझे या न समझे सर्वहारा और शोषित जनता अच्छे से जानती है.

कोबाड अपने अंतिम निश्कर्ष में यह बताते हैं कि मानव समाज की समस्याओं को हल करने के लिए फ्रीडम/डिमॉक्रसि और युनिवर्सल हैपीनेस के लक्ष्य के साथ व्यक्ति में आध्यात्मिक मूल्यों की आवश्यकता प्रधान है. यह अधकचरी अवधारणा अधिभौतिकवादी मनोगतवादी धारणा की उपज है जो अंत में आध्यात्मवाद में विराजमान होती है. यह कल्पना की दुनिया के सागर में गोते लगाने वाली अवधारणा है. यह पूरी तरह जनता को संघर्ष के रास्ते से भटकाकर, शोषणमूलक समाजव्यवस्था को यथावत बनाए रखने की कोशिश है.

गद्दारी

भाकपा (माओवादी) की केंद्रीय कमेटी के नेता होने के बावजूद कोबाड घैंडी ने उससे इनकार किया है. आंदोलन की जिम्मेदारी स्वीकारने से वे मुकर गए हैं. यह

''बदलाव के लिए आंतरिक और बाहरी दोनों तरह के प्रयास होने चाहिए. आंतरिक तौर पर सकारात्मक जागरूकता और उस दिशा में कार्य करने की स्वैच्छिक इच्छा की आवश्यकता है. बाहरी तौर पर आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक रूप से अत्यंत अनुकूल वातावरण निर्माण होना चाहिए''. (क्वश्चंस ऑफ फ्रीडम ऐण्ड इमैंसिपेशन, पृष्ठ 48)

कोबाड यहां जानबूझकर द्वंद्वात्मक भौतिकवादी दर्शन के बदलाव संबंधी मौलिक नियमों के उलट आर्थिक स्थिति को बाहरी कारण के तौर पर दर्शा रहे हैं. जबकि आर्थिक स्थिति ही सामाजिक ढांचे की बुनियाद होती है जिस पर निर्भर होकर ही व्यक्ति की चेतना तय होती है. समाज के विभिन्न वर्गों के बीच संघर्ष यानी सत्ताधारी वर्ग के विरुध्द वर्गसंघर्ष अर्थात क्रांति के बिना ऐसे वातावरण जिसका कोबाड उल्लेख कर रहे हैं, का निर्माण होना संभव ही नहीं है और बिना ऐसे भौतिक वातावरण के व्यक्ति की अवेअरनेस निर्माण होना, जो उसे अच्छे मूल्यों का पालन करने के लिए प्रेरणा देती रहे, संभव नहीं है. इससे यह साफ जाहिर होता है कि वो हर मामले को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से व्याख्या कर रहे हैं और सारांश में वर्ग संघर्ष और जनयुद्ध की प्रासंगिकता को नकार रहे हैं.

कोबाड चाहकर भी इस भौतिक सत्य को झुठला नहीं सके कि सोशलिज्म और कम्युनिज्म के सिवाय दुसरा कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं है. इसलिए बड़ी चालाकी से उपहासात्मक रूप से कह रहे हैं कि कम्युनिस्ट बीजों की रक्षा होनी चाहिए, देखभाल करनी चाहिए और वह इस तरह होनी चाहिए कि 'फूल मुरझाए नहीं और फल खट्टे न हो जाए'. कोबाडजी, खिलना और मुरझाना फुल का प्राकृतिक स्वभाव है. माली मेहनत करते रहे तो नये–नये फुल उगते रहेंगे, लेकिन वह ड्राईंग रूम में बैठकर कल्पना करेगा तो उसे फूल की सुगंध नहीं मिलेगी. माली की मेहनत वर्ग संघर्ष का प्रतीक है. कम्युनिज्म कोई छुपाकर या बचाकर रखने वाला बीज नहीं, यह विचारधारात्मक पदार्थ की भौतिक वास्तविकता है जो नरंतर परिवर्तनशील है, गतिशील है, इसे किसी परमात्मा या बाह्य शक्ति की जरूरत नहीं है. यह प्रकृति और समाज की गति के साथ बढ़ता है, फलता है, फुलता है, सुगंध देता है. वर्ग संघर्ष की गति के साथ उन्नत होते रहता है. इसे कोई मिटा नहीं सकता. फासीवादी जार, हिटलर और मुसोलिनी नहीं मिटा सके तो ब्राम्हणीय हिन्दुत्व फासीवादियों की क्या बिसात? मार्क्सवाद दक्षिणपंथी अवसरवादियों और वामपंथी दुस्साहसवादियों से टक्कर लेते हुए ही विकसित होता आया. बर्नस्टाईन, काउटस्की, क्रूश्चेव, देंग और भारत में डांगे, रणदिवे और भी रंग–बिरंगे संशोधनवादियों को बेनकाब करते हुए आज भी मजदूर और शोषित वर्ग की एकमात्र विचारधारा के

आन्दोलन – इन सबको ऐसी ही पार्टी एक सामान्य क्रांतिकारी धारा में मिला सकती थी.

इसमें सन्देह नहीं कि इन विभिन्न क्रांतिकारी धाराओं के एक ही सामान्य शक्तिशाली क्रांतिकारी धारा में मिलन ने रूस में पूंजीवाद की तक़दीर का फैसला कर दिया.

5) अक्तूबर क्रांति ऐसे समय आरम्भ हुई जबकि साम्राज्यवादी युद्ध अभी जोरों पर था, जबकि प्रमुख पूंजीवादी राज्य दो विरोधी खेमों में बंटे हुए थे और जब परस्पर युद्ध में फंसे रहने और एक–दूसरे की जड़ें काटने में लगे रहने से, वे 'रूसी मामलों' में सफलता से दखल न दे सकते थे और सक्रिय रूप से अक्तूबर क्रांति का विरोध न कर सकते थे. निसंदेह, अक्टूबर समाजवादी क्रांति की जीत में इस बात से बहुत मदद मिली.'' (जेवि स्तालिन, सोवियत युनियन कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास, पृष्ठ 264, 265, 266)

चीन एक अर्ध औपनिवेशिक–अर्ध सामंती देश था. माओ ने यह सैद्धांतीकरण किया कि उस देश में रूस से भिन्न दीर्घकालीन जनयुद्ध के रास्ते क्रांति होगी. चीन में प्रारंभ से क्रांतिकारी सेना ने प्रतिक्रांतिकारी सरकारी बलों का मुकाबला करते हुए क्रांति को जारी रखा. चेन–टू–शि के दक्षिणपंथी अवसरवाद, लिलिसान के वामपंथ सहित दस आंतरिक संघर्षों के जरिए माओ के नेतृत्व में संघर्ष कर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने चीन की ठोस परिस्थितियों के अनुरूप मार्क्सवाद–लेनिनवाद को विकसित किया. जब जापान ने चीन पर कब्जा किया, माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने सटीक तौर पर जापान विरोधी संयुक्त मोर्चे का गठन कर देशद्रोहियों, कट्टरपंथियों को अलग–थलग कर देश में व्यापक संयुक्त मोर्चे की कार्यनीति बनायी. उस तरह व्यापक जन समुदायों को एकताबद्ध किया. इन दांव–पेंचों के कारण पार्टी, सेना, संयुक्त मोर्चा मजबूत होकर जापान को हराने के साथ ही उसके तुरंत बाद अमेरिकी मदद से कम्युनिस्टों पर युद्ध छेडने वाले चांग–काई–शेक की सेनाओं को हराकर माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने 1949 में चीनी गणराज्य की स्थापना की. चीनी क्रांति को यद्यपि दूसरे विश्वयुद्ध और रूसी मदद का फायदा मिला लेकिन माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का कार्य प्रधान रहा. कॉमरेड्स लेनिन, माओ ने क्रांतियों को सफल बनाने के लिए विश्व युद्धों का इंतजार नहीं किया. अपने देशों की ठोस परिस्थितियों के अनुरूप मार्क्सवाद का क्रियान्वयन कर सही रणनीति–कार्यनीति के साथ उन्होंने क्रांतियों को संचालित किया और सफल बनाया.

रूस और चीन में क्रांतियों का प्रधान कारण है, उन देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों द्वारा किया गया कार्य. यह कहना कि विश्व युद्धों के बगैर क्रांतियां संभव नहीं है,

ऐतिहासिक तौर पर घोर त्रुटि होगी. निराशावाद उत्पन्न होने के कारण ही कोबाड इस निर्णय पर पहुंचे. द्वंद्वात्मक भौतिकवादी सिद्धांत के मुताबिक भी किसी भी गुणात्मक बदलाव के लिए बाहरी कारणों के बजाए पदार्थ के आंतरिक अंतरविरोध ही प्रधान हैं. दूसरे विश्व युद्ध के बाद भी दुनिया के एशिया, आफ्रिका, लातिन अमेरिकी देशों में क्रांतियों की लहर जारी रही और कई देशों से जनता ने साम्राज्यवादियों को वापस भेज दिया. दूसरे विश्वयुद्ध के बाद 1948 में उत्तर कोरिया, 1959 में क्यूबा में क्रांतियां हुईं. 1975 में कंपूचिया, वियतनाम में अमेरिका का घोर पराजय हुआ. वह विश्व युद्धों का समय नहीं था. 60 के पूरे दशक में एशिया, लातिन अमेरिकी देशों में उपनिवेशवाद के खिलाफ हुए मुक्ति संघर्ष क्या बता रहे हैं? दुनिया भर में फूट पड़े साम्राज्यवाद विरोधी संघर्षों की वजह से साम्राज्यवाद को उपनिवेशवाद छोड़कर नया औपनिवेशिक शोषण की नीतियों को अपनाना पड़ा.

अफगानिस्तान में, 2021 में अमेरिका की हार भी क्या इसी बात को साबित नहीं कर रही है?

युद्ध एवं शांति काल में अपनाए जाने वाले दांव–पेंचों के बारे में मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद ने हमें सिखाया. पूंजीवादी युग में आर्थिक संकट उत्पन्न हुए थे जबकि साम्राज्यवादी अवस्था में पूंजीवाद का संकट स्थायी बन गया. दूसरे विश्व युद्ध के बाद साम्राज्यवाद ने अस्थायी स्थिरता हासिल की. परंतु 1970 के दशक में साम्राज्यवाद का संकट और भी गहरा व व्यापक होने लगा. वह कई संकटों से गुजरते हुए 2008 तक महामंदी जैसे आर्थिक व वित्तीय संकट में फंस गया. 2008 में सामने आए वित्तीय व आर्थिक संकट अमेरिका में प्रारंभ होकर युरोप को घेरकर पूरे साम्राज्यवादी दुनिया में फैल गया. वह अब भी भंवर में फंसकर साम्राज्यवाद को सांस भी लेने नहीं दे रहा है. यब सब जनवरी, 2007 में आयोजित हुये एकता कांग्रेस–9वीं कांग्रेस में, उसके बाद पार्टी में रहते कोबाड भी मान लिए थे. उसी तरह पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था में अमीर और अमीर होते हैं, गरीब और भी गरीब होते हैं जिससे गरीबी विस्तृत और व्यापक होती जाती है, कोबाड इस बात से इनकार नहीं कर पा रहे हैं. उसीलिए वो अब भी पूंजीवादी अर्थव्यवस्था एवं उसकी संस्थाओं का विरोध करने मजबूर हो रहे हैं. मार्क्सवाद से संबंधित आर्थिक सिद्धांत को ही जनता के लिए विकल्प मान रहे हैं. पूंजीवाद स्थायी है, समाजवादी इतिहास का अंत हो गया है, कल–पड़सों तक ढोल पीटकर यह कहने वाले बहुतेरे बुद्धिजीवी आज साम्राज्यवादी वैश्वीकरण के कारण पूंजीवाद के संकट में फंसने की स्थिति में अपने पुराने तर्कों का समर्थन नहीं कर पा रहे हैं. बहुतेरे लोगों को यह मानना पड़ रहा है कि दुनिया में समाजवादी अर्थनीति ही

की बात कर रहे हैं, उसके निर्मुलन की बात नहीं करते (साम्यवाद अर्थात राज्य का निर्मुलन). अतः पूंजीवाद के अंदर सुधार करने की श्रेणी के यह विचार है. यह कार्य कारण की व्दंव्दात्मक भौतिकवादी दार्शनिक अवधारणा को ही नकार देता है.

जाति निर्मुलन, असली धर्म निरपेक्षता के बजाय कोबाड धार्मिक सुधार की बातें जारी रखने की वकालत करते हैं. जनता में सत्ता के खिलाफ उठने वाले असंतोष को ठंडा करने के लिए धार्मिक उपदेशों, आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देने की बात करने वाले विचारवानों की सरकार प्रणीत मंडली जो बाबा और संतो का चोला पहनकर समाज में तैनात रहते हैं, यह उनकी लाईन है. यह सत्ता की सेवा में समर्पित रहती है और कोबाड इस लाईन को जारी रखने की बात कर रहे हैं.

कोबाड का विश्लेषण करने की पध्दति अधिभौतिक हैं. ''वे ज्यादातर पेड़ को देखते हैं और जंगल को भूल जाते हैं, और कभी–कभी जंगल को देखते हैं और पेड़ को नजरअंदाज करते हैं.'' व्यक्ति और समाज में व्यक्ति को महत्व देते हैं समाज को भूल जाते हैं. समाज और व्यक्ति की व्दंव्दात्मकता और जीवनयापन की क्रियाओं व्दारा व्यक्ति समाज के अंतर्गत आता है जिससे बने समाज को एक बुनियाद के तौर पर नहीं मान रहे हैं. उनकी एक तरफा सोच/खोज, पहले से स्थापित, प्रमाणित, सर्वमान्य भौतिकवादी अवधारणाओं को ही नकार देती है. 40 साल के अपने क्रांतिकारी जीवन के सारांश के रूप में आध्यात्म का जो पुलिंदा (स्वतंत्रता, अच्छे मूल्य, खुशी) सभी समस्याओं के 'रामबाण' इलाज के रूप में सामने रखा है, वह 40 साल के क्रांतिकारी व्यवहार का सारांश तो कतई नहीं हो सकता, न ही यह शहीद कॉमरेड् अनुराधा के दृष्टिकोण से मेल खाता है, न उनके साथ के व्यवहार का सारांश हो सकता है. वो अगर जिंदा होती तो इसे सिरे से ठुकरा देती. यह सारांश तो क्रांति से भाग रहे, बची हुई जिंदगी के भौतिक सुख के निम्न विचारों से, कार्पोरेट दोस्तों की गोदी में जा बैठे और उन्हीं के दृष्टिकोण से लिखे व्यक्ति का अवसरवादी विचार है.

कोबाड द्वारा व्यक्त दार्शनिक अवधारणात्मक विचार कि 'व्यक्ति के बदलने की प्रक्रिया स्वयं की जागरूकता से ही होती है', 'पहले व्यक्ति के अंदर मूल्यों में बदलाव होना चाहिए', 'समाजवाद के विफल होने की खोज मनुष्य केन्द्रित होनी चाहिए', ये उनकी खोज हैं. इलाज के रूप में उन्होंने व्यक्ति स्वतंत्रता और आध्यात्मिक मूल्यों को सामने रखा. वो कह रहे हैं, 'जनवाद का शुरुआती बिंदु निर्माण (समाज या राज्यसत्ता, संस्था) नहीं बल्कि मनुष्य होना चाहिए'. जबकि मार्क्सवाद ने सामाजिक विज्ञान और व्दंव्दात्मक भौतिकवाद के आधार पर यह सिध्द कर दिया है कि मानव समाज ही मूल घटक है, मनुष्य को समाज के बिना व्यक्त नहीं कर सकते.

जहाँ तक उस क्लास की बात आती है जिसका गुनगान कोबाड कर रहे हैं, तो उसका चरित्र सामने लाना लाजमी बन जाता है.

धनी वर्ग में से व्यक्तिगत रूप से चाहे कोई कितने भी जेंटलमैन क्यों न हो पर आज इस वर्ग का रूझान दलाल नौकरशाही पूंजीपति के साथ सांठगांठ का ही है. निश्चित ही इसमें कुछ अपवाद रहेंगे. विस्की, रम और स्काच के प्याले खाली करने से इस समाज को बदलने के नए विचार नहीं आएंगे. नए विचार दिल्ली के 'वसंत विहार' या मुंबई के 'नारिमन पॉईन्ट' से नहीं निकलते हैं. नये विचार केवल उत्पादन की प्रक्रिया और वर्ग संघर्ष की प्रक्रिया से ही आते हैं. इसके लिए जो साइंस काम करता है उस प्रक्रिया से आते हैं. कोबाडजी, आप उत्पादन की प्रक्रिया में तो कभी थे ही नहीं और अब वर्ग संघर्ष से भी नाता तोड चुके हो तब आपके पास कुछ नया आने का भौतिक आधार ही क्या बचा है? कोबाड सैद्धांतिक और राजनीतिक तौर पर खत्म हो गए हैं.

''पोंगा पंडित'' की मनोगतवादी, अधकचरी अवधारणा

परोक्ष ज्ञान के भरोसे जीने वाले बुध्दिजीवी को जेल में आध्यात्म के परोक्ष ज्ञान का भंडार मिला. कोबाड ने जेल में आध्यात्म का बहुत ज्यादा अध्ययन किया. परोक्ष ज्ञान की संपत्ति पर मत बनाने की प्रवृत्ति ने उनकी आँखों पर आध्यात्म का वह चश्मा चढ़ा दिया है कि उन्हें वर्ग, वर्गसंघर्ष, राज्यसत्ता नजर ही नहीं आ रही. समाज के बिना व्यक्ति स्वतंत्रता नवउदारवादी भोगवादी अराजकता है जो साम्राज्यवादियों के बाजार के लिए जरूरी है. इस तरह के विचार सार्वभौमिकता और विशिष्टता की व्दंव्दात्मक भौतिकवाद की दार्शनिक अवधारणा से परे हैं. मॅनि पॉवर के महत्व एवं वह फ्रीडम के लिए किस तरह बाधा है, यह तो कह रहे हैं पर यह मॅनि पॉवर किस–किस वर्ग के कब्जे में है और इससे छुटकारा पाने के लिए क्या करना है, कैसे करना है, इसकी खुलकर चर्चा करने के बजाय उस पर पर्दा डाल रहे हैं. मॅनि तो अतिरिक्त मूल्य का व्यक्तीकरण है, असली बात तो पूंजी है जिसका कोबाड़ ने भूलकर भी एक बार भी जिक्र नहीं किया. खुद ही खुद की विड़ंबना पेश करते हैं. एक तरफ कहते हैं कि मार्क्सवादी आर्थिक बुनियाद के जंजाल में फँसे हैं, दुसरी तरफ अपने पूरे रिसर्च को कोई आधार मुहैय्या नहीं कराते, उल्टा कह रहे हैं कि आर्थिक विषयों की चर्चा अलग कर सकते हैं, मतलब कोबाड खुद ही आर्थिक बुनियाद और अन्य सामाजिक संरचना एवं विचार को अलग–अलग देखते हैं, उनके बीच के व्दंव्दात्मक संबध को स्वीकार नहीं करते. यह उनकी अवसरवादी सोच को ही प्रदर्शित करता है. केवल मॅनि की बुराईयों

विकल्प है. युरोप, लातिन अमेरिकी देशों में समाजवादी अर्थनीति का समर्थन करने वालों की संख्या बढ़ रही है. अमेरिका, ब्रिटेन में भी कुछेक बुर्जुआई अर्थशास्त्री एवं राजनेता लोग साम्राज्यवादी आर्थिक नीतियों का विरोध करते हुए कल्याणकारी राज्य की मांग कर रहे हैं.

दुनिया में क्रांति के लिए बढ़ते अवसर एवं वैश्वीकरण की नीतियों का विरोध करते हुए जनता में बढती क्रांतिकारी आकांक्षाओं के चलते कोबाड के लिए अपनी पुरानी समझदारी को पूरी तरह बदलने का कोई मौका नहीं रह गया है. वे यह कहने मजबूर हैं कि मार्क्सवादी आर्थिक सिद्धांत ही विकल्प है. वे यह कह रहे हैं कि देश में संगठित मजदूर वर्ग नहीं है, असंगठित क्षेत्र प्रधान बन गया है जिससे मजदूर वर्गीय संघर्षों के लिए अवसर कम हो गए हैं एवं वर्गीय आधार पर संघर्ष करना संभव नहीं है. मुंबई जहां वे पैदा हुए थे और पले–बढे थे, में 1980 के दशक में जैसा दुनिया में, साम्राज्यवाद में हुआ, वैसा ही आर्थिक और औद्योगिक रिस्ट्रक्चरिंग हुआ. उससे कपडा मिलों के लिए प्रसिद्ध मुंबई शहर की रूपरेखाएं बदल गयी. आर्थिक व वित्तीय नीतियों के लिए मुंबई देश के प्रधान केंद्र के तौर पर विकसित हुआ. मजदूर वर्गीय संरचना में बदलाव आए. औद्योगिक तौर पर होने वाले विकास की जगह सेवा क्षेत्र विकसित हुआ. इन उद्योगों में ट्रेड युनियन आंदोलनों में बदलाव आए. शिवसेना जैसी फासीवादी पार्टी अस्तित्व में आयी और उसने मजदूर वर्ग को लौह बुटों तले रौंद दिया. तब तक मुंबई में बड़े पैमाने पर जारी संघर्ष पीछेहट की स्थिति में पहुंच गये. इस स्थिति में मुंबई की आर्थिक परिस्थितियों व मजदूर वर्ग के हालात का समग्र अध्ययन कर उपयुक्त दांव–पेंच नहीं अपनाए गए. इस समयावधि में चंद्रपुर, नागपुर जैसी जगहों पर मजदूर वर्ग के संघर्ष चल रहे थे. यहां भी पूंजीवादी नीतियों में वैसे ही बदलाव बाद के समय में हुए. इन नयी परिस्थितियों का समग्र अध्ययन करने के बजाए महाराष्ट्र पार्टी ने जब का तब सामने आयी परिस्थितियों पर अस्थायी तौर पर संघर्ष और संगठन के रूपों को अपनायी. इससे आंदोलन में किसी भी तरह का विकास नहीं हो पाया था.

दूसरी ओर 80 के दशक में मार्क्सवाद के प्रति आकर्षित छात्र व मजदूर आंदोलनों में आगे आया एक तबका यह मानकर कि पूंजीवाद विकसित हो रहा है एवं क्रांतियों के लिए अवसर नहीं है, क्रांतिकारी आंदोलन से पतित होकर अच्छी नौकरियों में सैटिल हो गए. इन सबों ने ये तर्क सामने लाए कि देश में क्रांति संभव नहीं है, पुरानी परिस्थितियों नहीं रह गयी हैं. इनका प्रभाव भी पार्टी पर था. पार्टी को इस प्रभाव से मुक्त करने निरंतर आंतरिक संघर्ष करने के बजाए कुछेक बार पार्टी नेतृत्व इस रुझान का शिकार हो गया. मजदूर वर्ग को रैडिकलाइज

करने उपयुक्त स्तर पर सैद्धांतिक, राजनीतिक कार्य नहीं किया गया. महाराष्ट्र कमेटी द्वारा असंगठित क्षेत्र में कुछ दांव–पेंच बनाकर किए गए कार्य से कुछ नतीजे जब हासिल हो रहे थे, तब भी कोबाड ने उससे नहीं सीखा. कुल मिलाकर मजदूर वर्ग के संघर्षों व महाराष्ट्र आंदोलन के सामने उत्पन्न सैद्धांतिक, राजनीतिक सवालों के हल के लिए आवश्यक दांव–पेंचों को तय करने में कोबाड विफल रहे. दूसरी ओर ग्रामीण इलाकों में किसान संघर्षों को महाराष्ट्र कमेटी नेतृत्व प्रदान नहीं कर सकी. 2007 में आयोजित दक्षिण–पश्चिम ब्यूरो के एलटीपी कार्यक्रम के दौरान कोबाड ने स्वयं यह स्वीकार किया था कि महाराष्ट्र पार्टी नेतृत्व सुधारवाद का शिकार हो गया है तथा नेतृत्व के स्थान में मौजूद उनके अंदर भी सुधारवाद उत्पन्न हुआ है. इस पूरे क्रम में महाराष्ट्र के क्रांतिकारी आंदोलन एवं वहां की कमेटी का मार्गदर्शन करने में केंद्रीय कमेटी भी विफल रही.

दिन–ब–दिन बढ़ते जन आंदोलनों के बारे में कोबाड बात नहीं कर रहे हैं. आज की दुनिया में व्याप्त गंभीर मंदी के कारण अत्यधिक मुनाफे के लिए साम्राज्यवादी देशों के बीच गलाकाट प्रतियोगिता तीव्र रूप से बढ़ रही है. 1970 के दशक से सोवियत युनियन के ध्वस्त होते तक साम्राज्यवादियों के बीच शीतयुद्ध (कोल्डवार) जारी रहा.

वर्तमान में विभिन्न साम्राज्यवादी देशों के बीच अपने प्रभावी इलाकों के लिए व्यापार, आर्थिक, सैनिक, प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में तीव्र होड़ चल रही है. वैश्वीकरण का रास्ता छोड़ अमेरिका संरक्षणवाद का सहारा ले रहा है. विगत 5 दशकों में अमेरिका के नेतृत्व में साम्राज्यवाद ने 50 से अधिक देशों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप कर कई सिविल, आक्रमणकारी युद्ध छेड़े. इराक, अफगानिस्तान, लिबिया, सीरिया जैसे देशों में सैनिक हस्तक्षेप किया. अमेरिका एवं बाकी साम्राज्यवादी देशों द्वारा जारी दुराक्रमणकारी युद्धों की वजह से दुनिया भर में युद्ध साधारण विषय बन गए हैं. दो विश्व युद्धों के समान इनके कारण भी विध्वंस, मानव संसाधनों का विनाश जारी है और फासीवाद–क्रांति का रुझान दुनिया में लगातार बढ़ रहा है. इससे हमारे देश में क्रांतिकारी परिस्थितियां विकसित हो रही हैं. 2008 के वित्तीय व आर्थिक संकट के बाद युरोप, अमेरिका, नाटो के साम्राज्यवादी देशों में मजदूर वर्ग, मध्य वर्ग के अधिकारों के लिए आंदोलन तेज गति से चल रहे हैं. एशियाई, आफ्रीकी, लातिन अमेरिकी देशों में जनता संघर्षरत है. अमेरिका, चीन के बीच आर्थिक होड़ तीव्रतर होकर क्रमशः सैनिक क्षेत्र में प्रतिद्वंद्विता में तब्दील होकर प्रशांत, हिंद महासागरों में तनावपूर्ण स्थितियां निर्मित हुई हैं. यूक्रेन पर रूसी साम्राज्यवाद द्वारा 24 फरवरी से जारी आक्रमणकारी युद्ध दरअसल युएस–नाटो, युरोप और रूस–चीन के बीच सैनिक क्षेत्र में बढ़ती अंतरसाम्राज्यवादी प्रतिद्वंद्विता

आता है, तो वे मजदूरों और बहुसंख्यक मेहनतकश किसानों के रुख से बिल्कुल भिन्न रुख अपना लेते हैं. ऐसे लोग ढुलमुलपन दिखाते हैं जबकि मजदूर–किसान मजबूती से खड़े रहते हैं, ऐसे लोग गोलमोल बात करते हैं जबकि मजदूर–किसान साफ–साफ दो टूक बात करते हैं.'' –(माओ, ''चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के प्रचार–कार्य सम्बन्धी राष्ट्रीय सम्मेलन में भाषण''(12 मार्च 1957), पहला पाकेट संस्करण (अंग्रेजी), पृष्ठ 7–8

मोदी के फासीवादी राज में जहां 90 प्रतिशत अपाहिज प्रोफेसर डॉ. साईबाबा को आजीवन कारावास की सजा होती है, कैन्सर और हार्ट पेशंट रही कार्यकर्ता कंचन नन्नावरे को जमानत तक नहीं मिलती है, उन्हें योग्य मेडिकल सुविधा भी प्रदान नहीं की जाती, आखिर उनकी मृत्यु हो जाती है, और तो और एक धर्म गुरू फादर स्टेन स्वामी जिन्हें एक स्ट्रॉ नहीं दी जाती, आखिर न्यायिक हिरासत में जेल में ही उनकी मृत्यू भी हो जाती है वहाँ, भाकपा(माओवादी) के पोलित ब्युरो सदस्य को जेल में अच्छी सुविधा मिलती है और जमानत भी मिल जाती है. ब्राम्हणीय हिन्दुत्व फासीवादी राज्य की कोबाड पर यह मेहरबानी क्यों? यह भी किताब में लिखने से अच्छा होता था.

जो भी आधःपतित होते हैं और दुश्मनों के सामने घुटने टेकते हैं, उनका सरेंडर दुश्मन वर्ग तब ही मंजूर करते हैं जब वह पार्टी के खिलाफ कुछ न कुछ करें. मसलन गुप्त जानकारी दुश्मन को देना, पार्टी के कार्यकर्ताओं की जानकारी दुश्मन को देकर हत्याएँ करवाना, पार्टी के खिलाफ बयान देना, जगहों को दिखाकर हमले करवाना वगैराह, वगैराह. इस दायरे में कोबाड का सैध्दान्तिक, राजनीतिक, सांगठनिक सिध्दान्तों पर और पार्टी व्यवहार पर लिखी गयी बातों को देखना है. यह अपने स्वार्थ के लिए दुश्मन के सामने घुटने टेकने का सबसे नीच तरिका है. इतिहास में 'एलिट सरेंडर' के रूप में यह दर्ज रहेगा. आध्यात्म की चादर ओढ़े कोबाड का योगी आदित्यनाथ की 'घर वापसी' से प्रेरित होना कोई अचरज नहीं. बस्तर संभाग के पुलिस अधिकारी चाहे तो इसकी गिनती 'लोन वर्राटु' (घर आओ) में करते हुए कमाई कर सकती है. ऐसी गद्दारी के साथ मुकाबला करते हुए ही भारत का क्रांतिकारी आंदोलन आगे बढ़ रहा है और विश्व में मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद समृध्द हुआ है और निरंतर हो रहा है. इससे और एक बार स्पष्ट होता है कि कोबाड ने खुद के अंदर के अप्पर क्लास को कभी मरने नहीं दिया था. अब वह खुद के स्वार्थ के लिए उस पृष्ठभूमि का उपयोग कर रहे हैं. उनकी मदद् करने वाले व्यक्ति विशेष को हमें कुछ नहीं कहना है. पर

पार्टी के कामकाज और मैदान–ए–जंग में लड़ रहे कॉमरेडों की तुलना में खड़ा करना, लेफ्ट सर्कल यानी पार्टी पर लांछन लगाना, कोबाड द्वारा क्रांतिकारी आंदोलन पर राज्य प्रायोजित सैध्दान्तिक राजनीतिक हमले के अलावा और कुछ नहीं है.

कोबाड ने पार्टी के बारे में जो विचार रखे, उनमें से एक पर भी कभी सक्रिय रहते समय चर्चा नहीं की. अभी उस पर अपने स्वार्थ के लिए यह लिखना कि लेफ्ट सर्कल में जाने से तनाव होगा और किसी की सृजनात्मकता रुक जाएगी, सरासर बेईमानी है, पार्टी और शोषित जनता के साथ धोखा है.

इसी लेख में हमने पार्टी के आंतरिक जनवाद पर ठोस मुद्दों के साथ पहले ही चर्चा की है जोकि कोबाड के झुठे अंतरंग का पर्दाफाश करने के लिए पर्याप्त है. कोबाड झुठी प्रतिष्ठा में जी रहे हैं. वे न केवल मार्क्सवाद से दूर हो गए हैं बल्कि भौतिकवादी दुष्टीकोण से भी उनकी मति नष्ट और भ्रष्ट हो चुकी है. सृजनात्मकता बहुत पहले ही खो चुके हैं. दरअसल उनके विचारों में सडांध लग गई है. वो इस काबिल नहीं रहे कि नेतृत्व में रहकर आंदोलन का मार्गदर्शन करें. वो इस काबिल भी नहीं रहे कि विचारों की बहस में कोई भौतिक आधार पेश करें या बुध्दिप्रामाण्य रूप से अपने विचार रख सके. इस अधोगति को स्वीकार करने के बजाय खुद के अंदर 40 सालों से पाले रखे दुर्गण जैसे नौकरशाही, संकीर्णता, एक तरफा सोच, कटुतापुर्वक देखने की प्रवृत्ति, बुर्जुआ उदारवाद, ये पार्टी के हैं, ऐसा लिख रहे हैं. ये सारे तमगे उनके अपने खुद के मूल्य की माला में पिरोये मणि हैं. (जैसा कि उनके द्वारा बनाई दुसरी और तीसरी कैटेगॅरि याने चाणक्य सिन्ड्रोम और कोने मे बह जाना.) मार्क्सवाद से आध्यात्मवाद यानी एक छोर से दुसरे छोर में पहुंचने वाला शख्स उस मेधा के साथ क्या टिक पायेगा, जो मेधा वर्ग संघर्ष के उच्चतम रूप यानी सशस्त्र संघर्ष के घमासान से उन्नत हुई है. यह सैद्धांतिक और राजनीतिक पलायन है.

देखें, इस संदर्भ में माओ क्या कहते हैं ....''कुछ लोगों ने चंद मार्क्सवादी किताबें पढ़ डाली है और वे अपने को काफी विद्वान समझने लगे हैं; लेकिन जो कुछ उन्होंने पढ़ा है वह उनके दिमाग में घुसा नहीं, उनके दिमाग में जड़े नहीं जमा पाया और इस प्रकार उन्हें इसका इस्तेमाल करना नहीं आता तथा उनकी वर्ग–भावना पहले की ही तरह बनी रहती है. कुछ अन्य लोग घमण्ड में चूर हो जाते हैं और थोड़ा सा किताबी ज्ञान प्राप्त करके ही अपने आपको धुरंधर विद्वान समझने लगते हैं, और बड़ी–बड़ी डींगें हांकने लगते हैं; लेकिन जब भी कोई तूफान

को प्रतिबिंबित कर रहा है. हमारे देश में किसान, मजदूर, छात्र, महिलाएं, बैंक कर्मचारी, खदान मजदूर, आदिवासी लगातार आंदोलन कर रहे हैं. मोदी द्वारा थोपे गए तीन कृषि कानूनों के खिलाफ साल भर संघर्ष कर उन्हें वापस लेने किसानों ने मजबूर किया. इन सब से यह साबित हो रहा है कि सरकारी फासीवाद के खिलाफ समूची उत्पीड़ित जनता एकताबद्ध होकर यदि संघर्ष करती है तो सरकार का सिर झुका सकती है. तथापि इन संघर्षों को नेतृत्व देने लायक पार्टी मजबूत नहीं है. इन संघर्षों का नेतृत्व करने लायक पार्टी को मजबूत करने की आवश्यकता है. इन वास्तविकताओ को भुलाकर यह कहते हुए कि क्रांतिकारी आंदोलन के लिए भविष्य नहीं है, कोबाड ने पीठ दिखायी.

दिन–ब–दिन संघर्ष के मैदान में उतरते विभिन्न वर्गों, तबकों की जनता को व्यापक तौर पर जुझारू संघर्षों में गोलबंद कर रैडिकलाइज करने के जरिऐ ये संघर्ष और उच्च स्तर में विकसित होकर सरकार का सिर झुकाएंगे. उसे हासिल करने हेतु हमें जनता पर नकारात्मक प्रभाव डालने वाले गांधीवाद, संशोधनवाद, संसदीय राजनीति, अस्तित्ववादी सिद्धांतों, आधुनिकांतरवादी सिद्धांतों का जब का तब भंडाफोड़ करते हुए जनता को क्रांतिकारी जन संगठनों में गोलबंद करना चाहिए. तभी ये संघर्ष भारत में जारी जनवादी क्रांति का हिस्सा बनेंगे. कोबाड देश में मौजूद आर्थिक शोषण एवं उसकी जड़ साम्राज्यवादी पूंजीवादी नीति के बारे में तो कह रहे हैं. लेकिन देश में दिन–ब–दिन विकसित होते जन संघर्षों के बारे में बताते हुए उनका विश्लेषण कर जनता को क्रांति के लिए तैयार करने के कार्य में मग्न होने के बजाए यह मान रहे हैं कि देश की जनता सशस्त्र संघर्ष करने की स्थिति में नहीं है और क्रांति विफल हो गयी है. एक ओर सरकार के तीव्र दमनकांड के बीच कई बलिदानों के साथ माओवादी पार्टी एवं जनता सशस्त्र संघर्ष संचालित कर रही हैं तो दूसरी ओर कोबाड पार्टी पर कीचड़ उछाल रहे हैं.

इस आकलन के साथ कि देश की जनता संघर्ष के मैदान में उतर रही है और क्रांतिकारी पार्टी मजबूत होकर संघर्षरत जनता का नेतृत्व कर देशव्यापी सशस्त्र संघर्ष को जारी रखकर शासक वर्गों को उखाड़ फेंकेगी, कांग्रेस सरकार, उसके बाद भाजपा सरकार पार्टी एवं संघर्षरत जनता पर फासीवादी दमन का प्रयोग कर रही हैं. मोदी के नेतृत्व वाली भाजपा सरकार 'समाधान' योजना के जरिए क्रांतिकारी आंदोलन का पूरी तरह सफाया करने देख रही है. इसी योजना के तहत वर्तमान में प्रहार हमलें जारी हैं. आज ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवाद समूची संघर्षरत जनता का दमन करने एड़ी–चोटी का जोर लगा रही है. इन 15 सालों में गंभीर दमन, दांव–पेंचों में कुछेक गलतियों के कारण देश में क्रांतिकारी आंदोलन अस्थायी सेटबैक का शिकार हो गया है. यह मात्र एक पहलू है. देश में दिन–ब–दिन

विभिन्न वर्गों व तबकों की जनता मोदी के ब्राह्मणीय हिंदुत्व फासीवाद के खिलाफ जुझारू ढंग से संघर्ष कर रही है. 2004 में देश की विभिन्न क्रांतिकारी पार्टियों को मिलाकर एकीकृत पार्टी के तौर पर भाकपा (माओवादी) का गठन, उसके नेतृत्व में पीएलजीए, संयुक्त मोर्चा का विकसित होना और लुटेरी सत्ता की जगह जनता के सामने एक विकल्प के तौर पर सामने आना, कांग्रेस नीत युपीए सरकार के ऑपरेशन ग्रीनहंट एवं भाजपा सरकार के 'समाधान' का डटकर मुकाबला करना, देश में उत्पन्न नयी परिस्थितियों के अनुरूप नए दांव–पेंच बनाते हुए, सभी क्षेत्रों में नए अनुभव हासिल करते हुए आगे बढ़ने के लिए तैयार होना आदि सकारात्मक विषयों को ध्यान में रखने से आज के आंदोलन की स्थिति अस्थायी ही है. इस सेटबैक से ही पार्टी ने सीख ली. सरकारी 'समाधान' हमले में ही पार्टी संगठित होकर, देश की जनता का नए तौर–तरीकों में नेतृत्व करते हुए, क्रांतिकारी आंदोलन को फिर से आगे बढ़ाने यथाशक्ति कोशिश कर रही है. भारत के क्रांतिकारी आंदोलन में अनेकों बार आंदोलन के आगे बढ़ने व पीछे हटने की स्थितियां उत्पन्न हुईं. कई कठिन दौरों को पार कर पार्टी आगे बढ़ी जोकि देश के क्रांतिकारी आंदोलन में असाधारण बात है. क्रांति में उत्पन्न होने वाले इन उतार–चढ़ावों को न समझकर, वर्तमान में क्रांतिकारी आंदोलन जिस अस्थायी सेटबैक का सामना कर रहा है, उसे स्थायी मानकर कोबाड निराशा के साथ पार्टी एवं उसके सिद्धांत पर यह कहते हुए हमला कर रहे हैं कि माओवादी निश्चयवाद के तहत क्रांति के अवश्य जीतने की बात करते हैं. क्रांति में उत्पन्न होने वाले ज्वार–भाटा, सेटबैक, अड्वांस आदि मामलों में क्रांति की सीख पर द्वंद्वात्मक पद्धति के साथ विचार करने में वे अपनी विवेचन शक्ति खो दी हैं, इसीलिए पार्टी पर निंदारोपण कर रहे हैं. इतिहास में कई महत्वपूर्ण समयों में क्रांतिकारी आंदोलन के साथ गद्दारी करके, शासक वर्गों की सेवा के लिए समर्पित होने वाले गद्दारों को कूड़ेदान में फेंकने वाला क्रांतिकारी आंदोलन कोबाड को भी इतिहास के पन्नों से मिटाकर ऊंचाइयों तक उठेगा.

कोबाड की घर वापसी

कोबाड ने फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम में 'गेटिंग बैक टु सोसाइटि' चाप्टर में खुलकर लिखा है कि उन्होंने लेफ्ट सर्कल को छोड़कर जहाँ से आए थे वहीं जाकर रहने सोचे हैं. वो किताब में बार–बार अपने पारसी होने का ध्यान देने लायक जिक्र भी किए है. उनके लेफ्ट को छोडने का मतलब शोषित, दलित, आदिवासी और मजदूर किसान वर्गिय जनता की मुक्ति जिस समाज में संभव है, उस साम्यवादी समाज

के निर्माणाधिन संघर्ष को छोडना. उतना ही नहीं, वे लेफ्ट छोड़कर राईट की सेवा में लगे हैं. कोबाड न केवल पारसी और पॉवर अभिजात वर्ग के साथ रहने की ही बात कर रहे हैं बल्कि जिस राह पर उन्होंने अपनी उम्र के चार दशक गुजारे हैं, जिसने उनको आंदोलन का पोस्टर बॉय बनाकर पहचान दिलाई, वह लेफ्ट दायरा उनके लिए अब निस्तेज, सृजनहीन, और संकीर्ण बन गया है और कार्पोरेट अभिजात दोस्तों की महफिल में उन्हें ज्यादा स्वतंत्रता, नयापन और मानवीय वातावरण दिख रहा है, इसलिए वे वहीं रहना चाहते हैं. आध्यात्म की गर्त में धँसे हुए अधकचरे विचारों को जायज ठहराने के लिए जो तर्क दे रहे हैं, वो बेबुनियाद, हास्यास्पद और निंदनीय हैं. अभिजात वर्ग की स्वतंत्रता या खुलापन और मानविय संवेदना उनकी अपनी बिरादरी के लिए ही रहती है, लेकिन वह भी तब तक, जब तक उनके आर्थिक हित आपस में नहीं टकराते. लेकिन यहां सवाल एक कोबाड का नहीं, सारी शोषित जनता का है. दलितों, आदिवासियों, शोषितों, मजदूरों, किसानों, महिलाओं, राष्ट्रीयताओं और धार्मिक अल्पसंख्यांकों के प्रति वह मानवीयता अभिजात वर्ग में नहीं रहता है. कोबाड चूंकि वैचारिक तौर पर मार्क्सवाद से नाता तोड़ चुके हैं, इसलिए उन्हें लेफ्ट में सब कुछ नकारात्मक और राईट में सब कुछ सकारात्मक दिख रहा है जोकि स्वाभाविक है.

कोबाड कहते हैं..

''मैं खुद इन सभी बातचीतों से यह महसूस करता हूं कि नए और अलग–अलग विचारों से मेरा रिश्ता बंद हो गया था. केवल एक सीमित, निष्क्रिय वामपंथी दायरे के साथ जुड़े होने के कारण, विचार और रिश्ते खराब हो जाते थे, जो अक्सर कड़वाहट, क्षुद्रता और रचनात्मकता की कमी का कारण बनते थे. महत्वहीन मामलों में अनावश्यक ऊर्जा खर्च होती और तनाव पैदा हो जाता, जिससे व्यक्ति की रचनात्मक क्षमताएं और कमजोर होती. अब, कोई नए और भिन्न दृष्टिाकेण जो सोच को उत्तेजित करता है और नए विचारों को विकसित करने के लिए प्रेरित करता है, को प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र है.'' (फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम, पृष्ठ 193)

फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम का उपरोक्त पैरा नंगे अवसरवाद का दर्शन कराता है. जब आंदोलन आगे बढ़ रहा होता है तब शेखी मारने आगे आना और जब धक्का खाने की स्थिति में रहता है तब उससे भागना. कोबाड जैसों के लिए यह विशेषाधिकार है कि जब चाहे क्रांति में आए और जब चाहे जाएं. क्योंकि क्रांति उनकी जरूरत नहीं होती है. किसी भी वर्ग या सामाजिक समुह में कोई व्यक्ति, व्यक्तिगत रूप से अच्छे इन्सान हो सकते हैं, मानवीय हो सकते हैं. पर उस व्यक्तिगत मित्रता के व्यवहार को एक समाज या वर्ग की बानगी के रूप में देखना और उन्हें क्रांतिकारी

उनकी प्रतिक्रांतिकारी चौतरफा 'लो इन्टेन्सिटी कॉन्फ्लिक्ट डॉक्ट्रिन' में क्रांतिकारी पार्टी विरोधी दुष्प्रचार की नीति दर्ज है. कोबाड पार्टी सदस्य होने के बावजूद खूले तौर पर पार्टी छवि बिगाड़ने की कोशिश में लगे हैं जो इसी श्रेणी में आता है. कुल मिलकर यह दुश्मन वर्ग का पाला मजबूत करने की ही कोशिश है. आज के दुश्मन वर्ग की प्रतिक्रांतिकारी रणनीतिक दमन योजना 'समाधान' के प्रहार हमलों के आलोक में देखे तो कोबाड की कोशिश सर्वहारा, किसान वर्ग, दलित, आदिवासी, शोषित, महिला, और लड़ाकू जनता पर तथा जान की बाजी लगाकर जनयुध्द में भूमिका निभाने वाले जनयोद्धाओं पर हमला नजर आती है. यह आंदोलन के साथ, जनता के साथ, पार्टी के साथ, मुक्ति के लक्ष्य के साथ गद्दारी है.

मार्क्सवाद और आध्यात्मिक विचारों की तूलना करते हुए आध्यात्मिक विचारों को महान बताने का मतलब है, मार्क्सवाद से प्रतिगामी संबंध विच्छेद. वर्गसंघर्ष के बजाय आध्यात्मिक मूल्यों का रास्ता बताने का मतलब है, वर्गविलयवादी, जनयुध्द को नकारने और जनता को अन्याय और शोषण के विरूध्द लड़ने के बजाय शोषकों की मर्जी के अनुसार एवं शोषण का शिकार होते हुए जीने की मानसिकता तैयार करना.

भाववाद के जंजाल में धँसकर, दक्षिणपंथी अवसरवादी लाईन पकड़कर, जनता में, कार्यकर्ताओं में भ्रम, निराशा, हताशा, नकारापन फैलाने वाले, अन्याय के खिलाफ लड़ने से मना करने वाले, दुश्मन वर्ग, शोषण और दमनकारी राज्यसत्ता जो इस अमानवीय, निरंकुश व्यवस्था की रखवाली करती है, को ढंकने की कोशिश करने वाले, और सबसे मुख्य, वर्ग संघर्ष को ही नकारने वाले कोबाड के इस खतरनाक गद्दार विचार का पूरजोर खंडन करना चाहिए. क्रांतिकारी आंदोलन को प्रतिक्रांतिकारी शासक वर्गों द्वारा, फासीवादी तरीके से उन्मूलन करने के लिए चलाये जा रहे क्रूर दमन के समय में, आंदोलन से नाता तोड़कर बाहर जाने वाले व्यक्तियों में कोबाड़ पहले शख्स नहीं हैं. इस तरह के लोगों को इतिहास के कुड़ेदान में फेंकते हुए क्रांतिकारी आंदोलन आगे बढ़ा है.

कुल मिलाकर कोबाड मार्क्सवाद, लेनिनवाद और माओवाद से हटकर बल्कि संबंध विच्छेद कर आध्यात्मवाद या भाववाद के जंजाल में जानबूझकर चले गए. फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम के जरिए महाराष्ट्र में कोबाड घैंडी के रूप में एक और डांगे का जन्म हुआ है. फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम की वैचारिक चर्चा संशोधनवाद के ही एक रूप के सिवाय और कुछ नहीं है. यह मार्क्सवाद, व्दंव्दात्मक भौतिकवाद, ऐतिहासिक भौतिकवाद को अस्वीकार कर रही है, यह क्रांतिकारी आंदोलन को ही रिजेक्ट कर रही है, यह क्रांतिकारी पार्टी को रिजेक्ट कर रही है, यह लडने वाली जनता को रिजेक्ट कर रही है, यह शहीदों की कुर्बानियों का अपमान कर रही है, यह वर्गसंघर्ष

की भौतिक वास्तविकता को नकारते हुए वर्गविलयवादी विचार पेश कर रही है. यह विचार सत्ताधारी वर्ग की सेवा करने वाला विचार है. कोबाड पार्टी, आंदोलन और जनता ही नहीं खुद के साथ भी गद्दारी कर रहे हैं. 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम ए प्रिजन मेम्वार' किताब आध्यात्म के चोले में लपेटा हुआ संशोधनवाद व गद्दारी की दस्तावेज है. इसे पढ़कर ब्राम्हणीय हिन्दूत्व फासीवादी गद्‌गद हो रहे होंगे, आरएसएस की बाहें फुली होंगी, पुलिस अफसर इसके सम्मान में आपस में मदीरा के प्याले जरूर टकराये होंगे.

लेकिन उनकी यह खुशी इतिहास के कालचक्र की गति में क्षणभंगुर है. देखें, माओ के विचार– ''समाजवादी व्यवस्था अन्त में पूंजीवादी व्यवस्था की जगह ले लेगी; यह मनुष्य की इच्छा से स्वतंत्र एक वस्तुगत नियम है. इतिहास के चक्र को रोकने की प्रतिक्रियावादी चाहे जितनी भी कोशिश क्यों न करें, देर–सबेर क्रांति होकर रहेगी और अनिवार्य रुप से विजय प्राप्त करेगी.'' (माओ, 'महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की 40 वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत की मीटिंग में भाषण', 6 नवम्बर, 1957, एमएसडब्ल्यू, वॉल्यूम 7)

भारत की शोषित जनता पिछली आधी सदी से भी ज्यादा समय से पूंजीवादी व्यवस्था का विकल्प – समाजवाद का नारा बुलंद किए, उसी की एक कड़ी के रूप में भारत में नवजनवादी क्रांति को सफल करने की तरफ देशभर में जनयुध्द का न केवल विस्तार कर रही है बल्कि उसे नयी उँचाईयों पर भी ले जा रही है. संख्यात्मक बढ़ना–घटना यह दीर्घकालीन जनयुध्द का एक स्वाभाविक हिस्सा है, अपने व्यवहार से ही वह इस बात से अवगत हुई है. पूंजीवाद का आर्थिक संकट फासीवाद, कोरोना जैसी महामारियों के लिए मार्ग प्रशस्त करते हुए क्रांतिकारी आंदोलन के लिए तेजी प्रदान कर रहा है, नवजनवादी क्रांतियों, समाजवाद की आवश्यकता को और मजबूती से दुनिया के सामने एजेंडे पर लाया है. वर्तमान में यूक्रेन पर रूसी साम्राज्यवाद के आक्रमणकारी युद्ध के विरोध में पूंजीवादी–साम्राज्यवादी देशों सहित दुनिया भर की उत्पीड़ित जनता एवं मजदूर वर्ग के बीच अमेरिका, ईयू(नाटो), रूस, चीन जैसे साम्राज्यवादी देशों की युद्ध पिपासा एवं उनके आर्थिक शोषण के खिलाफ बढ़ती साम्राज्यवादविरोधी चेतना इसे निरूपित कर रही है. इस परिस्थिति में कोबाड प्रतिक्रांतिकारी कैंम्प में चले गए हैं, पर पूरी दुनिया नये सिरे से मार्क्सवाद के बारे में जानने लगी है. मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद अजेय है, मजदूर वर्ग एवं शोषित जनता बखूबी जानते हैं कि वही उनका एकमात्र सैद्धांतिक हथियार है. मजदूर वर्ग, लड़ाकू जनता और पार्टी के हजारों कार्यकर्ता अपनी जान पर खेलकर मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद की वैज्ञानिक विचारधारा का झंडा बुलंद किए हुए

हैं. उसके सैद्धांतिक पहलूओं को आत्मसात करते हुए बलिदान की भावना से ओतप्रोत होकर दृढ़ संकल्प और अटल विश्वास के साथ कदम बढ़ा रहे हैं. कोबाड घैंडी व्दारा लिखित किताब 'फ्रैक्चर्ड् फ्रीडम ए प्रिज़न मेम्वार' जो कि वास्तव में उनकी गद्दारी की दस्तावेज है, जिसमें उन्होंने आध्यात्मवाद, दक्षिणपंथी अवसरवाद जो कि संशोधनवाद की ही एक प्रजाति है, का मजदूरों, किसानों, छात्रों, युवाओं, महिलाओं सहित तमाम शोषित जनता, जनपक्षधर बुध्दिजीवियों, वकीलों, क्रांतिकारी कार्यकर्ताओं, क्रांति के प्रति सहानुभूति रखने वालों, इस सड़ी–गली व्यवस्था में परिवर्तन चाहने वाले हर शख्स को पुरजोर खंडन करना चाहिए एवं उनकी जनविरोधी गतिविधियों का कड़ा विरोध करना चाहिए. मार्क्सवाद–लेनिनवाद–माओवाद का झंडा बुलंद करते हुए साहस के साथ संघर्ष करते हुए, भारत की नवजनवादी क्रांति को सफल करेंगे, दुनिया भर में समाजवाद–साम्यवाद की स्थापना के लक्ष्य के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ेंगे.

मई, 2022

केन्द्रीय कमेटी
भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी)